Digitized by Madhuban Trust

ओशो

कुंडलिनी और तंत्र

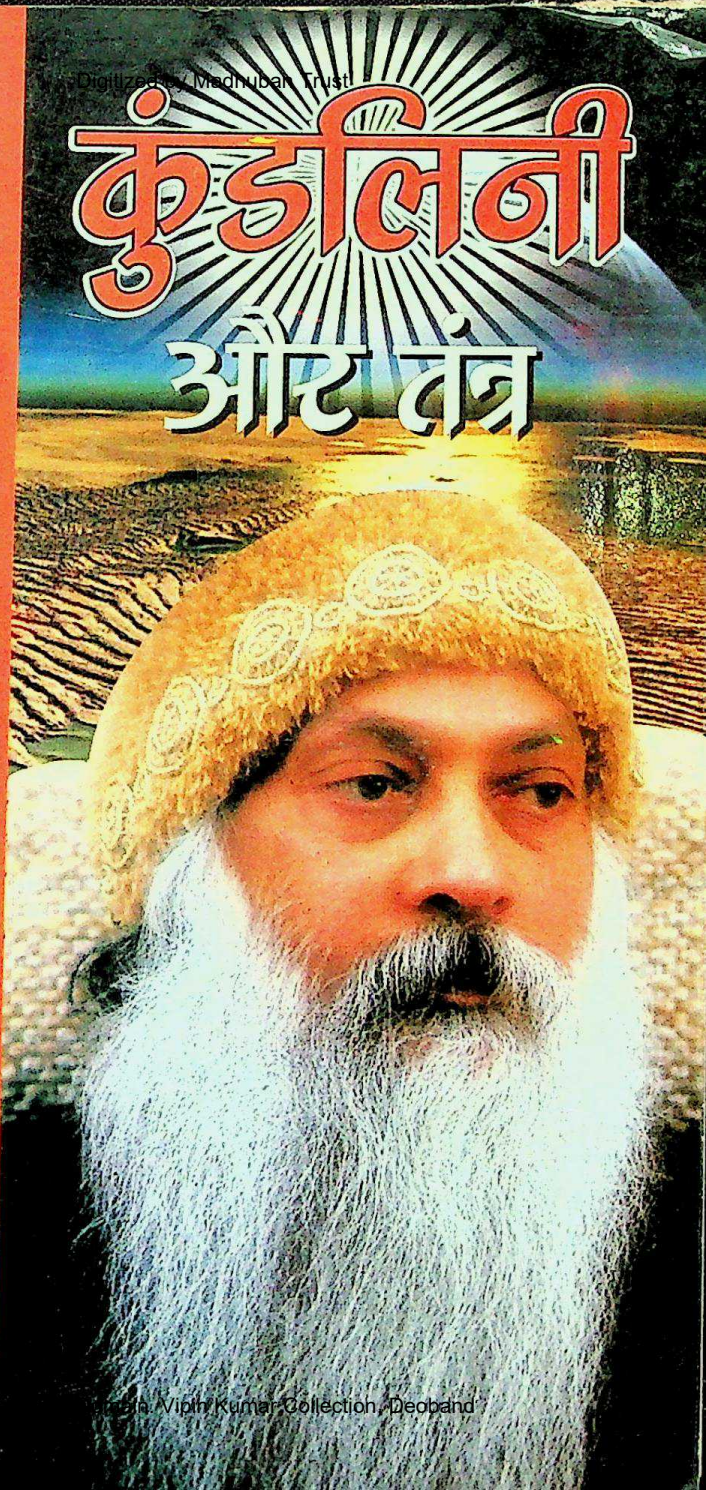

CC-0 In Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ओशो

तिन खोजा तिन पाइया

कुंडलिनी और तंत्र

ओशो

blic Domain. Vipin Kumar Collection,

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ओशो

ओशो परम दुर्लभ घटना हैं अस्तित्व की।

बुद्धत्व की उपलब्धि में सदियों-सदियों, जन्मों-जन्मों का एक तूफान शांत होता है—परम समाधान को प्राप्त है और अस्तित्व उसमें नये रंग लेता है। अस्तित्व का परम सौन्दर्य उसमें खिलता है, श्रेष्ठतम पुष्प विकसित होते हैं और अस्तित्वगत ऊंचाई का एक परम शिखर-एक नया गौरीशंकर-वहाँ उस व्यक्ति की परम शून्यता में निर्मित हो उठता है। ऐसा व्यक्ति अपने स्वभाव के अंतिम बिन्दु में स्थित हो जाता है, जहाँ से बुद्ध के भीतर का बुद्ध बोल उठता है, कृष्ण के भीतर का कृष्ण बोल उठता है, क्राइस्ट के भीतर का क्राइस्ट बोल उठता है, पतंजलि के भीतर का पतंजलि बोल उठता है; लाओत्से के भीतर का लाओत्से बोल उठता है और लाखों-लाखों और तूफान परम समाधान की दिशा में मार्गदर्शन पाते हैं।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ओशो

कुंडलिनी और तंत्र

डायमंड बुक्स

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

संकलन : मा अमृत साधना, मा कृष्ण प्रिया
संपादन : स्वामी नरेन्द्र बोधिसत्व

ISBN : 81-288-0393-X

© साधना फाउंडेशन, पूना (सर्वाधिकार सुरक्षित)

प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स प्रा. लि.
X-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-II
नई दिल्ली-110020
फोन : 011-41611861-65, 40712100
फैक्स : 011-41611866
ई-मेल : sales@dpb.in
वेबसाइट : www.dpb.in
संस्करण : 2009
मुद्रक : यंग आर्ट प्रेस, दिल्ली-92

KUNDALINI AUR TANTRA
By : Osho

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस पुस्तक अथवा इस पुस्तक के किसी अंश को इलेक्ट्रानिक मेकेनिकल, फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य सूचना संग्रह साधनों एवं माध्यमों द्वारा मुद्रित अथवा प्रकाशित करने के पूर्व **साधना फाउंडेशन, पूना** की लिखित अनुमति अनिवार्य है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

अनुक्रम

1. ओम् साध्य है, साधन नहीं 7
2. मनस से महाशून्य तक 37
3. तंत्र के गुह्य आयामों में 73
4. अज्ञात अपरिचित गहराइयों में 109

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

दसवीं प्रश्नोत्तर चर्चा

ओम् साध्य है, साधन नहीं

प्रश्न : कल सातवें शरीर के संदर्भ में ओम् पर कुछ चर्चा चली। इसी संबंध में एक छोटा सा प्रश्न यह है कि अ, उ और म के कंपन किन चक्रों को प्रभावित करते हैं और उनका साधक के लिए क्या उपयोग है ? इन चक्रों से सातवें चक्र का क्या संबंध है ?

ओम् के संबंध में थोड़ी सी बातें कल मैंने आपसे कही। उस संबंध में थोड़ी सी और बातें जानने जैसी हैं। एक तो... कि ओम् सातवीं अवस्था का प्रतीक है, सूचक है; वह उसकी खबर देनेवाला है। ओम् प्रतीक है सातवीं अवस्था का। सातवीं अवस्था किसी भी शब्द से नहीं कही जा सकती। कोई सार्थक शब्द उस संबंध में उपयोग नहीं किया जा सकता। इसलिए एक निरर्थक शब्द खोजा गया, जिसमें कोई अर्थ नहीं है; यह मैंने कल आपसे कहा। इस शब्द की खोज भी चौथे शरीर के अनुभव पर हुई है। यह शब्द भी साधारण खोज नहीं है।

असल में, जब चित्त सब भांति शून्य हो जाता है – कोई विचार नहीं होते, कोई शब्द नहीं होते – तब भी शून्य की ध्वनि शेष होती है। शून्य भी बोलता है; शून्य का भी अपना सन्नाटा है। अगर कभी बिलकुल सूनी जगह में आप खड़े हो गये हों – जहां कोई आवाज नहीं, कोई ध्वनि नहीं – तो वहां शून्य की भी एक ध्वनि है; वहां शून्य का भी एक सन्नाटा है। उस सन्नाटे

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

में, जो मूल ध्वनियां हैं, वे ही केवल शेष रह जाती हैं। अ, उ, म – ए. यू. एम. मूल ध्वनियां हैं। हमारी सारी ध्वनियों का विस्तार उन तीन ध्वनियों के नये-नये संबंधों और जोड़ों से हुआ है। जब सारे शब्द खो जाते हैं, तब ध्वनि शेष रह जाती है।

ओम् के जप से स्वप्न लोक में खोने की संभावना

तो ओम् शब्द तो प्रतीक है सातवीं अवस्था का, सातवें शरीर का, लेकिन ओम् शब्द को पकड़ा गया है चौथे शरीर में। चौथे शरीर की, मनस-शरीर की शून्यता में – शून्यता में जो ध्वनि होती है, शून्य की जो ध्वनि है, वहां ओम् पकड़ा गया है। तो इस ओम् का यदि साधक प्रयोग करे, तो दो परिणाम हो सकते हैं। जैसा कि आपको याद होगा, मैंने कहा कि चौथे शरीर की दो संभावनाएं हैं, सभी शरीरों की दो संभावनाएं हैं। यदि साधक ओम् का ऐसा प्रयोग करे कि उस ओम् के द्वारा तंद्रा पैदा हो जाये, निद्रा पैदा हो जाये – किसी भी शब्द की पुनरुक्ति से पैदा हो जाती है; किसी भी शब्द को अगर बार-बार दोहराया जाये, तो उसका एक सा संघात, एक सी चोट – लयबद्ध; जैसे कि सिर पर कोई ताली थपक रहा हो, ऐसा ही परिणाम करती है और तंद्रा पैदा कर देती है।

तो चौथे मनस शरीर की जो पहली प्राकृतिक स्थिति है – कल्पना, स्वप्न।

अगर ओम् का इस भांति प्रयोग किया जाये कि उससे तंद्रा आ जाये तो आप एक स्वप्न में खो जायेंगे। वह स्वप्न सम्मोहन, तंद्रा जैसा होगा – हिप्नोटिक स्लीप जैसा होगा; उस स्वप्न में जो भी आप देखना चाहें, देख सकेंगे – भगवान के दर्शन कर सकते हैं, स्वर्ग-नर्क की यात्रा कर सकते हैं – लेकिन होगा वह सब स्वप्न, सत्य उसमें कुछ भी नहीं होगा; आनंद का अनुभव कर सकते हैं, शांति का अनुभव कर सकते हैं – लेकिन होगी सब कल्पना, यथार्थ कुछ भी नहीं होगा।

तो एक तो ओम् का इस तरह का प्रयोग है जो अधिकतर चलता है। यह सरल बात है; इसमें बहुत कठिनाई नहीं है। ओम् की ध्वनि को जोर से पैदा करके उसमें लीन हो जाना बहुत ही सरल है; उसकी लीनता बड़ी रसपूर्ण है – जैसे सुखद स्वप्न होता है, ऐसी रसपूर्ण है; मनचाहा स्वप्न, ऐसी रसपूर्ण है। और मनस शरीर के दो ही रूप हैं – कल्पना का, स्वप्न का; और दूसरा रूप है संकल्प का और दिव्य दृष्टि का, विज्ञान का।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तो अगर ओम् का सिर्फ पुनरुक्ति से व्यवहार किया जाये मन के ऊपर, तो उसके संघात से तंद्रा पैदा होती है – जिसे योग-तंद्रा कहते हैं; वह ओम् के संघात पैदा हो जाती है। लेकिन यदि ओम् का उच्चारण किया जाये, और पीछे साक्षी को भी कायम रखा जाये – दोहरे काम किये जायें : ओम् की ध्वनि पैदा की जाये और पीछे जागकर इस ध्वनि को सुना भी जाये – इसमें लीन न हुआ जाये, इसमें डूबा न जाये – यह ध्वनि एक तल पर चलती रहे और हम दूसरे तल पर खड़े होकर इसको सुननेवाले, साक्षी, द्रष्टा, श्रोता हो जायें; लीन न हों, बल्कि जाग जायें इस ध्वनि में, तो चौथे शरीर की दूसरी संभावना पर काम शुरू हो जाता है – तब स्वप्न में नहीं जायेंगे आप, योग-तंद्रा में नहीं जायेंगे, योग-जागृति में चले जायेंगे।

मैं निरंतर कोशिश करता हूं कि आपको शब्द के प्रयोग न करने को कहूं... निरंतर कहता हूं कि किसी मंत्र, किसी शब्द का आप उपयोग न करें; क्योंकि सौ में निन्यानबे मौके आपके तंद्रा में चले जाने के हैं। उसके कारण हैं : हमारा वह जो चौथा शरीर है, निद्रा का आदी है; वह सोना ही जानता है। वह जो हमारा चौथा शरीर है, ड्रीम ट्रैक (स्वप्न-पथ) उसका बना ही हुआ है। वह रोज सपने देखता ही है। तो ऐसे ही, जैसे इस कमरे में हम पानी को बहा दें, फिर पानी सूख जाये, पानी चला जाये, सूखी रेखा रह जाये। फिर हम दूसरा पानी ढालें, तो वह पुरानी रेखा को पकड़ कर ही बह जायेगा।

ओम् और 'मैं कौन हूं' में मौलिक भिन्नता

तो शब्द, मंत्र के उपयोग से बहुत संभावना यही है कि आपका वह जो स्वप्न देखने का आदी मन है, वह अपनी यांत्रिक प्रक्रिया से तत्काल स्वप्न में चला जायेगा। लेकिन, यदि साक्षी को जगाया जा सके, और पीछे तुम खड़े होकर देखते भी रहो कि यह ओम् की ध्वनि हो रही है – इसमें लीन न होओ, इसमें डूबो मत – तो ओम् से भी वही काम हो जायेगा जो मैं, 'मैं कौन हूं' के प्रयोग से तुम्हें करने को कह रहा हूं। और अगर 'मैं कौन हूं' को भी तुम निद्रा की भांति पूछने लगो, और पीछे साक्षी न रह जाओ, तो जो भूल ओम् से स्वप्न पैदा होने की होती है, वह 'मैं कौन हूं' से भी पैदा हो जायेगी। लेकिन, 'मैं कौन हूं' से पैदा होने की संभावना थोड़ी कम है, ओम् की बजाय। उसका कारण है कि ओम् में कोई प्रश्न नहीं है, सिर्फ थपकी है; 'मैं कौन हूं' में प्रश्न है, सिर्फ थपकी नहीं है – और 'मैं कौन हूं' के पीछे क्वेश्चन मार्क (प्रश्नचिह्न) खड़ा है जो आपको जगाये रखेगा।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

यह बड़े मजे की बात है कि अगर चित्त में प्रश्न हो तो सोना मुश्किल हो जाता है। अगर दिन में भी आपके चित्त में बहुत गहरा प्रश्न घूम रहा है तो रात आपकी नींद खराब हो जायेगी – प्रश्न आपको सोने न देगा। वह जो क्वेश्चन मार्क (प्रश्न चिह्न) है, अनिद्रा का बड़ा सहयोगी है। अगर चित्त में कोई प्रश्न खड़ा है, चिंता खड़ी है, कोई सवाल खड़ा है, कोई जिज्ञासा खड़ी है, तो नींद मुश्किल हो जायेगी।

'मैं कौन हूं' में एक चोट है

तो मैं ओम् की जगह, 'मैं कौन हूं' के प्रयोग के लिए इसलिए कह रहा हूं कि उसमें मौलिक रूप से एक प्रश्न है। और चूंकि प्रश्न है, इसलिए उत्तर की बहुत गहरी खोज है; और उत्तर के लिए तुम्हें जागे ही रहना होगा। वह ओम् में कोई प्रश्न नहीं है; उसकी चोट नुकीली नहीं है, वह बिलकुल गोल है। उसमें कहीं चोट नहीं है, उसमें कहीं कोई प्रश्न नहीं है। और उसका निरंतर संघात, उसकी चोट, निद्रा ले आयेगी।

फिर, 'मैं कौन हूं' में संगीत नहीं है, ओम् में बहुत संगीत है; वह बहुत संगीतपूर्ण है। और जितना ज्यादा संगीत है उतना स्वप्न में ले जाने में समर्थ है। 'मैं कौन हूं' आड़ा-टेढ़ा है, पुरुष-शरीर जैसा है। ओम् जो है, बहुत सुडौल, स्त्री-शरीर जैसा है; उसकी थपकी जल्दी सुला देगी।

शब्दों के भी आकार हैं। शब्दों की भी चोट का भेद है। उनका भी संगीत है। 'मैं कौन हूं' में कोई संगीत नहीं है। उससे सुलाना जरा मुश्किल है। अगर सोया आदमी भी पड़ा हो, और उसके पास हम बैठकर कहने लगें – मैं कौन हूं, मैं कौन हूं, तो सोया हुआ आदमी भी जग सकता है। लेकिन सोये हुए आदमी के पास हम अगर बैठकर ओम्, और ओम्, और ओम् की ध्वनि दोहराने लगें, तो उसकी नींद और गहरी हो जायेगी।

संघात के फर्क हैं। लेकिन, इसका यह मतलब नहीं है कि ओम् से नहीं किया जा सकता। संभावना तो है ही। अगर कोई ओम् के पीछे जागकर खड़ा हो सके तो उससे भी यही काम हो जायेगा। लेकिन मैं ओम् को साधना के बतौर प्रयोग नहीं करवाना चाहता। उसके और भी बहुत कारण हैं।

ओम् : शब्द और निःशब्द का सीमांत

क्योंकि ओम् की अगर साधना करेंगे तो चौथे शरीर से ओम् का अनिवार्य ऐसोसिएशन (अंतरसंबंध) हो जायेगा। ओम् प्रतीक तो है सातवें शरीर

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

का, लेकिन उसका अनुभव होता है चौथे शरीर में... ध्वनि का। अगर एक बार ओम् से साधना शुरू की तो ओम् और चौथे शरीर में एक एसोसिएशन, अनिवार्य संबंध हो जायेगा; और वह रोकनेवाला सिद्ध होगा; वह आगे ले जाने में बाधा डाल सकता है।

तो इस शब्द के साथ कठिनाई है। इसकी प्रतीति तो होती है चौथे शरीर में, लेकिन उसको प्रयोग किया गया है सातवें शरीर के लिए – और सातवें शरीर के लिए कोई शब्द नहीं है हमारे पास। और हम जहां तक शब्दों का अनुभव करते हैं, चौथे शरीर के बाद फिर शब्दों का अनुभव बंद हो जाता है।

तो चौथे शरीर का जो आखिरी शब्द है, उसको हम अंतिम अवस्था के लिए प्रयोग कर रहे हैं। और कोई उपाय भी नहीं है – क्योंकि पांचवें शरीर से निःशब्द है; छठवां बिलकुल निःशब्द है; सातवां तो बिकलुल ही शून्य है। चौथे शरीर की जो आखिरी शब्द की सीमा है, जहां से हम शब्दों को छोड़ेंगे, वहां आखिरी क्षण में, सीमांत पर ओम् सुनाई पड़ता है।

तो भाषा की दुनिया का वह आखिरी शब्द है, और अभाषा की दुनिया का वह पहला; वह दोनों की बाउंड्री (सीमा) पर है। है तो वह चौथे शरीर का, लेकिन हमारे पास उससे ज्यादा सातवें शरीर के कोई निकट शब्द नहीं है। फिर और शब्द और दूर पड़ जाते हैं। इसलिए उसको सातवें के लिए प्रयोग किया है।

तो मैं पसंद करता हूं कि उसको चौथे के साथ बांधे न। वह अनुभव तो चौथे में होगा, लेकिन उसको सिंबल (प्रतीक) सातवें का ही रहने देना उचित है। इसलिए उसका साधना के लिए उपयोग करने की ज़रूरत नहीं। उसके लिए किसी ऐसी चीज का उपयोग करना चाहिए जो चौथे पर ही छूट भी जाये। जैसे, 'मैं कौन हूं ?' – यह चौथे में प्रयोग भी होगा, छूट भी जायेगा।

ओम् साध्य है, साधन नहीं

और ओम् का सिंबॉलिक (प्रतीकात्मक) अर्थ ही रहना चाहिए। साधन की तरह उसका उपयोग और भी एक कारण से उचित नहीं है; क्योंकि जिसे हम अंतिम का प्रतीक बना रहे हैं, उसे हमें अपना साधन नहीं बनाना चाहिए; जिसको हम परम, एब्सल्यूट का प्रतीक बना रहे हैं, उसका साधन नहीं बनाना चाहिए; वह साध्य ही रहना चाहिए। ओम् वह है जिसे हमें पाना है, इसलिए ओम् को किसी भी तरह के मीन्स की तरह, साधन की तरह प्रयोग करने के मैं पक्ष में नहीं हूं। और उसका प्रयोग हुआ है, उससे बहुत नुकसान हुए हैं।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

उसका प्रयोग करनेवाला साधक बहुत बार चौथे शरीर को सातवां समझ बैठा – क्योंकि ओम् सातवें का प्रतीक था और चौथे में अनुभव होता है। और जब चौथे में अनुभव होता है तो साधक को लगता है कि ठीक है, अब हम ओम् को उपलब्ध हो गये; अब और यात्रा न रही, अब यात्रा खत्म हो गयी। इसलिए साइकिक बॉडी (मनस शरीर) पर बड़ा नुकसान होता है; वह वहीं रुक जाता है।

बहुत से साधक हैं, जो विजंस को, दृश्यों को, रंगों को, ध्वनियों को, नाद को, इसमें उपलब्धि मान लेते हैं। स्वभावतः, क्योंकि जिसको अंतिम का प्रतीक कहा है, वह इस सीमा-रेखा पर चलने लगता है; फिर हमें लगता है कि आ गयी सीमा।

इसलिए भी मैं चौथे शरीर में इसके प्रयोग के पक्ष में नहीं हूं। और इसका अगर प्रयोग करेंगे तो पहले, दूसरे, तीसरे शरीर पर इसका कोई परिणाम नहीं होगा; इसका परिणाम चौथे शरीर पर होगा। इसलिए पहले, दूसरे, तीसरे शरीर के लिए दूसरे शब्द खोजे गये हैं, जो उन पर चोट कर सकते हैं।

जगत और ब्रह्म के बीच ओम् का अनाहत नाद

ये जो मूल ध्वनियां हैं – अ, उ और म की, इस संबंध में एक बात और ख्याल में ले लेनी उचित है। जैसे बाइबिल है, बाइबिल यह नहीं कहती कि परमात्मा ने जगत बनाया; बनाने का कोई काम किया, ऐसा नहीं कहती। कहती ऐसा है कि परमात्मा ने कहा – प्रकाश हो... और प्रकाश हो गया; बनाने का कोई काम नहीं किया, बोलने का कोई काम किया।

जैसे बाइबिल कहती है कि सबसे पहले शब्द था – दि वर्ड। सबसे पहले शब्द था, फिर सब हुआ। पुराने और बहुत से शास्त्र इस बात की खबर देते हैं कि सबसे पहले शब्द था, जैसे की भारत में कहते हैं : शब्द ब्रह्म है। हालांकि इससे बड़ी भ्रांति होती; इससे कई लोग समझ लेते हैं कि शब्द से ही ब्रह्म मिल जायेगा। ब्रह्म तो मिलेगा निःशब्द से, लेकिन शब्द ब्रह्म है – इसका मतलब केवल इतना ही है कि हम अपने अनुभव में जितनी ध्वनियों को जानते हैं, उसमें सबसे सूक्ष्मतम ध्वनि शब्द की है।

अगर हम जगत में पीछे लौट जायें, पीछे लौट जायें, पीछे लौट जायें, तो अंततः जब हम शून्य की कल्पना करें, जहां से जगत शुरू हुआ होगा, तो वहां भी ओम् की ध्वनि हो रही होगी – उस शून्य में; क्योंकि जब हम चौथे शरीर पर शून्य के करीब पहुंचते हैं तो ओम् की ध्वनि सुनाई पड़ती है, और

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

वहां से हम डूबने लगते हैं उस दुनिया में जहां कि प्रारंभ में दुनिया रही होगी। चौथे के बाद हम जाते हैं आत्म-शरीर में, आत्म-शरीर के बाद जाते हैं ब्रह्म-शरीर में, ब्रह्मशरीर के बाद जाते हैं निर्वाण-शरीर में, और आखिरी ध्वनि जो उन दोनों के बीच में है, वह ओम् की है।

इस तरफ हमारा व्यक्तित्व है चार शरीरोंवाला, जिसको हम कह सकते हैं – जगत; और उस तरफ हमारा अव्यक्तित्व है, जिसको हम कह सकते हैं – ब्रह्म। ब्रह्म और जगत के बीच में जो ध्वनि सीमा-रेखा पर गूंजती है, वह ओम् की है। इस अनुभव से यह ख्याल में आना शुरू हुआ कि जब जगत बना होगा, तो उस ब्रह्म के शून्य से इस पदार्थ के साकार तक आने में बीच में ओम् की ध्वनि गूंजती रही होगी। और इसलिए शब्द था, 'वर्ड' था, उस शब्द से ही सब हुआ, यह ख्याल है। और इस शब्द को अगर हम उसके मूल तत्वों में तोड़ दें तो वह ए. यू. एम. (अ, उ और म) रह जाता है; बस तीन ध्वनियां मौलिक रह जाती हैं। उन तीनों का जोड़ ओम् है।

तो इसलिए ऐसा कहा जा सकता है कि ओम् ही पहले था, ओम् ही अंत में होगा; क्योंकि अंत जो है वह पहले में ही वापिस लौट जाना है; वह जो अंत है वह सदा पहले में वापिस लौट जाना है – सर्कल पूरा होता है। लेकिन, फिर भी मेरा यह निरंतर ख्याल रहा है कि ओम् को प्रतीक की तरह ही प्रयोग करना है, साधन की तरह नहीं। साधन के लिए और चीजें खोजी जा सकती हैं।

ओम् जैसे पवित्रतम शब्द को साधन की तरह उपयोग करके अपवित्र नहीं करना है।

इसलिए मुझे समझने में कई लोगों को भूल हो जाती है। मेरे पास कितने कितने लोग आते हैं, वे कहते हैं : आप ओम्... अगर हम ओम् जपते हैं तो आप मना क्यों करते हैं ? शायद उन्हें लगे कि मैं ओम् का दुश्मन हूं, लेकिन मैं जानता हूं कि वे ही दुश्मन हैं; क्योंकि इतने पवित्रतम शब्द का साधन की तरह उपयोग नहीं होना चाहिए।

असल में यह हमारी जीभ से बोलने योग्य नहीं; असल में यह हमारे शरीर से उच्चारण-योग्य नहीं – यह तो उस जगत से शुरू होता है, जहां जीभ अर्थ खो देती है, शरीर व्यर्थ हो जाता है; वहां इसकी गूंज है... और वह गूंज हम नहीं करते, वह गूंज होती है – वह 'जानी' जाती है, वह 'की' नहीं जाती।

इसलिए ओम् को जानना ही है, करना नहीं है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ओम् की साधना से उसकी अनुभूति में बाधा

और भी एक खतरा है कि अगर आपने ओम् का प्रयोग किया, तो जो उसका मूल उच्चार है, जो अस्तित्व से होता है, उसका आपको कभी पता नहीं चल पायेगा कि वह कैसा है; आपका अपना उच्चारण उस पर आरोपित हो जायेगा। तो उसकी शुद्धतम जो अनुभूति है, वह आपको नहीं हो सकेगी। तो जो लोग भी ओम् शब्द का साधना में प्रयोग कर रहे हैं, उनको वस्तुतः ओम् का कभी अनुभव नहीं हो पाता; क्योंकि वे जो प्रयोग कर रहे हैं, उसका ही अभ्यास होने से जब वह मूल ध्वनि आनी शुरू होती है, तो उनको अपनी ही ध्वनि सुनाई पड़ती है, वे ओम् को नहीं सुन पाते; शून्य का सीधा गुंजन उनके ऊपर नहीं हो पाता, अपना ही शब्द वे तत्काल पकड़ लेते हैं।

स्वभावतः, क्योंकि जिससे हम परिचित हैं, वह आरोपित हो जाता है। इसलिए मैं कहता हूं – ओम् से परिचित न होना ही अच्छा, उसका उपयोग न करना ही अच्छा; वह किसी दिन प्रगट होगा; चौथे शरीर पर प्रगट होगा... और तब वह कई अर्थ रखेगा।

एक तो यह अर्थ रखेगा कि चौथे शरीर की सीमा आ गयी... और अब आप मनस के बाहर जाते हैं, शब्द के बाहर जाते हैं – आखिरी शब्द आ गया... जहां से शब्द शुरू हुए थे, वहीं आप खड़े हो गये; जहां पूरा जगत सृष्टि के पहले क्षण में खड़ा होगा, वहां आप खड़े हो गये हैं; उस सीमांत पर खड़े हैं। और फिर जब उसकी अपनी मूल ध्वनि पैदा होती है तो उसका रस ही और है। उसको कुछ कहने का उपाय नहीं। हमारा श्रेष्ठतम संगीत भी उसकी दूरतम ध्वनि नहीं है। हम कितना ही उपाय करें, उस शून्य के संगीत को हम कभी भी न सुन पायेंगे; वह म्यूज़िक ऑफ साइलेंस को हम कभी भी न सुन पायेंगे। और इसलिए अच्छा हो कि हम उसको कुछ मान कर न चलें, कोई रूप-रंग देकर न चलें, नहीं तो वही रूप-रंग उसमें अंततः पकड़ जायेगा, और वह हमें बाधा दे सकता है।

स्त्री-पुरुष शरीरों के मौलिक भेद

प्रश्न : चौथे शरीर तक स्त्री और पुरुष का विद्युतीय भेद रहता है। अतः चौथे शरीरवाले स्त्री कंडक्टर (माध्यम) या पुरुष कंडक्टर द्वारा महिला साधक को और पुरुष साधक को होनेवाले शक्तिपात का प्रभाव क्या भिन्न-भिन्न होता है, और क्यों ?

इसमें भी बहुत सी बातें समझनी पड़ेंगी। जैसा मैंने कहा : चौथे शरीर तक स्त्री और पुरुष का भेद है, चौथे शरीर के बाद कोई भेद नहीं है। पांचवां

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

शरीर लिग-भेद के बाहर है, लेकिन चौथे शरीर तक बहुत बुनियादी भेद है। और यह बुनियादी भेद बहुत तरह के परिणाम लायेगा। तो पहले पुरुष-शरीर को हम समझें, फिर स्त्री-शरीर को हम समझें।

पुरुष-शरीर का पहला शरीर पुरुष है, दूसरा शरीर स्त्रैण है; तीसरा फिर पुरुष है, चौथा शरीर फिर स्त्रैण है। इससे उलटा स्त्री का है : उसका पहला शरीर स्त्री का, दूसरा पुरुष का, तीसरा स्त्री का, चौथा पुरुष का। इसकी वजह से बड़े मौलिक भेद पड़ते हैं। और इन भेदों ने मनुष्य जाति के पूरे इतिहास और धर्मों को बड़ी गहराई से प्रभावित किया, और मनुष्य की पूरी संस्कृति को एक तरह की व्यवस्था दी।

अर्धनारीश्वर का वैज्ञानिक रहस्य

पुरुष-शरीर की कुछ खूबियां हैं, स्त्री-शरीर की कुछ खूबियां और विशेषताएं हैं। और वे दोनों खूबियां और विशेषताएं एक-दूसरे की कांप्लीमेंटरी, परिपूरक हैं। असल में स्त्री-शरीर भी अधूरा शरीर है और पुरुष-शरीर भी अधूरा शरीर है; इसलिए सृजन के क्रम में उन दोनों को संयुक्त होना पड़ता है। यह संयुक्त होना दो प्रकार का है : 'अ' नाम के पुरुष का शरीर अगर 'ब' नाम की स्त्री से बाहर से संयुक्त हो, तो प्रकृति का सृजन होता है। 'अ' नाम के पुरुष का शरीर अपने ही पीछे छिपे 'ब' नाम की स्त्री-शरीर से संयुक्त हो, तो ब्रह्म की तरफ का जन्म शुरू होता है। वह परमात्मा की तरफ यात्रा शुरू होती है, यह प्रकृति की तरफ यात्रा शुरू होती है। दोनों ही स्थितियों में संभोग घटित होता है।

पुरुष का शरीर बाहर की स्त्री से संबंधित हो तो भी संभोग घटित होता है, और पुरुष का अपना ही शरीर अपने ही पीछे छिपी स्त्री से संयुक्त हो तो भी संभोग घटित होता है। पहले संभोग में ऊर्जा बाहर विकीर्ण होती है, दूसरे संभोग में ऊर्जा भीतर की तरफ प्रवेश करना शुरू कर देती है। जिसको वीर्य का ऊर्ध्वगमन कहा है, उसका यात्रा-पथ यही है – भीतर की स्त्री से संबंधित होना... और भीतर की स्त्री से संबंधित होना।

जो ऊर्जा है, वह सदा पुरुष से स्त्री की तरफ बहती है – चाहे वह बाहर की तरफ बहे, और चाहे वह भीतर की तरफ बहे। अगर पुरुष के भौतिक शरीर की ऊर्जा भीतर के इथरिक, स्त्री-शरीर के प्रति बहे, तो फिर ऊर्जा बाहर विकीर्ण नहीं होती – ब्रह्मचर्य की साधना का यही अर्थ है – तब वह निरंतर ऊपर चढ़ती जाती है। चौथे शरीर तक उस ऊर्जा की यात्रा हो सकती है। चौथे शरीर पर

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ब्रह्मचर्य पूरा हो जाता है। चौथे शरीर के बाद ब्रह्मचर्य का कोई अर्थ नहीं है। चौथे शरीर के बाद ब्रह्मचर्य जैसी कोई चीज नहीं है; क्योंकि चौथे शरीर के बाद स्त्री और पुरुष जैसी कोई चीज नहीं है।

इसलिए चौथे शरीर को पार करने के बाद साधक न पुरुष है और न स्त्री। अब यह जो एक नंबर का शरीर और दो नंबर का शरीर है, इसी को ध्यान में रख कर अर्धनारीश्वर की कल्पना कभी हमनी चित्रित की थी। बाकी वह प्रतीक बन कर रह गयी और हम उसे कभी समझ नहीं पाये। शंकर अधूरे हैं, पार्वती अधूरी है – वे दोनों मिलकर एक हैं। और तब हमने उन दोनों का आधा-आधा चित्र भी बनाया – अर्धनारीश्वर का... कि आधा अंग पुरुष का है, आधा अंग स्त्री का। यह जो आधा दूसरा अंग है, यह बाहर प्रगट नहीं है, यह प्रत्येक के भीतर छिपा है। तुम्हारा एक पहलू पुरुष का है, तुम्हारा दूसरा पहलू स्त्री का है। इसलिए एक बहुत मजेदार घटना घटती है :

कितना ही दबंग पुरुष हो, कितना ही बलशाली पुरुष हो – जो बाहर की दुनिया में बड़ा प्रभावी हो – सिकंदर हो चाहे, और नेपोलियन हो, और चाहे हिटलर हो, वह दिनभर दफ्तर में, दूकान में, बाजार में, पद पर, पुरुष की अकड़ से जीता है; लेकिन एक साधारण-सी स्त्री घर में बैठी है, उसके सामने जाकर उसकी अकड़ खत्म हो जाती ! यह अजीब-सी बात है। वह नेपोलियन की भी हो जाती। वह क्या कारण है ? असल में जब वह बारह घंटे, दस घंटे पुरुष का उपयोग कर लेता है, तो उसका पहला शरीर थक जाता है। घर लौटते-लौटते वह पहला शरीर विश्राम चाहता है। भीतर का स्त्री-शरीर प्रमुख हो जाता है, पुरुष-शरीर गौण हो जाता है। स्त्री... दिनभर स्त्री रहते-रहते... उसका पहला शरीर थक जाता है, उसका दूसरा शरीर प्रमुख हो जाता है। और इसलिए स्त्री पुरुष का व्यवहार करने लगती है और पुरुष स्त्री का व्यवहार करने लगता है – रिवर्स (उलटा) हो जाता है।

एक तो यह ख्याल में ले लेना कि ऊर्जा के आंतरिक प्रवाह का, ऊर्ध्वगमन का यह पथ है... कि भीतर की स्त्री से संभोग। अब उसके सारे के सारे अलग मार्ग हैं, उसकी तो कोई भी बात नहीं करनी है। दूसरी बात : सदा ही शक्ति पुरुष-शरीर से स्त्री-शरीर की तरफ बहती है। पुरुष-शरीर के जो विशेष गुण हैं, वह पहला गुण यह है कि वह ग्राहक नहीं है, रिसेप्टिव नहीं है; आक्रामक है – दे सकता है, ले नहीं सकता। स्त्री की तरफ से कोई प्रवाह पुरुष की तरफ नहीं बह सकता। सब प्रवाह पुरुष से स्त्री की तरफ ही बहते हैं। स्त्री ग्राहक है, रिसेप्टिव है – दाता नहीं है; दे नहीं सकती, ले सकती है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

स्त्री की शक्तिपात देने में कठिनाई, लेने में सरलता

इसके दो परिणाम होते हैं, और दोनों परिणाम समझने जैसे हैं। पहला परिणाम तो यह होता है : कि चूंकि स्त्री ग्राहक है, इसलिए कभी भी शक्तिपात देनेवाली नहीं हो सकती; उसके द्वारा शक्तिपात नहीं हो सकता। यही कारण है कि स्त्री-शिक्षक जगत में बड़ी तादाद में पैदा नहीं हो सके – बुद्ध या महावीर या कृष्ण के मुकाबले स्त्री-गुरु पैदा नहीं हो सके। उसका कारण यह है कि उसके माध्यम से किसी को कोई शक्ति मिल नहीं सकती। हां, स्त्रियां बहुत बड़े पैमाने पर महावीर, बुद्ध और कृष्ण के आसपास इकट्ठी हुईं। लेकिन ऐसी, कृष्ण की हैसियत की एक स्त्री पैदा नहीं हो सकी जिसके आसपास लाखों पुरुष इकट्ठे हो जायें। उसके करण हैं। उसके कारण इसी बात में निहित हैं : स्त्री केवल ग्राहक हो पाती।

पुरुष हैं धर्म प्रसारक और स्त्रियां धर्म संग्राहक

और यह भी बड़े मजे की बात है : कृष्ण जैसा आदमी पैदा हो, तो उसके पास पुरुष कम इकट्ठे होंगे, स्त्रियां ज्यादा इकट्ठी होंगी। महावीर के पास भी वही होगा। महावीर के भिक्षुओं में दस हज़ार तो पुरुष हैं और चालीस हज़ार स्त्रियां हैं। यह अनुपात चौगुना है सदा। अगर एक पुरुष इकट्ठा होगा तो चार स्त्रियां इकट्ठी हो जायेंगी। और स्त्रियां जितनी प्रभावित होंगी महावीर से, उतने पुरुष प्रभावित नहीं होंगे; क्योंकि दोनों पुरुष हैं। महावीर से जो निकल रहा है, स्त्रियां उसे अपशोषित कर जाती है। लेकिन पुरुष अपशोषक नहीं है, वह ग्रहण नहीं कर पाता; उसकी ग्रहण करने की क्षमता बहुत कम है।

इसलिए पुरुषों ने धर्म को जन्म तो दिया, लेकिन पुरुष धर्म के संग्राहक नहीं हैं। धर्मों को पृथ्वी पर बचाती हैं स्त्रियां, चलाते हैं पुरुष। यह बड़े मजे की बात है! चलाते हैं पुरुष, जन्म देते हैं पुरुष, बचाती हैं स्त्रियां, रक्षा करती हैं स्त्रियां।

स्त्री संग्राहक है। उसके शरीर का संग्रह गुण है, बायोलॉजिकल (शारीरिक) वजह से उसके शरीर में संग्राहक का तत्त्व है। बच्चे को उसे नौ महीने पेट में रखना है, बच्चे को बड़ा करना है। उसे ग्रहणशील होना चाहिए। पुरुष को ऐसा कुछ भी काम प्रकृति की तरफ से नहीं है। वह एक क्षण में पिता बनकर के बाहर हो जाता है... पिता के बाहर हो जाता है; उसका इसके बाद कोई संबंध नहीं है – वह देता है और बाहर हो जाता है। स्त्री लेती है और फिर भीतर रह जाती है, वह बाहर नहीं हो पाती। यह वजह शक्तिपात में भी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

काम करता है।

इसलिए शक्तिपात में स्त्री की तरफ से पुरुष को शक्तिपात नहीं मिल सकता। साधारणतः कह रहा हूं, कभी रेयर केसेस (विरल घटनाएं) हो सकते हैं, उनकी मैं बात करूंगा। कभी ऐसी घटनाएं घट सकती हैं, पर उसके और कारण होंगे।

पुरुष के लिए शक्तिपात देना सरल, लेना कठिन

साधारणतया स्त्री-शरीर से शक्तिपात नहीं हो सकता; इसे उसकी कमज़ोरी कह सकते हैं। लेकिन इसको पूरा करनेवाली कांपलीमेंटरी (पूरक) उसकी एक ताकत है कि वह शक्तिपात को बहुत तीव्रता से ले लेती है। पुरुष शक्तिपात कर सकता है, लेकिन ग्रहण नहीं कर पाता। तो इसलिए एक पुरुष से दूसरे पुरुष पर भी शक्तिपात बहुत कठिन हो जाता है... बहुत कठिन मामला हो जाता है; क्योंकि वह ग्राहक है ही नहीं, उसका व्यक्तित्व... जहां से शुरू होना है, उसका नंबर एक पुरुष खड़ा हुआ है दरवाजे पर जो ग्राहक नहीं है। इसको ग्राहक बनाने के भी उपाय किये गये हैं। ऐसे पंथ रहे हैं जिनमें पुरुष भी अपने को स्त्री मानकर ही साधना करेंगे। वह पुरुष को ग्राहक बनाने का उपाय किया जा रहा है। मगर फिर भी पुरुष ग्राहक बन नहीं पाता; स्त्री बिना कठिनाई के ग्राहक बन जाती है। है ही वह ग्राहक।

तो शक्तिपात में स्त्री को सदा ही माध्यम की ज़रूरत होगी; प्रसाद उसको सीधा मिलना बहुत कठिन है। दो तरह से... सीधा प्रसाद उसे इसलिए नहीं मिल सकता, अब इसको समझ लेना ठीक से...

शक्तिपात होता है पहले शरीर से। अगर मैं शक्तिपात करूं तो तुम्हारे नंबर एक के शरीर पर करूंगा... और मेरे नंबर एक से जायेगी, बाद में तुम्हारे नंबर दो पर चोट करेगी। इसलिए अगर तुम स्त्री हो तो यह शीघ्रता से हो जायेगा, अगर तुम पुरुष हो तो इसमें जद्दोजहद और संघर्ष होगा। इसमें कठिनाई होगी – इसमें किसी तरह तुम्हें बहुत गहरे समर्पण की स्थिति में आना पड़ेगा तो यह हो सकता है, नहीं तो यह नहीं हो सकेगा।

और पुरुष समर्पक नहीं है। वह समर्पण नहीं कर पाता, वह कितनी ही कोशिश करे। अगर वह कहे भी कि मैं समर्पण करता हूं, तो भी उसका यह समर्पण करना आक्रमण जैसा होता है – यानी समर्पण की भी घोषणा उसका अहंकार करता है कि अच्छा मैंने किया समर्पण। लेकिन समर्पण... वह 'मैं' जो है, पीछे खड़ा है; वह छूटता नहीं उससे।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

स्त्री को समर्पण करना नहीं पड़ता, वह समर्पित है; समर्पण उसका स्वभाव है – उसके पहले शरीर का गुण है; वह रिसेप्टिव (ग्राहक) है। इसलिए शक्तिपात पुरुष से बहुत आसानी से स्त्री पर हो जाता है, पुरुष से पुरुष पर बहुत मुश्किल है; और स्त्री से पुरुष पर तो बहुत ही मुश्किल है। पुरुष से पुरुष पर मुश्किल है, हो सकता है – अगर कोई बहुत बलशाली पुरुष हो, तो वह दूसरे को करीब-करीब स्त्री की हालत में खड़ा कर सकता है। मुश्किल है, लेकिन हो सकता है। लेकिन स्त्री के द्वारा तो बहुत ही मुश्किल है; क्योंकि वह शक्तिपात करने के क्षण में भी उसकी शक्ति पी जायेगी, अपशोषित कर लेगी; उसका जो पहला शरीर है, वह स्पंज की भांति है, वह चीजों को खींच रहा है।

पुरुष के चौथे शरीर से प्रसाद ग्रहण करना सरल

यह तो शक्तिपात के संबंध में बात हुई, प्रसाद के मामले में भी ऐसी ही हालत है। प्रसाद जो है वह चौथे शरीर से मिलता है, और पुरुष का चौथा शरीर स्त्री का है, इसलिए उसे प्रसाद तो बड़ी सरलता से मिल जाता है। और स्त्री का चौथा पुरुष का है, वह प्रसाद में भी मुश्किल में पड़ जाती है; उसको ग्रेस सीधी नहीं मिल पाती।

पुरुष का जो चौथा शरीर है, स्त्रैणं है। इसलिए मुहम्मद हों कि मूसा हों कि जीसस हों, वे तत्काल परमात्मा से सीधे संबंधित हो जाते हैं। उनके पास चौथा शरीर स्त्री का है, जहां से वे रिसीवर (ग्राहक) हैं। और प्रसाद उनके ऊपर उतरे तो वे उसको पी जायेंगे।

स्त्री के पास चौथा शरीर पुरुष का है – वह उस छोर पर, पुरुष-शरीर खड़ा है उसका; इसलिए वहां से वह कभी रिसीव नहीं कर पाती। इसलिए स्त्री के पास सीधी कोई भी मैसेज (संदेश) नहीं है – यानी एक स्त्री इस तरह का दावा नहीं कर सकी है कि मैंने ब्रह्म को जाना... ऐसा दावा नहीं है उसका। उसके पास चौथे शरीर पर पुरुष खड़ा है जो कि वहां अड़चन डाल देता है; उसको वहां से प्रसाद नहीं मिल सकता।

प्रसाद पुरुष को मिल सकता है; शक्तिपात में उसे बहुत कठिनाई है किसी से लेने में; उसमें वह बाधक है। लेकिन स्त्री के लिए शक्तिपात बहुत सरल है; किसी भी माध्यम से उसे शक्तिपात मिल सकता है। बहुत कमज़ोर माध्यम से भी स्त्री को शक्तिपात मिल सकता है। इसलिए बड़ी साधारण हैसियत के लोगों से भी उसे शक्तिपात मिल सकता है। शक्तिपात देनेवाले पर कम, उसकी अपशोषक शक्ति पर बहुत निर्भर हो जाता है। लेकिन सदा उसे एक माध्यम

CC-0. Public Domain. VipinKumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

चाहिए। वह माध्यम के बिना उसकी बड़ी कठिनाई है। बिना माध्यम के उसको कोई घटना नहीं घट सकती।

यह साधारण स्थिति की बात मैंने कही। इसमें विशेष स्थितियां की जा सकती हैं। इसी साधारण स्थिति की वजह से स्त्री साधिकाएं कम हुई हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि स्त्रियों ने परमात्मा का अनुभव नहीं किया। उन्होंने अनुभव किया, लेकिन वह कभी इमिजिएट (सीधे) नहीं था, उसमें कोई बीच में माध्यम था – थोड़ा ही सही, लेकिन कोई माध्यम था; माध्यम से हुआ उनको।

दूसरी बात, असाधारण स्थितियों में भेद पड़ सकता है। अब जैसे, एक जवान स्त्री पर ज्यादा कठिनाई है प्रसाद की, एक वृद्ध स्त्री पर सरलता थोड़ी बढ़ जाती है; क्योंकि

बुढ़ापे में विपरीत लिंगी व्यक्तित्व का प्रकटीकरण

बड़े मजे की बात है कि हम... पूरी जिंदगी में हमारा सेक्स (यौन) भी फ्लेग्ज़ीबिलिटि (परिवर्तनशीलता) में रहता है। हम पूरी जिंदगी, एक ही अनुपात में, एक ही सेक्स के हिस्से नहीं होते – इसमें अंतर होता रहता है पूरे वक्त, अनुपात बदलता रहता है। इसलिए अक्सर ऐसा होगा कि बूढ़ी होती स्त्री को मूंछ के बाल निकलने लगें या दाढ़ी पर बाल आ जायें – बूढ़े होते-होते पैंतालीस और पचास साल के बाद उसकी आवाज पुरुषों जैसी होने लगे, स्त्रैण आवाज खो जाये। उसका अनुपात बदल रहा है; उसमें पुरुष तत्त्व ऊपर आ रहे हैं, स्त्री तत्त्व पीछे जा रहे हैं। असल में स्त्री का काम पूरा हो चुका। वह पैंतालीस वर्ष तक बायोलॉजिकल (जैविक) एक बाइंडिंग (बंधन) थी, वह खत्म हो गयी है। अब वह बाइंडिंग के बाहर हो रही है।

तो बूढ़ी स्त्री पर प्रसाद की संभावना बढ़ सकती है; क्योंकि जैसे ही उसके नंबर एक के शरीर में पुरुष तत्त्व बढ़ते हैं, उसके नंबर दो के शरीर में स्त्रैण तत्त्व बढ़ जाते हैं और नंबर चार के पुरुष-शरीर के तत्त्व कम हो जाते हैं, नंबर तीन में बढ़ जाते हैं। तो बूढ़ी स्त्री पर प्रसाद की संभावना हो सकती है।

अति वृद्ध स्त्री, किसी स्थिति में, किसी जवान स्त्री को माध्यम भी बन सकती है। और भी अति वृद्ध स्त्री, जो कि सौ को पार कर गयी हो, जहां कि उसके मन में अब सेक्स का ख्याल ही न रह गया हो कि वह स्त्री है, उससे पुरुष के ऊपर भी शक्तिपात के लिए वह माध्यम बन सकती है। लेकिन यह फर्क पड़ेगा। पुरुष में भी ऐसे ही फर्क पड़ता है। जैसे-जैसे पुरुष बूढ़ा होता

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

जाता है, उसमें स्त्रैण तत्त्व बढ़ते चले जाते हैं। बूढ़े पुरुष अक्सर स्त्रियों जैसा व्यवहार करने लगते हैं। उनके व्यक्तित्व की बहुत सी पुरुष जैसी वृत्तियां क्षीण हो जाती हैं और स्त्री जैसी वृत्तियां प्रगट होने लगती हैं।

चौथे शरीर से प्रसाद ग्रहण करने के कारण व्यक्तित्व में स्त्रैणता

इस संबंध में यह भी समझ लेना ज़रूरी है कि जो लोग भी चौथे शरीर से प्रसाद को ग्रहण करते हैं, उनके व्यक्तित्व में भी स्त्रैणता आ जाती है। जैसे अगर हम बुद्ध या महावीर के शरीर और व्यक्तित्व को देखें, तो वह पुरुष का कम और स्त्री का ज्यादा मालूम होगा। स्त्री की कोमलता, स्त्री की कमनीयता, स्त्री की ग्राहकता उनमें बढ़ जायेगी। आक्रमण उनसे चला जायेगा, इसलिए अहिंसा बढ़ जायेगी, करुणा बढ़ जायेगी, प्रेम बढ़ जायेगा; हिंसा और क्रोध विलीन हो जायेंगे।

नीत्से ने तो बुद्ध पर यह आरोप ही लगाया है कि बुद्ध और जीसस – ये दोनों फेमिनिन थे, ये दोनों स्त्रैण थे; इनको पुरुषों की गिनती में नहीं गिनना चाहिए, क्योंकि इनमें पुरुष का कोई भी गुण नहीं है, और उन्होंने सारी दुनिया को स्त्रैण बना दिया है। उसकी इस शिकायत में अर्थ है।

यह तुम जानकर हैरान होओगे कि हमने बुद्ध, महावीर, कृष्ण, राम, इनकी किसी की दाढ़ी-मूंछ नहीं बनाई, ये सब दाढ़ी-मूंछ से हीन हैं। ऐसा नहीं कि इनको दाढ़ी-मूंछ न रही हो, लेकिन जब हमने उनके चित्र बनाये, तब तक यह करीब- करीब उनका सारा व्यक्तित्व स्त्रैण-भाव से भर गया था – उसमें दाढ़ी-मूंछ बेहूदी थी, वह हमने अलग कर दी; उसको हमने चित्रित नहीं किया; उसको चित्रित करना उचित नहीं मालूम पड़ा, क्योंकि उनके व्यक्तित्व का सारा ढंग जो था, वह स्त्रैण हो गया था।

रामकृष्ण परमहंस के शरीर का रूपांतरण

रामकृष्ण के साथ ऐसी घटना घटी। रामकृष्ण की हालत तो इतनी अजीब हो गयी थी... जो कि बड़ी, मेडिकल साइंस के लिए एक खोज की बात है। बड़ी अदभुत घटना घटी। पीछे उसको छिपा-छुपो कर बदलने की कोशिश की, क्योंकि उसकी कैसे बात करें ! उनके स्तन बढ़ गये और उनको मासिक धर्म शुरू हो गया ! यह तो इतनी अजीब घटना थी कि एक मिरेकल (चमत्कार) था – इतना व्यक्तित्व स्त्रैण हो गया था। वे चलते भी तो स्त्रियों जैसे चलने

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

लगे थे, वे बोलते भी थे तो स्त्रियों जैसे बोलने लगे थे।

तो ऐसी विशेष स्थिति में तो बहुत फर्क पड़ सकता है। जैसे रामकृष्ण की इस हालत में वे शक्तिपात दे नहीं सकते किसी को, उनको लेना पड़ेगा; इस हालत में वे दे नहीं सकते किसी को शक्तिपात। उनका व्यक्तित्व बाहर से स्त्रैण हो गया।

हिंदुस्तान के व्यक्तित्व में स्त्रैणता

बुद्ध और महावीर ने जिस साधना और जिस प्रक्रिया का उपयोग किया, उससे इस मुल्क में, उस जमाने में लाखों लोग चौथे शरीर में पहुंच गये; चौथे शरीर में पहुंचते ही उनका व्यक्तित्व स्त्रैण हो गया। स्त्रैण व्यक्तित्व का मतलब यह है कि उनमें जो स्त्रैण गुण हैं – कोमल, वे बढ़ गये; हिंसा-क्रोध खत्म हो गया, आक्रमण विदा हो गया, ममता और प्रेम और करुणा और अहिंसा बढ़ गये – पूरे हिंदुस्तान के व्यक्तित्व के गहरे में स्त्रैणता आ गयी।

मेरी अपनी जानकारी यही है कि हिंदुस्तान पर बाद के सारे आक्रमणों का कारण वही था। क्योंकि हिंदुस्तान के आसपास के सारे पुरुष हिंदुस्तान के स्त्रैण व्यक्तित्व को दबाने में सफल हो गये।

एक अर्थ में बड़ी कीमती घटना घटी है कि चौथे शरीर पर हमने बहुत अदभुत अनुभव किये, लेकिन पहले शरीर की दुनिया में हमको मुश्किल हो गयी।

मैंने कहा कि सब चीजें कंपनसेट (अंतर्संतुलित) होती हैं। जो लोग चौथे शरीर का धन छोड़ने को राजी थे, उनको पहले शरीर का धन और राज और साम्राज्य मिल सका, और जो लोग चौथे शरीर का रस छोड़ने को राजी नहीं थे, उनको यहां से बहुत कुछ छोड़ देना पड़ा।

बुद्ध और महावीर के बाद हिंदुस्तान की आक्रामक वृत्ति खो गयी और वह रिसेप्टिव (ग्राहक) हो गया। तो जो भी आया उसको हम आत्मसात करने की फिक्र में लग गये; उसे अलग करने का भी सवाल नहीं उठा हमारे मन में कि उसको अलग कर दें – और दूसरे पर जाकर हमला कर दें और दूसरे को हम जीत लें, वह तो सवाल ही खो गया। स्त्रैण व्यक्तित्व हो गया। भारत जो है एक वूंब बन गया, एक गर्भ बन गया – पूरा का पूरा भारत; और जो भी आया उसको हम आत्मसात करते चले गये। हमने उसको कभी इनकार नहीं किया, हटाने की हमने कोई फिक्र नहीं की, और लड़ भी नहीं सके; क्योंकि लड़ने के लिए जो बात चाहिए थी, वह खो गयी थी – श्रेष्ठतम बुद्धि जो थी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

मुल्क की, उससे वह बात खो गयी थी। और जो साधारण जन है, वह श्रेष्ठ के पीछे चलता है; वह बेचारा दब कर खड़ा था। वह करुणा-अहिंसा की बातें सुन रहा था और उसे लग रहा था कि ये बातें ठीक हैं। और श्रेष्ठतम आदमी उनमें जी रहा था, वह छोटा साधारण आदमी उनके पीछे खड़ा था। वह लड़ सकता था, लेकिन उसके पास नेता नहीं था, जो उसको लड़ा सकता।

आध्यात्मिक मुल्क में स्त्रैण व्यक्तित्व की अधिकता

यह कभी जब दुनिया का इतिहास आध्यात्मिक ढंग से लिखा जायेगा, और जब हम सिर्फ भौतिक घटनाओं को इतिहास नहीं समझेंगे, बल्कि चेतना में घटी घटनाओं को इतिहास समझेंगे – असली इतिहास वही है – तब हम इस बात को समझ पायेंगे कि जब भी कोई मुल्क आध्यात्मिक होगा, तो स्त्रैण हो जायेगा; और जब भी स्त्रैण होगा, तब अपने से बहुत साधारण सभ्यताएं उसको हरा देंगी।

अब यह बड़े मजे की बात है कि हिंदुस्तान को जिन लोगों ने हराया, वे हिंदुस्तान से बहुत पिछड़ी हुई सभ्यताएं थीं; एक अर्थ में बिलकुल ही जंगली और बर्बर सभ्यताएं थीं – चाहे तुर्क हों, चाहे मुगल हों, और चाहे मंगोल हों – कोई भी हों; उनके पास कोई सभ्यता ही न थी, लेकिन एक अर्थ में वे पुरुष थे – जंगली पुरुष थे बिलकुल; और हम रिसेप्टिव (ग्राहक) हो गये थे; हम उनको आत्मसात ही कर सके, लड़ने का कोई उपाय न था।

तो स्त्री-शरीर आत्मसात कर सकता है, माध्यम चाहिए; पुरुष-शरीर दे सकता है और सीधे प्रसाद भी ग्रहण कर सकता है। इसी वजह से महावीर जैसे व्यक्ति को तो यह भी कहना पड़ा है कि स्त्री को परम उपलब्धि के लिए पहले एक दफे पुरुष-शरीर लेना पड़ेगा, पुरुष-पर्याय में आना पड़ेगा। और बहुत कारणों में एक कारण यह भी था कि वह सीधा प्रसाद ग्रहण नहीं कर सकती। ज़रूरी नहीं है कि वह मर कर पुरुष हो, ऐसी प्रक्रियाएं हैं कि इसी हालत में व्यक्तित्व का रूपांतरण किया जा सकता है – जो तुम्हारा नंबर दो का शरीर है, वह तुम्हारे नंबर एक का शरीर हो सकता है; और जो तुम्हारे नंबर एक का शरीर है, वह तुम्हारे नंबर दो का शरीर हो सकता है। इसके लिए प्रगाढ़ संकल्प की साधनाएं हैं, जिनसे तुम्हारा इसी जीवन में भी शरीर रूपांतरित हो सकता है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

गहन साधना से शारीरिक परिवर्तन

अब जैनों के एक तीर्थंकर के बाबत ऐसी ही मजेदार घटना घट गयी है। जैनों के एक तीर्थंकर स्त्री हैं – मल्लीबाई। श्वेतांबर उनको मल्लीबाई ही कहते हैं, लेकिन दिगंबर उनको मल्लीनाथ कहते हैं; वे उनको पुरुष ही मानते हैं – क्योंकि दिगंबर जैनों का ख्याल है कि स्त्री को तो मोक्ष हो नहीं सकता। तो स्त्री तीर्थंकर तो हो ही नहीं सकती, इसलिए वे मल्लीनाथ हैं; वे उनको पुरुष ही मानते हैं। और श्वेतांबर उनको स्त्री ही माने जाते हैं।

अब एक आदमी के बाबत इस तरह का विवाद मनुष्य जाति के पूरे इतिहास में दूसरी जगह नहीं है। और सब चीजों के बाबत विवाद हो सकता है कि भई, उसकी ऊंचाई पांच फुट छह इंच थी, कि पांच इंच थी, कि वह आदमी कब पैदा हुआ, लेकिन इस बाबत में विवाद कि वह स्त्री था कि पुरुष ! बड़ा अदभुत विवाद है। और एक वर्ग मानता है कि वह पुरुष था... एक वर्ग मानता है, वह स्त्री था !

मेरी अपनी समझ यह है कि मल्लीबाई ने जब साधना शुरू की होगी तो वे स्त्री ही होंगे, लेकिन ऐसी प्रक्रियाएं हैं जिनसे पुरुष नंबर एक का शरीर बन सकता है। वह बन जाने के बाद ही वे तीर्थंकर हुए। और जो दूसरा वर्ग उनको पुरुष मानता है, वह उनकी अंतिम स्थिति को ही मान रहा है; और जो पहला वर्ग उनको स्त्री मानता है वह उनकी पहली स्थिति को मान रहा है। दोनों बातें मानी जा सकती हैं, कोई कठिनाई नहीं है। वे स्त्री थे, लेकिन वे पुरुष हो गये होंगे। और महावीर की साधना ऐसी है कि उसमें कोई भी स्त्री गुजरेगी तो पुरुष हो जायेगी; क्योंकि पूरी की पूरी साधना जो है, वह भक्ति की नहीं है; पूरी की पूरी साधना जो है, वह ज्ञान की है; पूरी की पूरी साधना जो है, वह आक्रामक है, एग्रेसिव है – साधना जो है; वह रिसेप्टिव नहीं है साधना।

अगर कोई पुरुष भी मीरा की तरह भजन करे और नाचे, और नाचता रहे वर्षों, और जब रात सोये तो बिस्तर पर कृष्ण की मूर्ति अपनी छाती से लगाकर सोये, और कृष्ण की अपने को सखी माने – अगर ये वर्षों तक चले, तो नाम मात्र को ही वह पुरुष रह जायेगा – आमूल रूपांतरण हो जायेगा। उसकी चेतना में जो नंबर एक शरीर था, वह नंबर दो हो जायेगा; नंबर दो जो था, वह नंबर एक हो जायेगा। अगर यह बहुत गहरा परिवर्तन हो तो उससे शरीर में लैंगिक अंतर भी हो जायेगा। अगर यह बहुत गहरा न हो तो शरीर पुराना रहा आयेगा, लेकिन मनस पुराना नहीं रह जायेगा; चित्त स्त्रैण

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

हो जायेगा। तो इन विशेष स्थितियों में तो बात हो सकती है; विशेष स्थिति में यह घटना घट सकती है, इसमें कोई कठिनाई नहीं है। लेकिन सामान्य नियम नहीं यह हो सकता।

स्त्री और पुरुष एक दूसरे के परिपूरक

पुरुष से शक्तिपात हो सकता है, पुरुष को प्रसाद मिल सकता है; स्त्री को प्रसाद सीधा मिलना मुश्किल है, उसे शक्तिपात से ही प्रसाद का द्वार खुल सकता है। और यह तथ्य की बात है, इसमें कोई मूल्यांकन नहीं है; इसमें कोई आगे-पीछे, नीचा-ऊंचा नहीं है – ऐसा तथ्य है। ये वैसे ही तथ्य है, जैसा कि पुरुष वीर्य की ऊर्जा देगा और स्त्री उसको संगृहीत करेगी। और अगर कोई पूछे कि क्या स्त्री भी वीर्य की ऊर्जा पुरुष को दे सकती है, तो हम कहेंगे कि नहीं, नहीं दे सकती। वह तथ्य नहीं है। इसमें वह नीचे है या ऊपर है, यह सवाल नहीं। लेकिन इस वजह से ही वैल्यूएशन (मूल्यांकन) पैदा हुआ, और स्त्री नीचे मालूम होने लगी लोगों को, क्योंकि वह ग्राहक है... और दाता बड़ा हो गया।

सारी दुनिया में स्त्री-पुरुष की जो नीचाई-ऊंचाई की धारणा पैदा हुई, वह इस वजह से पैदा हुई कि पुरुष को लगता है – मैं देनेवाला हूं, और स्त्री को लगता है – मैं लेनेवाली हूं। लेकिन लेनेवाला अनिवार्य रूप से नीचा है, यह किसने कहा ? और अगर लेनेवाला न मिले तो देनेवाला क्या अर्थ रखता है ? या देनेवाला न मिले तो लेनेवाले का क्या अर्थ है ? असल में ये कांपलीमेंटरी हैं, यह नीचे-ऊंचे नहीं हैं; असल में ये एक-दूसरे के परिपूरक हैं; और दोनों परस्परतंत्रता में बंधे हैं – इंडिपेंडेंट (स्वतंत्र) नहीं हैं; ये दो इकाईयां नहीं हैं, ये एक ही इकाई के दो पहलू हैं। उसमें एक ग्राहक है और एक दाता है।

लेकिन, स्वभावतः हमारे मन में अगर हम दाता शब्द का भी प्रयोग करें, तो भी ख्याल आता है कि जो देनेवाला है वह बड़ा होना चाहिए। कोई वजह नहीं है। जो लेनेवाला है, वह छोटा होना चाहिए, कोई वजह नहीं है। कोई कारण नहीं है। लेकिन इससे बहुत सी चीजें जुड़ी और स्त्री का व्यक्तित्व नंबर दो का व्यक्तित्व स्वीकृत हो गया – स्त्री ने भी मान लिया कि उसका नंबर दो का व्यक्तित्व है, पुरुष ने भी मान लिया कि उसका नंबर दो का व्यक्तित्व है। उन दोनों का ही नंबर एक का व्यक्तित्व है; उसका नंबर एक का स्त्री की तरह है, इसका नंबर एक का पुरुष की तरह है; नंबर दो इसमें कोई भी नहीं है, और दोनों परिपूरक हैं।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

सभ्यता स्त्री के कारण पैदा हुई

अब इसके कितने व्यापक... छोटी से छोटी, बड़ी से बड़ी चीज में परिणाम हुए। सारी चीजों में इसके... पूरी संस्कृति और पूरी सभ्यता में यह बात प्रवेश कर गयी है। इसलिए पुरुष शिकार करने गया, क्योंकि वह आक्रामक था; स्त्री घर में बैठी प्रतीक्षा करती रही। स्वभावतः, उसने शिकार किया, वह खेत पर काम करने गया, उसने गेहूं बोया, उसने फसल काटी, वह दूकान करने गया, वह दुनिया में उड़ा, वह चांद तक पहुंचा, वह सब काम करने गया – वह आक्रामक है इसलिए जा सका; स्त्री घर बैठ कर प्रतीक्षा करती है। घर में उसने भी बहुत कुछ किया, लेकिन वह आक्रामक नहीं था, वह ग्रहण करनेवाला था। उसने घर बसाया, संग्रह किया, चीजों को जगह पर रखा – सारी सभ्यता का जो स्थिर तत्व है, वह स्त्री ने बनाया।

अगर स्त्री न हो, तो पुरुष आवारा ही होगा, घुमक्कड़ हा होगा, घर नहीं बसा सकता – यहां से वहां जाता रहेगा। अभी वह स्त्री एक खूंटी की तरह उस पर काम करती है; वह घूम-घामकर उस खूंटी पर वापस लौटना पड़ता है उसे, अन्यथा वह चला जाये एकदम।

नगर न पैदा होते... नगर जो हैं, वे स्त्री की वजह से पैदा हुए। नगर की सभ्यता स्त्री की वजह से पैदा हुई, क्योंकि स्त्री एक जगह रुकना चाहती है, ठहरना चाहती है – वह आग्रह करती है, बस यहीं रुक जाओ, यहीं ठहर जाओ; थोड़ी मुसीबत में गुजार लेंगे लेकिन नहीं, कहीं और नहीं जाना। वह जमीन को पकड़ती है, वह जमीन में जड़ें गड़ा देती है, वह जमीन पर रुक कर खड़ी हो जाती है – पुरुष को उसके आसपास फिर दुनिया बसानी पड़ती है।

इसलिए नगर बसे, इसलिए गांव बसे, इसलिए सभ्यता बसी – घर बना – और घर को उसने सजाया, बनाया; पुरुष ने जो बाहर की दुनिया में कमाया, इकट्ठा किया – उसको बचाया। नहीं तो पुरुष को बचाने में उत्सुकता नहीं है; वह कमाकर एक बार ले आया और बेकार हो गया। उसकी उत्सुकता तभी तक थी जब तक वह कमा रहा था, लड़ रहा था, जीत रहा था; अब उसकी इच्छा और दूसरी जगह जीतने को चली गयी। अब वह वहां जीतने चला गया है, लेकिन वह जो जीत लाया था, उसको कोई बचा रहा है, संभाल रहा है। उसका अपना... अपना मूल्य है, अपनी जगह है; वह परिपूरक है सारी स्थिति...

लेकिन, स्वभावतः इसकी वजह से... चूंकि वह लाती नहीं, जाती नहीं, कमाती नहीं, इकट्ठा नहीं करती, निर्माण नहीं करती – उसको लगा कि वह

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Muthulakshmi Research Academy

पिछड़ गयी है। छोटी-छोटी चीज तक में वह बात प्रवेश कर गयी; और वह सब जगह उसको एक हीनता का बोध पकड़ गया। कोई हीनता का सवाल नहीं है।

अच्छा, अब उस हीनता से एक दूसरा दुष्परिणाम होना शुरू हुआ कि जब तक स्त्री सुशिक्षित नहीं थी, तब तक उसने हीनता को बरदाश्त किया; अब हीनता तो उसको बरदाश्त नहीं होती, तो वह हीनता को तोड़ने की दृष्टि से पुरुष जो कर रहा है, वही करने में लगी है। उससे और घातक परिणाम होनेवाले हैं, क्योंकि वह अपने मूल व्यक्तित्व को तोड़ ले सकती है और उसको बहुत संघातक, उसके चित्त की गहराइयों तक नुकसान पहुंच सकते हैं। अब वह बराबर होने की कोशिश में लगी है, और बराबर वह... पुरुष की तरह होकर बराबर हो ही नहीं सकती। तब तो वह नंबर दो की ही पुरुष होगी, नंबर एक की नहीं हो सकती। हां, नंबर एक वह स्त्री की तरह ही हो सकती है। तो यहां मेरा कोई वैल्युएशन (मूल्यांकन) नहीं है; बाकी तथ्य ऐसा है... इन चार शरीरों का, वह मैं आपसे कहता हूं।

स्त्री और पुरुष की चित्त दशा में फर्क

प्रश्न : तब तो स्त्री और पुरुष की साधना में भी फर्क होगा ?

फर्क होगा। फर्क साधना में कम, चित्त की दशा में ज्यादा होगा। जैसे पुरुष की वही साधना... एक ही साधना-पद्धति हो, तो भी पुरुष उस पर आक्रमक की तरह जायेगा, और स्त्री उस पर ग्राहक की तरह जायेगी; पुरुष उस पर हमला करेगा, स्त्री उस पर समर्पण करेगी। ...एक ही साधना होगी, तो भी उनके ढंग, उनका एटिट्यूड अलग-अलग होगा। पुरुष जब जायेगा तो वह साधना की गर्दन पकड़ लेगा; और स्त्री जब जायेगी, उसके चरणों पर सिर रख देगी – साधना के। वह उन दोनों के ढंग में, एटिट्यूड में फर्क होगा। और उतना फर्क स्वाभाविक है। इससे ज्यादा फर्क का कोई सवाल नहीं है। बस, समर्पण उसका भाव होगा। और जब अंतिम उपलब्धि उसे होगी, तो उसे ऐसा नहीं लगेगा कि ईश्वर मुझे मिल गया, उसे ऐसा ही लगेगा कि मैं ईश्वर को मिल गयी। और जब अंतिम उपलब्धि पुरुष को होगी, तो उसे नहीं लगेगा कि मैं ईश्वर को मिल गया, उसे ऐसा लगेगा कि ईश्वर मुझे मिल गया। वह उनकी पकड़ के भेद होंगे। वह तो फर्क रहेगा, बस चौथे तक ही। इसके बाद तो कोई प्रश्न नहीं उठता, इसके बाद तो कोई स्त्री-पुरुष का प्रश्न नहीं है। चौथे तक की बात कर रहा हूं, बस चौथे शरीर तक ये फासले होंगे।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

 Digitized by Madhuban Trust

सूक्ष्म अनुभवों के साथ साक्षी की सूक्ष्मता

प्रश्न : आपने कहा कि ओम् की साधना से भी नाद उपस्थित होते हैं। क्या आटोमेटिक (स्वयंभू) भी नाद उपस्थित होते हैं? दोनों में कौन सा उचित है?

आटोमेटिक उपस्थित हों, वे ज्यादा कीमती हैं; अपने-आप उपस्थित हों, वे ज्यादा कीमती हैं। ओम् के प्रयोग से उपस्थित हों तो वे कल्पित भी हो सकते हैं, अपने-आप ही होने चाहिए... वही कीमती हैं, वही सच्चे हैं।

प्रश्न : आटोमेटिक होने पर उनके साक्षी बनना चाहिए और साधना कंटिन्यू (जारी) रखनी चाहिए?

हां, उनके साक्षी बनना चाहिए। साक्षी बनना चाहिए, लीन नहीं होना चाहिए; क्योंकि लीन होने की अवस्था तो सातवां ही शरीर है, उसके पहले लीन नहीं होना है। उसके पहले जहां लीन हो जायेंगे, वहीं रुक जायेंगे; वह ब्रेक (अवरोध) हो जायेगा।

प्रश्न : वे सूक्ष्म से सूक्ष्म होते चले जाते हैं!

हां, वे सूक्ष्म हो रहे हैं, उसका मतलब यह है कि वे खो रहे हैं। तो हमको भी उतनी सूक्ष्मता में साक्षी होना पड़ेगा। जितने वे सूक्ष्म होते जायेंगे, उतने हमको भी सूक्ष्म साक्षी बनना पड़ेगा। हमें उन्हें आखिरी तक देखना है... जब तक कि वे खो ही न जायें।

प्रथम तीन शरीर की तैयारी शक्तिपात के लिए सहयोगी

प्रश्न : साधक के किस शरीर में शक्तिपात की घटना और किस शरीर में प्रसाद की घटना घटित होती है? यदि साधक का पहला, दूसरा और तीसरा शरीर पूरा विकसित न हुआ हो, तो उस पर कुंडलिनी-जागरण और शक्तिपात का क्या प्रभाव पड़ेगा?

पहली बात तो मैंने कह दी है कि शक्तिपात पहले शरीर पर होता है और ग्रेस, प्रसाद चौथे शरीर पर होता है। अगर पहले शरीर पर शक्तिपात हो और कुंडलिनी जागृत न हुई हो, तो कुंडलिनी जागृत होगी... और बड़ी तीव्रता से होगी... और बड़ी संभालने की जरूरत पड़ जायेगी; क्योंकि शक्तिपात में वह जो काम महीनों में होता है, वह क्षणों में हो जायेगा।

शक्तिपात हो तो वह एक पर न अटक जाये शक्तिपात। एक पर अटक गया

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तो नुकसान होगा। वह तीनों पर फैल जाये तो कोई नुकसान नहीं होगा। अगर एक पर रुक गया तो बहुत नुकसान होगा।

वह नुकसान उसी तरह का है जैसे कि आप खड़े हैं और बिजली का शॉक लग जाये। अगर बिजली का शॉक लग जाये आपको, और नीचे जमीन हो, और जमीन शॉक को पी जाये पूरा, तो नुकसान पहुंचेगा। लेकिन अगर आप लकड़ी के चौखटे पर खड़े हैं और बिजली का शॉक लगे, तो नुकसान नहीं होगा, क्योंकि शॉक आपके पूरे शरीर में घूमकर वर्तुल बन जायेगा; सर्कल बन जायेगा। सर्कल बन गया, फिर कोई नुकसान नहीं होता; सर्कल टूट जाये कहीं से तो नुकसान होता है। समस्त ऊर्जा का नियम यही है कि वह सर्कल में चलती है। और अगर कहीं भी बीच से सर्किट टूट जाये, तो ही धक्का और शॉक लग सकता है। इसलिए अगर लकड़ी की टेबल पर खड़े हों, तो शॉक नहीं लगेगा।

देह-विद्युत के संरक्षण के उपाय

यह जानकर तुम्हें हैरानी होगी कि लकड़ी के तख्त पर बैठकर ध्यान करने का और कोई प्रयोजन नहीं था; और यह भी जानकर तुम्हें हैरानी होगी कि मृग-चर्म पर और शेर की चमड़ी पर बैठकर ध्यान करने का भी... वे सब नॉन-कंडक्टर हैं – सब; मृग-चर्म बहुत नॉन-कंडक्टर (विद्युत कुचालक) है। अगर उस वक्त शरीर में ऊर्जा पैदा हो तो वह नीचे जमीन में नहीं जायेगी, नहीं तो शॉक लग जायेगा; आदमी मर भी सकता है। या लकड़ी पर... इसलिए खड़ाऊं साधक पहनता रहा; लकड़ी के तख्त पर सोता रहा – भले उसे पता न हो कि वह किसलिए सो रहा है, क्या कर रहा है ? लिखा है शास्त्र में, वह सो रहा है लकड़ी के तख्त पर। शायद सोच रहा है कि कष्ट देने के लिए सो रहे हैं; शरीर को आराम न दें, इसलिए सो रहे हैं। वह कारण नहीं है, खतरे दूसरे हैं। साधक पर किसी भी क्षण घटना घट सकती है, किसी भी अनजान स्रोत से। उसको तैयार होना चाहिए।

तो अगर उसके तीन शरीर की तैयारी पूरी है – पहले, दूसरे, तीसरे की, तो वह जो शक्ति उसको मिलेगी, वह चौथे तक जाकर सर्किट बना लेगी, वर्तुल बना लेगी। अगर यह तैयारी नहीं हो और पहले ही शरीर पर उसकी शक्ति का अवधान हो गया, रुक गयी, अवरुद्ध हो गयी तो बहुत तरह के नुकसान पहुंच सकते हैं। इसलिए उतनी भर तैयारी जरूरी है कि वह शक्ति को वर्तुल बनाने में समर्थ हो गया हो। यह बहुत बड़ी तैयारी नहीं है, यह बहुत आसानी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

से, सरलता से हो जाती; इसमें कोई बहुत कठिनाई नहीं है। इसलिए शक्तिपात का थोड़ी दूर तक दर्शन के लिए उपयोग किया जा सकता है; पर उसकी प्राथमिक तैयारी हो जानी चाहिए, सीधी-सामान्यजन पर नुकसानदायक है ही।

मुफ्त में कुछ भी नहीं मिलता

कुंडलिनी जागेगी शक्तिपात से, वह तीव्रता से जागेगी; लेकिन बस चौथे केंद्र तक ही जा सकेगी, उसके बाद की यात्रा फिर निजी है। मगर उतने तक पहुंच जाने की झलक भी बहुत अदभुत है। और उतना रास्ता भी दिख जाये अंधकार में, अमावस में – मुझे दो मील का रास्ता भी दिख जाये तो भी कुछ कम नहीं है। एक दफा रास्ता भी दिख जाये थोड़ा सा, तो भी सब कुछ बदल गया – मैं वही आदमी नहीं रह जाऊंगा जो कल तक था।

इसलिए शक्तिपात का थोड़ी दूर तक दर्शन के लिए उपयोग किया जा सकता है; पर उसकी प्राथमिक तैयारी हो जानी चाहिए – सीधी, सामान्यजन पर नुकसानदायक है ही।

और मजा यह है कि सामान्यजन ही ज्यादा शक्तिपात इत्यादि पाने के लिए उत्सुक रहता है; वह चाहता है, मुफ्त में कुछ मिल जाये, लेकिन मुफ्त में कुछ भी नहीं मिलता। और कई दफे मुफ्त की चीज बहुत महंगी पड़ती है, बाद में पता चलता है। मुफ्त की चीज से बचने की कोशिश करनी चाहिए। असल में हमें सदा कीमत चुकाने को तैयार होना चाहिए। जितनी हम कीमत चुकाने की तैयारी दिखलाते हैं, उतना ही हम पात्र होते चले जाते हैं। और बड़ी कीमत हम अपनी साधना से ही चुकाते हैं। अब बहुत कठिन है न!

अभी एक महिला आयी दो दिन पहले; उसने कहा : अब तो मैं मरने के करीब हूं, उम्र हो गयी; अब मुझे कब होगा, अब जल्दी करवा दें – जल्दी करवा दें, नहीं तो मर जाऊंगी, मिट जाऊंगी, समाप्त हो जाऊंगी। तो मैंने उससे कहा कि तुम ध्यान के लिए आ जाओ, दो-चार दिन ध्यान करो, फिर देखेंगे ध्यान में तुम्हारी क्या गति होती है, फिर आगे की बात इसलिए शक्तिपात करने के पहले उस साधक के कम से कम तीन शरीरों की थोड़ी सी तैयारी की जरूरत है। एकदम गैर-तैयार साधक पर, सड़क चलते आदमी पर पकड़कर अगर शक्तिपात हो, तो उसे लाभ की जगह नुकसान ही ज्यादा होंगे। इसलिए पहले उसकी थोड़ी सी तैयारी जरूरी है। बहुत ज्यादा तैयारी की जरूरत नहीं है, थोड़ी सी तैयारी जरूरी है कि उसके तीनों शरीर एक फोकस में आ जायें, पहली बात। तीनों शरीरों के बीच एक सूत्रबद्धता आ जाये... कि जब

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

सोचेंगे । उसने कहा कि नहीं, ध्यान-व्यान में मुझे मत उलझाइये, मुझे तो जल्दी हो जाये ।

अब यह हमें... बिलकुल बिना कीमत चुकाये कुछ चीज की खोज चलती है । ऐसी खोज खतरनाक सिद्ध होती है । इससे कुछ मिलता तो नहीं, कुछ टूट सकता है । ऐसी आकांक्षा भी साधक में नहीं होनी चाहिए । जितनी हमारी तैयारी है उतना हमें सदा मिल जायेगा, इसका भरोसा होना चाहिए । यह मिल ही जाता है ।

असल में जो आदमी जितनी चीज का पात्र है उससे कम उसे कभी नहीं मिलता, वह जगत का न्याय है; वह जगत का धर्म है । हम जितनी दूर तक तैयार होते हैं उतनी दूर तक हमें मिल जाता है, और अगर न मिलता हो तो हमें सदा जानना चाहिए कि कोई अन्याय नहीं हो रहा, हमारी तैयारी कम होगी । लेकिन हमारा मन सदा यह कहता है कि कोई अन्याय हो रहा है; मैं योग्य तो इतना हूं लेकिन मुझे यह नही मिल रहा । ऐसा होता ही नहीं, हम जितने योग्य होते हैं उतना हमें सदा ही मिलता है ।

योग्यता और मिलना एक ही चीज के दो नाम हैं । लेकिन मन हमारा आकांक्षा बहुत की करता है और श्रम बहुत कम के लिए करता है; हमारी आकांक्षा और हमारे श्रम में बड़ा फासला होता है । वह फासला बहुत आत्मघाती है । वह कभी नुकसान पहुंचा सकता है । उसकी वजह से हम दीवाने की तरह घूमते हैं कि कहीं कुछ मिल जाये, कहीं कुछ मिल जाये । और फिर जब बहुत लोग इस तरह मुफ्त में खोजने घूमते हैं, तब निश्चित ही कुछ लोग उनका शोषण कर सकते हैं जो इनको मुफ्त में देने की तैयारी दिखलाएं । इनके पास बहुत कुछ नहीं हो सकता, लेकिन अगर इन्हें कुछ सूत्र भी कहीं से पता चल गयें हों जिनसे ये थोड़ा बहुत कुछ कर सकते हैं, जो बहुत गहरा नहीं होगा, लेकिन उतना नुकसान तो ये पहुंचा ही देंगे । उतना नुकसान पहुंचा सकते हैं ।

शक्तिपात का भुलावा

जैसे एक आदमी, जिस को शक्तिपात का कोई भी पता नहीं है, वह भी अगर चाहे तो सिर्फ बॉडी मैग्नेटिज़्म (देह-चुंबकत्व) से थोड़ा बहुत शक्तिपात कर सकता है – जिसे और भीतरी शरीरों का, छह शरीरों का कोई भी पता नहीं । शरीर के पास अपनी मैग्नेटिक फोर्स है, शरीर के पास अपना चुम्बकीय तत्व है । अगर उसकी थोड़ी व्यवस्था से इंतज़ाम किया जाये तो तुम्हें शॉक पहुंचाये जा सकते हैं, उसी से ।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

इसलिए पुराना साधक जो है, वह पूरब दिशा देखकर सोयेगा – इस दिशा में सिर नहीं करेगा, उस दिशा में पैर नहीं करेगा; क्योंकि जमीन का एक मैग्नेट (चुंबक) है, और वह सदा उस मैग्नेट की सीध में रहना चाहता है। उस मैग्नेट से वह मैग्नेटाइज़ (आवेषित) होता रहता है।

अगर तुम उससे आड़े सोते हो तो तुम्हारी बॉडी का मैग्निटिज़्म (चुंबकत्व) कम होता चला जाता है; अगर तुम उस मैग्नेट की धारा में सोते हो, तो वह मैग्नेट जो जमीन का मैग्नेट है, जिस पर कि जमीन पूरी की पूरी धुरी बनाये हुए है, वह मैग्नेट तुम्हारे मैग्नेट को मैग्नेटाइज़ करता है; वह तुम्हारे शरीर को भर देता है – जैसा कि एक मैग्नेट के पास तुम लोहा रख दो, तो वह लोहा भी थोड़ा-सा मैग्नेटाइज़ हो जायेगा और छोटी-मोटी सुई को वह भी खींच सकेगा। थोड़ी बहुत देर तक तो खींच ही सकेगा।

चुंबकीय शक्ति के विभिन्न प्रयोग

तो बॉडी की अपनी चुंबकीय शक्ति है, उसको अगर पृथ्वी की चुंबकीय शक्ति के साथ रखा जा सके... फिर तारों की चुंबकीय शक्तियां ह – विशेष तारे, विशेष मुहूर्त में, विशेष रूप से चुंबकीय होते हैं। अगर उनका किसी को पता है – और उसका पता होने में कोई कठिनाई नहीं है, वह सारी की सारी व्यवस्था है – तो उन विशेष तारों से विशेष घड़ी में, विशेष स्थिति में, विशेष आसन में खड़े होने से तुम्हारा शरीर बहुत चुंबकीय हो जाता है, और तब तुम किसी भी आदमी को चुंबकीय शॉक दे सकते हो, जो उसे शक्तिपात मालूम पड़ेगा जो कि शक्तिपात नहीं है।

शरीर की अपनी विद्युत है, शरीर की अपनी इलेक्ट्रिसिटि है, उस इलेक्ट्रिसिटि को अगर ठीक से पैदा किया जाये तो छोटा-मोटा पांच-दस कैंडल का बल्ब तो हाथ में रखकर जलाया जा सकता है। उसके प्रयोग हुए हैं और सफल हुए हैं। कुछ लोगों ने वह बल्ब जलाकर हाथ से... सीधा हाथ में बल्ब लेकर जला दिया। पांच-दस कैंडल का बल्ब तो हाथ से ही जल सकता है – शक्ति तो उससे भी बहुत ज्यादा है। शक्ति तो उससे भी बहुत ज्यादा है।

एक स्त्री बेल्जियम में, कोई बीस पहले, आकस्मिक रूप से इलेक्ट्रिफाइड (विद्युत आविष्ट) हो गयी। उसे कोई छू नहीं सकता था, क्योंकि जो भी छुए उसे शॉक लग जाये। उसके पति ने उसे तलाक दिया। उसका कारण तलाक का यह था कि उसको शॉक लगता उसे छूकर। तलाक की वजह से वह सारी दुनिया में पता चला, और तब उसके शरीर की जांच-पड़ताल हुई तो पता चला कि उसका शरीर विद्युत पैदा कर रहा है बहुत जोर से। शरीर के पास बड़ी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Mumukshu Bhawan Varanasi

बैटरीज़ हैं। अगर वे व्यवस्थित काम कर रही हों तो हमें पता नहीं चलता, अगर वे अव्यवस्थित हो जायें तो उनसे बहुत शक्ति पैदा होती है।

तुम पूरे वक्त कैलरीज़ ले जाकर भीतर उन सब बैटरीज़ को पूरा कर रहे हो। इसलिए कई दफे तुमको ही लगता है कि जैसे चार्ज खो गया, रीचार्ज होने (शक्ति-संचय) की ज़रूरत है। थका हुआ आदमी, डिप्रेस्ड आदमी सांझ को थका-मांदा, टूटा आदमी, ऐसा लगता है : जैसे उसकी बैटरी धीमी पड़ गयी, उसने चार्ज खो दिया, अब वह रीचार्ज (पुनः आविष्ट) होना चाहता है। रात सोकर वह रीचार्ज होता है। उसे पता नहीं कि सोने में कौन सी बात है जिससे वह सुबह रीचार्ज्ड होकर उठता है। उसकी बैटरी वापस चार्ज्ड हो गयी है। नींद में कुछ प्रभाव उस पर काम कर रहे हैं। उनका सब पता चल चुका है कि वे कौन से प्रभाव काम करते हैं। कोई आदमी चाहे तो उन प्रभावों का जागते हुए अपने शरीर में फायदा ले सकता है। और तब वे तुम्हारे शरीर को शॉक दे सकता है जो मैगनेटिक (चुंबकीय) के भी नहीं है, इलेक्ट्रिक के हैं – बॉडी इलेक्ट्रिक (देह-विद्युत) के हैं। लेकिन उससे तुमको शक्तिपात का भ्रम हो सकता है।

इसके अलावा भी और रास्ते हैं जो सब फाल्स हैं। उनसे कोई संबंध नहीं है असली बात का। अगर उस आदमी को अपने शरीर के मैगनेट का भी कोई पता नहीं है, अपने शरीर की विद्युत का भी कोई पता नहीं है, लेकिन तुम्हारे शरीर के विद्युत की सर्किट को तोड़ने का उसे कोई रास्ता पता है, तो भी तुम्हें शॉक लग जायेगा।

अब इसको कई तरह से किया जा सकता है – और कई तरह के इंतज़ाम किये जा सकते हैं कि तुम्हारा ही जो वर्तुल (सर्किट) है तुम्हारे भीतर विद्युत का, वह अगर तोड़ दिया जाये तो तुमको शॉक लगेगा। उसमें दूसरा आदमी कुछ भी नहीं आ रहा है तुम्हारी तरफ, लेकिन तुमको ही शॉक लग रहा है; वह तोड़ा जा सकता है। उसको तोड़ने की भी व्यवस्थाएं हैं; उसके तोड़ने के भी उपाय हैं।

मात्र कुतूहल से साधना में खतरे

ये सारी की सारी बातें तुम्हें मैं पूरी न बता सकूंगा, क्योंकि वे पूरी बतानी कभी भी उचित नहीं। और जितनी बातें मैं कह रहा हूं, उनमें से कुछ भी पूरी बात नहीं है; यह जो... फाल्स मेथड्स (मिथ्या-उपायों) की जो मैं बात कर रहा हूं उसमें कोई भी बात पूरी नहीं है, क्योंकि इसमें पूरा कहना सदा खतरनाक

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

है; क्योंकि उसको कोई भी करने का मन होता है। हमारी क्यूरियॉसिटि (कुतूहल) ऐसी है... कि एक बहुत अदभुत फकीर ने तो क्यूरियॉसिटि को ही सिर्फ सिन कहा है। पाप एक ही है आदमी में, वह है उसका कुतूहल; और बाकी कोई पाप नहीं है। क्योंकि वह कुतूहलवश कितने पाप कर लेता है, हमें पता नहीं चलता। कुतूहल ही... उसको न मालूम कितने पाप करा देता है।

बाइबिल की कथा कि अदम को ईश्वर ने कहा है कि तू इस वृक्ष का फल मत चखना। बस यह कुतूहल दिक्कत में डाल दिया उसे। ओरिजिनल सिन (मूल पाप) जो है, वह क्यूरियॉसिटि (कुतूहल) का था। उसको यह दिक्कत पड़ गयी। उसने कहा कि मामला बड़ा गड़बड़ है। इतने बड़े जंगल में, इतने सुंदर फलों में यह एक साधारण सा वृक्ष है, इसका फल खाने की मनाही है, बात क्या है ! सारे वृक्ष बेकार हो गये, वह एक ही वृक्ष सार्थक हो गया। चित्त वहीं डोलने लगा उसका। वह बिना फल चखे नहीं रह सका, वह फल उसे चखना पड़ा। कुतूहल उसे उस वृक्ष के पास ले गया, जिसे ईसाइयत कहती है कि ओरिजिनल सिन, मूल पाप हो गया। अब मूल पाप फल के चखने में क्या हो सकता है ? नहीं, लेकिन मूल पाप उसके कुतूहल का हो गया।

और हमारे मन में बड़ा कुतूहल होता है। शायद ही कभी हमारे मन में जिज्ञासा हो। जिज्ञासा सिर्फ उसी में होती है जिसमें कुतूहल नहीं होता। और ध्यान रखना, क्यूरियॉसिटि (कुतूहली) और इंक्वायरी (जिज्ञासा) में बड़ा बुनियादी फर्क है। क्यूरियस (कुतूहली) आदमी इंक्वायरिंग (जिज्ञासु) नहीं होता। वह जो आदमी कुतूहल से भरा रहता है कि यह भी देख लें, यह भी देख लें, वह किसी चीज को कभी पूरा नहीं देखता; क्योंकि जब तक वह इसको देख नहीं पाता की पच्चीस और चीजें उसे बुलाने लगती हैं कि यह भी जान लें, यह भी देख लें। और तब वह कभी भी अन्वेषण नहीं कर पाता है।

तो ये फाल्स मेथड्स की जो मैं बात कह रहा हूं, यह पूरी नहीं है। इसमें कुछ खास बातें छोड़ दी गयी हैं। उनका छोड़ देना जरूरी है, क्योंकि हमारा मन होता है कि हम उनको करके देखें। लेकिन यह सब हो जाता है, इसमें जरा भी कठिनाई नहीं है। और इस सबकी वजह से जो झूठे आकांक्षी खोजते फिरते हैं कि हमें शक्ति मिल जाये, परमात्मा मिल जाये, कोई दे दे, उनको कोई देनेवाला भी मिल जाता है – और तब अंधे अंधों का मार्गदर्शन करते हैं। और फिर अंधे तो गिरते ही हैं, उनके पीछे अंधों की बड़ी कतार गिरती है। और यह नुकसान साधारण नहीं होता, कई बार जन्मों के लिए हो जाता है; क्योंकि किसी चीज को तोड़ लेना बहुत आसान है, फिर से बनाना बहुत मुश्किल है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

इसलिए कुतूहलवश कभी इस संबंध में कुछ खोजबीन करना ही नहीं। इस संबंध में अपनी तैयारी पहले करना, फिर जो जरूरी है वह अपने-आप तुम्हारे पास आ जायेगा... आ जाता है।

बंबई, रात्रि, दिनांक 9 जुलाई, 1970.

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

ग्यारहवीं प्रश्नोत्तर चर्चा

मनस से महाशून्य तक

कुंडलिनी जागरण के लिए प्रथम तीन शरीरों में सामंजस्य आवश्यक

प्रश्न : कल की चर्चा में आपने अविकसित प्रथम तीन शरीरों के ऊपर होनेवाले शक्तिपात या कुंडलिनी जागरण के प्रभाव की बात की। दूसरे और तीसरे शरीर के अविकसित होने पर कैसा प्रभाव होगा, इस पर कुछ और प्रकाश डालने की कृपा करें। साथ ही यह भी बतायें कि प्रथम तीन शरीर — फिज़िकल, इथरिक और एस्ट्रल को विकसित करने के लिए साधक क्या तैयारी करे ?

इस संबंध में पहली बात तो यह समझने की है कि पहले, दूसरे और तीसरे शरीरों में सामंजस्य, हार्मनी होनी ज़रूरी है। ये तीनों शरीर अगर आपस में एक मैत्रीपूर्ण संबंध में नहीं हैं, तो कुंडलिनी जागरण हानिकर हो सकता है। और इन तीनों के सामंजस्य में, संगति में होने के लिए दो-तीन बातें आवश्यक हैं।

प्रथम शरीर के प्रति बोधपूर्ण होना

पहली बात तो यह कि हमारा पहला शरीर, जब तक हम इस शरीर के प्रति मूर्छित हैं, तब तक यह शरीर हमारे दूसरे शरीरों के साथ सामंजस्य

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

स्थापित नहीं कर पाता, हार्मोनियस नहीं हो पाता। मूर्छित का मेरा मतलब यह है कि हम अपने शरीर के प्रति बोधपूर्ण नहीं हैं। चलते हैं तो हमें पता नहीं होता है कि हम चल रहे हैं, उठते हैं तो हमें पता नहीं होता कि हम उठ रहे हैं, खाना खाते हैं तो हमें पता नहीं होता कि हम खाना खा रहे हैं – शरीर से हम जो काम लेते हैं वह अत्यंत मूर्छा और निद्रा में लेते हैं।

अगर इस शरीर के प्रति मूर्छा है, तो दूसरे शरीरों के प्रति तो और भी मूर्छा होगी, क्योंकि वे तो बहुत सूक्ष्म हैं। अगर इस स्थूल दिखाई पड़नेवाले शरीर के प्रति भी हमारा कोई होश और अवेयरनेस नहीं है, तो जो शरीर नहीं दिखाई पड़ते, अदृश्य हैं, उनका तो कोई सवाल नहीं उठता, उनके प्रति तो हमें कभी होश नहीं हो सकता। और बिना होश के सामंजस्य नहीं है। सब सामंजस्य होश में होता है। नींद में सब सामंजस्य टूट जाता है।

तो पहली बात तो इस शरीर के प्रति अवेयरनेस (होश) जगानी ज़रूरी है। यह शरीर छोटा सा भी काम करे तो उसमें एक रिमेंबरिंग, उसमें एक स्मरण होना आवश्यक है। जैसा बुद्ध कहते थे कि तुम राह पर चलो तो तुम जानो कि चल रहे हो – और जब तुम्हारा बायां पैर उठे, तो तुम्हारे चित्त को पता हो कि बायां पैर उठा; और जब तुम रात करवट लो तो तुम जानो कि तुमने करवट ली है।

एक गांव से वे निकल रहे हैं... यह उनकी साधक अवस्था की घटना है... और एक साधक उनके साथ है। वे दोनों बात कर रहे हैं और एक मक्खी उनके गले पर आकर बैठ गयी है। तो वे बात करते रहे और हाथ से उन्होंने मक्खी को उड़ा दिया। मक्खी उड़ गयी, तब अचानक वे रुक कर खड़े हो गये और उन्होंने उस साधक से कहा कि बड़ी भूल हो गयी, और उन्होंने फिर से मक्खी उड़ायी जो कि अब थी ही नहीं; फिर उस जगह हाथ ले गये जहां पहले मक्खी थी। उस साधक ने कहा, साथी ने कहा, अब आप क्या कर रहे हैं, अब तो मक्खी नहीं है! बुद्ध ने कहा – अब मैं वैसे उड़ा रहा हूं जैसे मुझे उड़ानी चाहिए थी, अब मैं होशपूर्वक उड़ा रहा हूं; अब यह हाथ मेरा उठ रहा है तो मेरी चेतना में मैं जान रहा हूं कि यह हाथ जा रहा है मक्खी को उड़ाने। उस वक्त मैं तुमसे बात करता रहा और यंत्रवत मैंने मक्खी उड़ा दी। मेरे शरीर के प्रति एक पाप हो गया।

प्रथम स्थूल शरीर के प्रति जागने पर भाव शरीर का बोध प्रारंभ

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

यदि हम अपने शरीर के प्रत्येक काम को होश से करने लगें, तो हमारा यह शरीर पारदर्शी हो जायेगा; ट्रांसपेरेंट हो जायेगा । कभी इस हाथ को नीचे से ऊपर तक होशपूर्वक उठायें और तब आप एहसास करेंगे कि आप हाथ से अलग हैं, क्योंकि उठानेवाला बहुत भिन्न है । वह जो भिन्नता का बोध होगा, वह आपकी इथरिक बॉडी (भाव शरीर) का बोध शुरू हो गया ।

फिर जैसे मैंने कहा कि इस शरीर के प्रति बोध है – अब जैसे समझ लें कि हम... यहां एक आरकेस्ट्रा बजता हो, बहुत तरह के वाद्य बजते हों... जिस आदमी ने संगीत कभी नहीं सुना है, उसे भी हम यहां ले आयें, वे जो स्वर सबसे ज्यादा बजते होंगे, जो ढोल सबसे ज्यादा पीटा जा रहा होगा, उसे वही सुनाई पड़ेगा – बहुत धीमे स्वरोंवाले, मंदे स्वरवाले, पीछे से, पृष्ठभूमि से बजनेवाले वाद्य-स्वर उसे सुनाई नहीं पड़ेंगे । लेकिन उसका होश बढ़ता जाये, तो फिर उसे पीछेवाले स्वर भी सुनाई पड़ने शुरू होंगे; उसका होश और बढ़ता चला जाये तो उसे और पीछेवाले स्वर सुनाई पड़ने शुरू होंगे । और जिस दिन उसका होश पूरा होगा, उस दिन बहुत ही बारीक और नाजुक जो स्वर हैं, उन्हें भी वह पकड़ने लगेगा । और जिस दिन उसका होश और भी बढ़ जायेगा, उस दिन वह केवल स्वर ही नहीं पकड़ेगा, दो स्वरों के बीच में जो अंतराल है, जो गैप है, जो साइलेंस है, उसे भी पकड़ेगा और तभी वह संगीत को पूरा पकड़ पायेगा । अंतिम तो उसको गैप (अंतराल) पकड़ना है, तब समझेंगे कि उसकी संगीत की पकड़ पूरी हो पायी – जब दो स्वर के बीच में जगह खाली छूट जाती है और कोई स्वर नहीं होता, सन्नाटा होता है; उस सन्नाटे का भी अपना अर्थ है ।

असल में संगीत के सब स्वर उसी सन्नाटे को उभारने के लिए हैं । वह कितना उभरता है और प्रगट होता है, यही असली बात है ।

अगर आपने कभी कोई जापानी या चाइनीज़ पेंटिंग देखी है, तो बहुत हैरान होंगे यह बात देखकर कि पेंटिंग एक कोने पर होगी छोटी सी, और कैनवस बहुत बड़ा खाली ही होगा । ऐसा दुनिया में कहीं नहीं होता, क्योंकि दुनिया में कहीं भी चित्रकार ने ध्यान के साथ चित्र नहीं बनाये । असल में ध्यानी ने दुनिया में कहीं भी पेंटिंग नहीं की है सिवाय चीन और जापान को छोड़कर । अगर आप इस चित्रकार से पूछेंगे कि क्या मामला है – इतना बड़ा कैनवस लिया है, उसमें इतना छोटा सा, कोने में जो चित्र बयाया है, यह तो कैनवस के आठवें हिस्से में भी बन सकता था, बाकी कैनवस की क्या ज़रूरत थी ? तो वह कहेगा कि वह जो बाकी पृष्ठ पर जो खाली आकाश है उसको उभारने

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

के लिए ही यह नीचे कोने पर थोड़ी सी मेहनत की – ताकि वह खाली आकाश तुम्हें दिखाई पड़ सके; क्योंकि अनुपात यही है, खाली आकाश अनंत है। अब एक वृक्ष खड़ा है खाली आकाश में। जब हम चित्र बनाते हैं तो पूरे कैनवस पर वृक्ष हो जाता है। वस्तुतः तो आकाश होना चाहिए पूर कैनवस पर, वृक्ष तो एक कहां कोने में... उसका पता नहीं चलता, उतना छोटा है। अनुपात वास्तविक यही है। और वृक्ष अपने पूरे अनुपात में आकाश की पृष्ठभूमि में जब खड़ा होगा, तभी जीवंत होगा। इसलिए हमारी सारी पेंटिंग अनुपातहीन है।

अगर ध्यानी कभी संगीत पैदा करेगा तो उसमें स्वर कम होंगे, शून्यता ज्यादा होगी; क्योंकि स्वर तो बहुत छोटी बात है, शून्य बहुत बड़ी बात है। और स्वर की एक ही सार्थकता है कि वह शून्य को इंगित कर जाये और विदा हो जाये। लेकिन जितना बोध बढ़ेगा स्वर का, उतना...

तो हमारा यह जो स्थूल शरीर है, इसकी सार्थकता ही यही है कि यह हमें और सूक्ष्म शरीरों का बोध करा जाये। लेकिन हम इसी को पकड़ कर बैठ जाते हैं। और पकड़ कर बैठने की जो तरकीब है, वह यह है कि हम इस शरीर के प्रति मूर्छित तादात्म्य कर लेते हैं, एक स्लीपिंग आइडेंटिटि (निद्रित तादात्म्य) है – हम सो गये हैं और शरीर की हम बिलकुल मूर्छा की तरह जी रहे हैं। इस शरीर की एक-एक क्रिया के प्रति जागोगे तो तुम्हें फौरन दूसरे शरीर का बोध शुरू हो जायेगा। फिर दूसरे शरीर की भी अपनी क्रियाएं हैं। लेकिन उनमें तुम तब तक नहीं जाग सकोगे जब तक इस शरीर की क्रियाओं के प्रति नहीं जागे, क्योंकि वे सूक्ष्म हैं। अगर तुम इस शरीर की क्रियाओं के प्रति जाग गये तो तुम्हें दूसरे शरीर की क्रियाओं का भी हलन-चलन पता पड़ने लगेगा। अब दूसरे शरीर की हलन-चलन पर जिस दिन तुम जागोगे, तुम बहुत हैरान हो जाओगे कि यह तो हमें पता नहीं था कि हमारे भीतर इथरिक वेव्ज़ (तरंगें) भी हैं... और वे पूरे वक्त काम कर रही हैं।

भाव शरीर में उठनेवाले भावों के प्रति होश

एक आदमी ने क्रोध किया – क्रोध का जन्म दूसरे शरीर में होता है, अभिव्यक्ति पहले शरीर में होती है – क्रोध मूलतः दूसरे शरीर की क्रिया है; पहले शरीर का तो साधन की तरह उपयोग होता है। इसलिए तुम चाहो तो पहले शरीर तक क्रोध को आने से रोक सकते हो। दमन में यही करते हो। मेरा मन हुआ है, क्रोध से भर गया हूं, और तुम्हें उठाकर लकड़ी मार दूं।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

लकड़ी मारने से मैं रोक सकता हूं, क्योंकि यह पहले शरीर की क्रिया है। यह मूलतः क्रोध नहीं है, यह क्रोध की अभिव्यक्ति भर है। लकड़ी मारने से रोक सकता हूं, चाहूं तो तुम्हें देखकर मुस्कराता भी रह सकता हूं, लेकिन भीतर मेरे दूसरे शरीर पर क्रोध फैल जायेगा। तो दमन में इतना ही होता है कि हम अभिव्यक्ति के तल पर उसको प्रगट नहीं होने देते, लेकिन मूल स्रोत के तल पर तो वह प्रगट हो जाता है।

जब तुम्हें पहले शरीर की क्रियाओं का पता चलना शुरू होगा, तब तुम अपने भीतर उठनेवाले प्रेम, अपने भीतर उठनेवाले क्रोध, अपने भीतर उठनेवाली घृणा, अपने भीतर उठनेवाले भय के मूवमेंट्स (हलन-चलन) को भी समझने लगोगे। वे भी तुम्हें पता चलने लगेंगे कि उनकी गतियां हैं; और जब तक तुम दूसरे शरीर पर उठनेवाले इन सब भावों की गतियों को नहीं पकड़ पाते हो, तब तक ज्यादा से ज्यादा दमन ही कर सकते हो, मुक्त नहीं हो सकते; क्योंकि तुमको पता ही तब चलता है जब वह इस शरीर तक आ जाता है; तुमको खुद को भी तभी पता चलता है। कई बार तो तब भी पता नहीं चलता; पता चलता है... जब तक दूसरे के शरीर तक न पहुंच जाये।

हम इतने मूर्छित होते हैं कि जब तक मेरा चांटा तुम्हारे ऊपर न पड़ जाये, तब तक भी मुझे पता नहीं चलता कि मैं चांटा मारनेवाला था – जब चांटा लग ही जाता है, तब मुझे पता चलता है कि कोई घटना घट गयी। लेकिन यह उठता है इथरिक बॉडी (भाव शरीर) में; वहां से पैदा होता है... समस्त भाव। इसलिए मैंने दूसरे शरीर को भाव शरीर कहा। इथरिक बॉडी जो है, वह भाव शरीर है। उसकी अपनी गतियां हैं – क्रोध में, प्रेम में, घृणा में, अशांति में, भय में उसके अपने मूवमेंट (गतियां, कंपन) हो रहे हैं – उसकी गतियों को तुम पहचानने लगोगे।

भय के इथरिक कंपन का बाह्य व्यक्तित्व पर प्रभाव

जब तुम भयभीत होते हो तब तुम्हारी इथरिक बॉडी एकदम सिकुड़ जाती है। तो भय में जो संकोच मालूम पड़ता है, वह पहले शरीर का नहीं है; क्योंकि पहला शरीर तो उतना ही रहता है, उसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। पहले शरीर के आयतन में कोई फर्क नहीं पड़ता, लेकिन इथरिक बॉडी सिकुड़ जाती है भय में। इसलिए जो आदमी भयभीत रहता है, उसके पहले शरीर पर भी संकोच के प्रभाव दिखाई पड़ने लगते हैं – उसके चलने में, उसके बैठने में, वह पूरे वक्त दबा-दबा मालूम पड़ता है – जैसे चारों तरफ से कोई उसे दबाये हुए है। वह खड़ा होगा तो सीधा खड़ा न होगा, झुककर खड़ा होगा; वह बोलेगा तो

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

लड़खड़ायेगा, चलेगा तो उसके पैर में कंपन होंगे, दस्तखत करेगा तो उसके अक्षर कंपे हुए और हिले हुए होंगे।

अब स्त्री और पुरुष के हस्ताक्षर, बिना किसी कठिनाई के कोई भी पहचान सकता है... कि ये पुरुष के हस्ताक्षर हैं कि स्त्री के ? स्त्री सीधे अक्षर बना ही नहीं पाती। कितने ही सुडौल बनाये तब भी उसके अक्षरों में एक कंपन होता है जो स्त्रैण होता है। वह उसके इथरिक शरीर से आता है। वह पूरे वक्त भयभीत है। उसका व्यक्तित्व ही भयग्रस्त हो गया है। इसलिए बिलकुल बिना जांच किये देखकर कहा जा सकता है कि यह स्त्री का लिखा हुआ अक्षर है कि पुरुष का लिखा हुआ अक्षर है।

फिर पुरुषों में भी कौन आदमी कितना भयभीत है, वह अक्षर से देखकर जाना जा सकता है। हमारी अंगुलियों में और स्त्री की अंगुलियों में कोई फर्क नहीं है। हमारे कलम के पकड़ने में, उसके कलम के पकड़ने में फर्क नहीं है। जहां तक पहले शरीर का वास्ता है, लिखने में कोई फर्क नहीं पड़ता; लेकिन जहां तक दूसरे शरीर का वास्ता है, स्त्री भयभीत है। आज तक भी वह भीतर से अभय नहीं हो पायी। आज तक समाज की, संस्कृति की, हमारे चित्त की ऐसा स्थिति नहीं हो पायी है कि स्त्री को हम अभय दे पायें। वह भयभीत है पूरे वक्त। और उसके भय का कंपन उसके सारे व्यक्तित्व में उतरेगा। पुरुषों में भी जांचा सकता है कि कौन भयभीत है, कौन निर्भय है, वह उनके हस्ताक्षर बता सकेंगे। लेकिन भय की जो स्थिति है, वह इथरिक है।

भाव शरीर का भय में सिकुड़ना और प्रेम में फैलना

यह मैं तुम्हें पहचानने के लिए कह रहा हूं कि भीतर तुम जब इस शरीर की क्रियाओं को पहचान जाओ तो तुम्हें इथरिक शरीर की क्रियाओं को भी पहचानना पड़ेगा कि वहां क्या हो रहा है। जब तुम प्रेम में होते हो तो तुम्हें लगता है, तुम फैल गये। असल में प्रेम में इतनी मुक्ति इसीलिए मालूम होती है, हम एकदम फैल जाते हैं – कोई है जिससे अब भय की कोई जरूरत नहीं है। जिस व्यक्ति को मैं प्रेम करता हूं उसके पास मुझे भय का कोई कारण नहीं है।

असल में प्रेम का मतलब यह है कि जिससे मुझे भय नहीं है – जिसके सामने मैं जैसा हूं उतना पूरा खिल सकता हूं; जितना हूं उतना फैल सकता हूं। इसलिए प्रेम के क्षण में एक्सपांशन (फैलाव) का बोध होता है। तुम्हारा यह शरीर इतना ही रहता है, इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता, लेकिन तुम्हारे भीतर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Public Domain. Kendriya Sanskrit Vidyapeeth Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

का शरीर खिल जाता है और फूल जाता है – फैल जाता है।

ध्यान में निरंतर लोगों को अनुभव होता है... किसी को अनुभव होता है कि उसका शरीर बहुत बड़ा हो गया – यह शरीर इतना ही रहता है... यह शरीर इतना ही रहता है – ध्यान में उसे लगता है कि यह क्या हो रहा है ! मेरा शरीर फैलता जा रहा है, पूरे कमरे को भर लिया ! आंख जब वह खोलता है तो हैरान होता है कि शरीर तो उतना ही है, लेकिन वह फीलिंग (अनुभूति) भी उसका पीछा करती है कि वह भी झूठ नहीं था जो मैंने जाना; अनुभव इतना साफ हुआ था कि मैं पूरे कमरे में भर गया हूं। वह इथरिक शरीर है। उसके आयतन का कोई अंत नहीं है। वह भाव से फैलता और सिकुड़ता है – वह इतना फैल सकता है कि सारे जगत में भर जाये; वह इतना सिकुड़ सकता है कि एक छोटे अणु में भी उसके लिए जगह मिल जाये। वह भाव शरीर है।

फैला हुआ होना भाव शरीर की स्वस्थता

तो उसकी क्रियाएं तुम्हें दिखाई पड़नी शुरू होंगी – उसका फैलना, उसका सिकुड़ना; वह किन स्थितियों में फैलता है, किन में सिकुड़ता है। जिनमें वह फैलता है, अगर साधक उन क्रियाओं में जीने लगे तो सामंजस्य पैदा होगा; जिनमें वह सिकुड़ता है, अगर उनमें जीने लगे तो इस शरीर में और दूसरे शरीर में सामंजस्य टूट जायेगा; क्योंकि उसका फैलाव ही उसकी सहजता है – जब वह पूरा फैला होता है, पूरा प्रफुल्लित होता है, तब वह इस शरीर के साथ एक सेतु में बंध जाता है; और जब वह भयभीत होता है, सिकुड़ा हुआ होता है, तो इस शरीर से उसके संबंध छिन्न-भिन्न हो जाते हैं; वह अलग एक कोने में पड़ जाता है। उस शरीर की और तरह की भी क्रियाएं हैं जिनको कि और तरह से जाना जा सकता है। जैसे कि...

तीव्र भावनात्मक आघात से भाव शरीर का स्पष्ट बोध

अगर एक आदमी अभी दिखाई पड़ रहा था बिलकुल स्वस्थ – सब तरह से ठीक – और किसी ने आकर उसको खबर दी कि उसको फांसी की सजा हो गयी... कि उसके चेहरे का रंग फौरन उड़ जायेगा। उसके इस शरीर में कोई फर्क नहीं पड़ रहा है, क्योंकि इस शरीर में जितना खून है उतना है, लेकिन उसकी इथरिक बॉडी में एकदम फर्क पड़ गया – उसकी इथरिक बॉडी इस शरीर को छोड़ने को तैयार हो गयी; उसकी इथरिक बॉडी, उसका भाव शरीर इस

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

शरीर को छोड़ने को तैयार हो गया... और हालत वैसी ही हो गयी, जैसे कि इस घर के मालिक को अचानक पता चले कि अभी मकान खाली कर देना है... तो सब रौनक चली जाये; सब अस्त-व्यस्त हो जाये। उस दूसरे शरीर ने इससे संबंध एक अर्थ में तोड़ ही दिया – फांसी तो थोड़ी देर बाद होगी, नहीं भी होगी, लेकिन उसका इस शरीर से संबंध टूट गया।

एक आदमी तुम्हारी छाती पर बंदूक लेकर खड़ा हो गया, एक शेर ने तुम्हारे ऊपर हमला कर दिया, तो तुम्हारे इस शरीर पर अभी कुछ भी नहीं हुआ है, किसी ने छुआ भी नहीं है, लेकिन तुम्हारा इथरिक शरीर तैयारी कर लिया है, छोड़ने की – उसके बीच, इसके बीच फासला बड़ा हो गया।

तो उसकी गतियों को फिर तुम्हें सूक्ष्मता से देखना पड़ेगा। वे देखी जा सकती है, उनमें कोई कठिनाई नहीं है। कठिनाई है तो यही कि हम इसी शरीर की गतियों को नहीं देख पाते। इस शरीर की गतियों को हम देखें तो हमें उसकी गतियां भी दिखाई पड़ने लगेंगी। और जैसे ही दोनों की गतियों का बोध तुम्हें स्पष्ट होगा, तुम्हारा बोध ही दोनों के बीच सामंजस्य बन जायेगा।

भाव शरीर में जागने पर सूक्ष्म शरीर का बोध

फिर तीसरा शरीर है, जिसे सूक्ष्म शरीर मैंने कहा, एस्ट्रल बॉडी कहा। उसकी गति निश्चित ही और भी सूक्ष्म है। और तुम्हारे भय और क्रोध और प्रेम और घृणा, इनसे भी ज्यादा सूक्ष्म है। उसकी गति को पकड़ने के लिए तो दूसरे शरीर में जब तक पूरी सफलता न मिल जाये तब तक बहुत कठिनाई है। समझना भी थोड़ा कठिन है, क्योंकि अब गैप (अंतराल) बहुत बड़ा हो गया, हम पहले शरीर पर मूर्छित हैं। इसलिए पहले शरीर से दूसरा शरीर निकट है। थोड़ी बहुत बात समझ में आती है। तीसरे शरीर के साथ बहुत गैप हो गया – यानी ऐसा फर्क पड़ गया कि दूसरा शरीर तो हमारे बगल का नेबर था, पड़ोसी था – कभी-कभी उसकी आवाज, उसके चौके में बर्तन के गिरने की आवाज, कभी उसके बच्चे के रोने की आवाज सुनाई पड़ जाती थी, लेकिन तीसरा शरीर पड़ोसी के बाद का पड़ोसी है। उसके चौके की भी आवाज कभी नहीं आती, उसके बच्चे के रोने का भी कभी पता नहीं चलता।

तीसरे शरीर की यात्रा और भी सूक्ष्म है। और, उसे तभी पकड़ा जा सकता है जब हम दूसरे में भाव को पकड़ने लगें, तब तीसरे में हम तरंगों को पकड़ सकते हैं। तरंगें भाव के भी पूर्व हैं। तरंगों का ही सघन रूप भाव है। और भाव का सघन रूप क्रिया है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तो मुझे तो पता नहीं चलेगा कि तुम क्रोध में हो, जब तक तुम मेरे ऊपर क्रोध प्रगट न करो; क्योंकि जब वह क्रिया बन जाये, तब मैं देख पाऊंगा। लेकिन तुम क्रिया के पहले ही उसको देख सकते हो – भाव शरीर में, कि क्रोध उठ आया। लेकिन जो क्रोध उठा है, उसके भी अणु हैं जो सूक्ष्म शरीर से आते हैं। और वे अणु अगर न आयें तो भाव शरीर में क्रोध नहीं उठ सकता। अब वह जो सूक्ष्म शरीर है, एस्ट्रल जो बॉडी है, वह कहना चाहिए, सिर्फ तरंगों का समूह है। और हमारी सब स्थितियां, एक उदाहरण से हम समझने की कोशिश करें।

कभी पानी अलग दिखाई पड़ता है – हायड्रोजन अलग दिखाई पड़ती है, ऑक्सीजन अलग दिखाई पड़ती है। ऑक्सीजन में पानी का कोई पता नहीं चलता, पानी में ऑक्सीजन कहीं दिखाई नहीं पड़ती। पानी का कोई गुण ऑक्सीजन में नहीं है, कोई गुण हाइड्रोजन में नहीं है, लेकिन दोनों के मिलने से पानी बन जाता है – दोनों में कुछ छिपे हुए गुण हैं जो मिलकर प्रगट हो जाते हैं।

एस्ट्रल बॉडी में कभी क्रोध नहीं दिखाई पड़ता, कभी प्रेम नहीं दिखाई पड़ता, कभी घृणा नहीं दिखाई पड़ती, कभी भय नहीं दिखाई पड़ता, लेकिन तरंगें उसके पास हैं जो दूसरे शरीर, भाव शरीर से जुड़कर तत्काल कुछ बन जाती हैं।

तो जब तुम दूसरे शरीर में पूरी तरह जागोगे, और जब तुम क्रोध के प्रति पूरी तरह जागोगे, तब तुम पाओगे कि क्रोध के पहले भी कोई घटना घट रही है – यानी क्रोध जो है वह शुरुआत नहीं है, वह भी कहीं पहुंच गयी बात है।

ऐसा समझो कि पानी से एक बबूला उठ रहा है... रेत से एक बबूला उठा है और पानी में चल पड़ा है। जब वह रेत से छूटता है तब तो दिखाई नहीं पड़ता, आधे पानी तक आ जाता है तब भी दिखाई नहीं पड़ता, जब बिलकुल पानी से बित्ता – दो बित्ता नीचे रह जाता है, जहां तक हमारी आंख जाती है, तब हमें दिखाई पड़ता है,लेकिन तब भी बहुत छोटा दिखाई पड़ता है। फिर वह पानी की सतह के पास आने लगता है। जैसे पास आने लगता है, वैसे बड़ा होने लगता है; क्योंकि हमें दिखाई पड़ने लगता है – एक; ज्यादा साफ दिखाई पड़ने लगता है – दो; और पानी का जो दबाव और वजन है वह उस पर कम होने लगता है, इसलिए वह बड़ा होने लगता है। जितना नीचे था उतना पानी की सतह का ज्यादा दबाव था, वह उसको दबाये हुए थी।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

जैसे-जैसे सतह का दबाव कम होने लगा, वह ऊपर आने लगा, वह बड़ा होने लगा। और जब वह सतह पर आता है तो वह पूरा बड़ा हो जाता है; लेकिन जहां वह पूरा बड़ा होता है, वहीं वह फूट भी जाता है।

तो उसने बड़ी यात्रा की ...उसने बड़ी यात्रा की – कुछ हिस्से थे जहां वह हमें दिखाई नहीं पड़ता था, लेकिन वहां भी वह था; वह रेत में दबा था। फिर वह वहां से निकला, तब भी हमें दिखाई नहीं पड़ता था, वह पानी में दबा था। फिर वह पानी की सतह के पास आया तब हमें दिखाई पड़ा, लेकिन बहुत छोटा मालूम पड़ रहा था। फिर वह पानी की सतह पर आया और तब वह पूरा हुआ, और तब वह फूटा।

क्रोध की तरंग की यात्रा

तो हमारे शरीर तक आते आते क्रोध का बबूला पूरी तरह फूटता है; वह सतह पर आकर प्रगट होता है। चाहो तो तुम इस शरीर पर आने के पहले उसको भाव शरीर में रोक सकते हो; वह दमन होगा। लेकिन अगर तुम भाव शरीर में उसको गौर से देखो, तो तुम बहुत हैरान होओगे कि उसकी यात्रा भाव शरीर के और भी पहले से हो रही है – लेकिन वहां वह क्रोध नहीं है, वहां वे सिर्फ तरंगें हैं।

जगत में, असल में अलग-अलग पदार्थ नहीं हैं, अलग-अलग तरंगों के संघात हैं। कोयला भी वही है, हीरा भी वही है – सिर्फ तरंगों के संघात में फर्क पड़ गया है। और अगर हम किसी भी पदार्थ को तोड़ते चले जायें तो नीचे जाकर विद्युत ही रह जाती है, और उसके अलग-अलग संघात और अलग-अलग संघट अलग-अलग तत्त्वों को बना देते हैं – ऊपर वे सब भिन्न हैं, लेकिन बहुत गहरे में जाकर एक हैं।

तो अगर तुम भाव शरीर के प्रति जागकर उसका पीछा करोगे, तो तुम अचानक सूक्ष्म शरीर में प्रवेश कर जाओगे... और वहां तुम पाओगे – क्रोध क्रोध नहीं है, क्षमा क्षमा नहीं है, बल्कि दोनों की तरंगें एक ही हैं – प्रेम और घृणा की तरंगें एक ही हैं, सिर्फ संघात का भेद है। और इसीलिए तुम्हें बड़ी हैरानी होती है कि तुम्हारा प्रेम कभी घृणा में बदल जाता है, कभी घृणा प्रेम में बदल जाती – जिनको हम बिलकुल विपरीत चीजें समझते हैं, ये बदल कैसे जाती हैं! जिसको मैं कल मित्र कहता था, वह आज शत्रु हो गया... तो मैं कहता हूं कि शायद मैं धोखा खा गया, वह मित्र था ही नहीं; क्योंकि हम मानते हैं कि मित्र शत्रु कैसे हो सकता है!

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

मित्रता और शत्रुता की तरंगें एक ही हैं – संघात का फर्क है, सघनता का फर्क है, चोट का फर्क है – तरंगों में कोई फर्क नहीं है। जिसे हम प्रेम कहते हैं – सुबह प्रेम है, दोपहर को घृणा हो जाता; दोहपर को घृणा है, सांझ को प्रेम हो जाता। बड़ी कठिनाई होती है कि हम एक ही व्यक्ति को प्रेम करते हैं, उसी को घृणा भी करते हैं क्या ?

घृणा और प्रेम का संबंध

फ्रायड को यही ख्याल था... कि जिसको हम घृणा करते हैं उसी को हम प्रेम भी करते हैं; जिसको हम प्रेम करते हैं उसको घृणा भी करते हैं। उसने जो कारण खोजा वह थोड़ी दूर तक सही था। लेकिन चूंकि उसे मनुष्य के और शरीरों का कोई बोध नहीं है, इसलिए वह बहुत दूर तक खोज नहीं सका; उसने जो कारण खोजा वह बहुत सतह पर था। उसने कारण यह खोजा कि बच्चा जब मां के पास बड़ा होता है तो एक ही ऑब्जेक्ट (विषय) को – मां को... वह कभी प्रेम भी करता है – जब मां उसको प्रेम देती है; और जब मां उसको डांटती-डपटती, क्रोध करती है – मौके होते हैं, जब वह नाराज होती है – तब वह उसको घृणा करने लगता है।

तो एक ही ऑब्जेक्ट के प्रति, एक ही मां के प्रति दोनों बातें एकसाथ उसके मन में भर जाती हैं – घृणा भी करता है, प्रेम भी करता है; कभी सोचता है मार डालूं, कभी सोचता है कि इसके बिना कैसे जी सकता हूं, यही मेरा प्राण है – वह दोनों बातें सोचने लगता है। इन दोनों बातों को सोचने की वजह से मां उसके प्रेम का पहला ऑब्जेक्ट है। इसलिए सदा के लिए सब प्रेम के ऑब्जेक्ट जब भी कोई प्रेम किसी से वह करेगा, तो वह एसोसिएशन (साहचर्य) के कारण उसको घृणा भी करेगा और प्रेम भी करेगा।

लेकिन यह बहुत सतह पर पकड़ी गयी बात है। यह बबूला वहां पकड़ा गया है जहां फूटने के करीब है। यह बहुत गहरे में नहीं पकड़ी गयी है बात।

गहरे में, अगर एक मां को भी बच्चा अगर घृणा और प्रेम दोनों कर पाता है, तो इसका मतलब यह है कि घृणा और प्रेम में जो अंतर होगा वह बहुत गहरे में क्वांटिटि का होगा, क्वालिटि का नहीं हो सकता। वह जो अंतर होगा वह परिमाण का होगा, वह गुण का नहीं हो सकता, क्योंकि प्रेम और घृणा एक ही चित्त में, एकसाथ अस्तित्व में नहीं हो सकते। अगर हो सकते हैं, तो एक ही आधार पर हो सकते हैं कि वे कनवर्टिबल (परिवर्तनीय) हों – उनकी तरंगें यहां से वहां डोल जाती हों।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

चित्त के समस्त द्वंद्वों की जड़ें सूक्ष्म शरीर में

तो यह तीसरे शरीर में ही साधक को पता चलता है जाकर कि हमारे सारे चित्त में द्वंद्व क्यों है। एक आदमी जो सुबह मेरे पैर छू गया और कह गया कि आप भगवान हो, वह शाम को जाकर गाली देता है और कहता है, वह आदमी शैतान है। वह कल सुबह आकर फिर पैर छूता है और कहता है, आप भगवान हैं। कोई आकर मुझे कहता है कि उस आदमी की बात पर भरोसा मत करना, वह कभी आपको भगवान कहता है, कभी शैतान कहता है। मैं कहता हूं, उसी पर भरोसा करने योग्य है; क्योंकि वह जो आदमी कह रहा है, उसका कोई कसूर नहीं है, वह कोई एक-दूसरे के विपरीत बातें नहीं कह रहा है, ये एक ही स्पैक्ट्रम (वर्णक्रम) की बातें हैं; ये एक ही सीढ़ी की बातें हैं और इन सीढ़ियों में परिमाण का अंतर है।

असल में जैसे ही वह भगवान कहता है, वैसे ही वह एक बात को पकड़ लेता है – और चित्त जो है, वह द्वंद्व है – दूसरा पहलू कहां जायेगा ? वह उसके नीचे दबा बैठा रहता है... और प्रतीक्षा करता है कि जब तुम्हारा पहला भाव थक जाये तो मुझे मौका देना। वह जब थक जाता है थोड़ी देर में... कितनी देर तक भगवान कहता रहेगा ! थोड़ी देर में थक जाता है, तो फिर कहता है – शैतान है पक्का वह आदमी। और ये दोनों दो चीजें नहीं हैं, ये दोनों बिलकुल एक चीजें हैं।

और जब तक मनुष्य जाति यह न समझ पायेगी ठीक से कि हमारे तीसरे शरीर में हमारे सारे द्वंद्व एक ही तरंगों के रूप हैं, तब तक हम मनुष्य की समस्याओं को हल न कर पायेंगे, क्योंकि सबसे बड़ी समस्या यही है... कि जिससे हम प्रेम करते हैं, उससे हम घृणा भी करते हैं; जिसके बिना हम नहीं जी सकते, उसकी हम हत्या भी कर सकते हैं; जो हमारा मित्र है, वह गहरे में हमारा शत्रु भी है। यह बड़ी से बड़ी समस्या है; क्योंकि जीवन के लिए जहां संबंध है हमारे वहां यही सबसे बड़ा मामला है। लेकिन अगर एक बात समझ में आ जाये कि इनके संघात एक जैसे हैं, इनमें कोई फर्क नहीं है...

आमतौर से हम अंधेरे और प्रकाश को दो विरोधी चीजें मानते हैं, जो गलत है। वैज्ञानिक अर्थों में तो अंधेरा जो है वह प्रकाश की कम से कम... कम से कम... न्यूनतम अवस्था है। और अगर हम खोज सकें तो अंधेरे में भी प्रकाश मिल जायेगा। ऐसा अंधेरा नहीं खोजा जा सकता जहां प्रकाश अनुपस्थित हो। यह दूसरी बात है कि हमारे खोज के साधन थक जायें, हमारी आंख न देख पाती हो, हमारे यंत्र न देख पाते हों, लेकिन प्रकाश जो है – वह,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

और अंधकार जो है, वे एक ही यात्रा पथ पर, एक ही चीज के तरंगों के विभिन्न आघात हैं।

जैसे इसको और दूसरी तरह से समझें तो ज्यादा आसान होगा, क्योंकि प्रकाश और अंधकार में हमनें ज्यादा बड़ा, एब्सोल्यूट (परम) विरोध मान रखा है। लेकिन ठंड और गर्मी को हम समझें तो आसानी हो जायेगी; उसमें हमने इतना एब्सोल्यूट विरोध नहीं मान रखा है। और कभी एक छोटा सा प्रयोग करने जैसा मजेदार होता है कि एक हाथ को थोड़ा सिगड़ी पर तपा लें, और एक हाथ को बर्फ पर रखकर ठंडा कर लें, और फिर दोनों हाथों को एक ही तापमान के पानी में डाल दें – और तब आप बड़ी मुश्किल में पड़ जायेंगे कि उस पानी को ठंडा कहें कि गर्म कहें; क्योंकि एक हाथ खबर देगा वह गर्म है और एक हाथ खबर देगा कि वह ठंडा है। तब आप बड़ी मुश्किल में पड़ जायेंगे कि इस पानी को हम क्या कहें – ठंडा कहें कि गर्म कहें; क्योंकि आपके दो हाथ दो खबरें दे रहे हैं। असल में ठंडा और गर्म दो चीजें नहीं हैं, एक सापेक्ष अनुभव है। जिस चीज को हम ठंडा कह रहे हैं, उसका मतलब केवल इतना है कि हम उससे ज्यादा गर्म हैं; जिस चीज को हम गर्म कह रहे हैं, उसका कुल मतलब इतना है कि हम उससे ज्यादा ठंडे हैं – हमारे और उसके बीच हम परिमाण का अंतर बता रहे हैं, और कुछ भी नहीं कर रहे हैं।

कोई चीज ठंडी नहीं है, कोई चीज गर्म नहीं है – या जो भी चीज ठंडी है वह साथ ही गर्म है। असल में गर्मी और ठंडक बड़े बेमानी शब्द हैं – कहना चाहिए : तापमान; वह ठीक शब्द है।

इसलिए वैज्ञानिक ठंडे और गर्म शब्द का प्रयोग नहीं करता; वह कहता है, कितने डिग्री का तापमान है; क्योंकि ठंडे और गर्म काव्य के शब्द हैं, कविता के शब्द हैं – खतरनाक हैं विज्ञान में; उससे कुछ पता नहीं चलता। एक आदमी कहे कि कमरा ठंडा है, उससे कुछ पता नहीं चलता कि मतलब क्या है उसका। हो सकता है, उस आदमी को बुखार चढ़ा हो और कमरा ठंडा मालूम पड़ रहा हो, और कमरा ठंढा बिलकुल न हो। इसलिए जब तक इस आदमी का पता न चल जाये कि इस आदमी की बुखार की क्या स्थिति है, तब तक कमरे के बाबत इसके वक्तव्य का कोई मतलब नहीं है। तो इसलिए इससे हम पूछते हैं : तुम यह मत बताओ कि कमरा ठंढा है या गर्म, तुम यह बताओ डिग्री कितनी है ? तो डिग्री जो है वह ठंढक और गर्मी का पता नहीं देती, डिग्री सिर्फ इस बात का पता देती है कि तापमान इतना है। अगर उससे आपकी डिग्री ज्यादा है तो वह ठंडा मालूम पड़ेगा, अगर आपकी डिग्री कम है तो वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

गर्म मालूम पड़ेगा।

ठीक ऐसा ही प्रकाश और अंधकार के बाबत सच है... कि हमारे देखने की क्षमता कितनी है। रात हमें अंधेरी मालूम पड़ती है, उल्लू को नहीं मालूम पड़ती होगी; उल्लू को दिन बहुत अंधकारपूर्ण है। और उल्लू जरूर समझता होगा कि ये आदमी जो हैं, बड़े अजीब लोग हैं, रात में जागते हैं।

स्वभावतः, आदमी उल्लू का बड़ा... उल्लू इसीलिए समझता है न, उसको नाम ही इसीलिए दिया हुआ है, लेकिन उल्लू क्या सोचते हैं आदमियों के बाबत, यह हमें कुछ पता नहीं है। निश्चित ही उसके लिए तो दिन जो है वह रात है, और रात जो है वह दिन है। और वह सोचता होगा, आदमी भी कैसा नासमझ है ! अब इसमें इतने-इतने बड़े ज्ञानी होते हैं, लेकिन फिर भी ये जागते हैं रात में ही – और जब दिन होता है तब सो जाते हैं ! जब असली वक्त आता है जागने का, तब ये बेचारे सो जाते हैं।

उल्लू को रात में दिखाई पड़ता है; उसकी आंख सक्षम है तो उसके लिए रात अंधकार नहीं है। अंधकार और प्रकाश, ऐसे ही प्रेम और घृणा की तरंगें हैं जिनमें अनुपात है।

सूक्ष्म शरीर में जागने से द्वंद्व मुक्ति

तो तीसरे तल पर जब तुम जागना शुरू होओगे, तो तुम एक बहुत अजीब स्थिति में पहुंचोगे... और वह अजीब स्थिति यह होगी कि तुम्हारे पास चुनाव न रह जायेगा कि हम प्रेम को चुनें कि घृणा को; क्योंकि तब तुम जानते हो : ये दोनों एक ही चीज के नाम हैं – और तुमने एक को भी चुना तो दूसरा भी चुन लिया गया; दूसरे से तुम बच नहीं सकते।

इसलिए तीसरे शरीर पर खड़े हुए आदमी से अगर तुम कहोगे कि हमें प्रेम करो, तो वह पूछेगा कि घृणा की भी तैयारी है ? घृणा सह सकोगे ? नहीं, तुम कहोगे – हम तो प्रेम चाहते हैं, आप हमें प्रेम दें। तो वह कहेगा, यह बहुत मुश्किल है कि मैं तुम्हें प्रेम दे सकूं, क्योंकि प्रेम जो है वह घृणा के संघातों का ही एक रूप है... असल में ऐसा रूप जो तुम्हें प्रीतिकर लगता है; और घृणा ऐसा रूप है, उन्हीं किरणों का, उन्हीं तरंगों का, जो तुम्हें अप्रीतिकर लगता है।

तो तीसरे तल पर खड़ा हुआ व्यक्ति द्वंद्व से मुक्त होने लगेगा; क्योंकि पहली दफा उसे पता चलेगा कि द्वंद्व में जिन दो चीजों को उसने दो माना था, वे दो नहीं थीं, वे एक ही थीं – दो जो शाखाएं दिखाई पड़ती थीं, वह पीड़ पर आकर एक ही वृक्ष की शाखाएं थीं। और बड़ा गहरा था वह कि वह

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

एक को बचाने के लिए दूसरे को काटता रहा था। लेकिन उससे कुछ कटना नहीं हो सकता था, क्योंकि वृक्ष गहरे में एक ही था। पर दूसरे पर जागकर ही तुम्हें तीसरे का बोध हो सकता है, क्योंकि तीसरे की बड़ी सूक्ष्म तरंगें हैं : वहां भाव भी नहीं बनता, सीधी तरंग होती है।

सूक्ष्म शरीर में जागने पर आभामंडल का दर्शन

और अगर तीसरे की तरंग का तुम्हें पता चलने लगा तो तुम्हें एक अनूठा अनुभव होना शुरू होगा : तब तुम किसी व्यक्ति को देखकर ही कह सकोगे कि वह किन तरंगों से तरंगायित है; क्योंकि तुम्हें अपनी तरंगों का पता नहीं है, इसलिए तुम दूसरे को नहीं पहचान पा रहे हो। नहीं तो प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे के पास उसके तीसरे शरीर से निकलने वाली तरंगों का पुंज होता है। जो हम बुद्ध और महावीर, राम और कृष्ण के आसपास जो आरा बनाते रहे हैं, एक प्रतिभा मंडल बनाते रहे हैं सिर के आसपास, वह देखा गया मंडल है। उसके रंग पकड़े गये हैं; और उसके विशेष रंग हैं।

तीसरे शरीर का ठीक अनुभव हो तो वे रंग जब तुम्हें दिखाई पड़ने शुरू हो जाते हैं। और वे रंग जब तुम्हें दिखाई पड़ने शुरू हो जाते हैं तो अपने ही नहीं दिखाई पड़ते, दूसरे के भी दिखाई पड़ने शुरू हो जाते हैं।

असल में, जितने दूर तक हम अपने शरीर को गहरे देखते हैं, उतने ही दूर तक हम दूसरे के शरीर को भी देखने लगते हैं। चूंकि हम अपनी फिजिकल बॉडी (भौतिक शरीर) को ही जानते हैं, इसलिए हम दूसरे की भी फिजिकल बॉडी को ही जानते हैं। जिस दिन हम अपने इथरिक शरीर को जानेंगे, उसी दिन हमें दूसरे के इथरिक शरीर का पता चलना शुरू हो जायेगा। इसके पहले कि तुम क्रोध करो, जाना जा सकता है कि अब तुम क्रोध करोगे; इसके पहले कि तुम प्रेम प्रगट करो, कहा जा सकता है कि तुम अब प्रेम प्रगट करने की तैयारी कर रहे हो। तो जिसको हम दूसरे के भाव को समझ लेना कहते हैं, उसमें कुछ और बड़ी बात नहीं है – अपने ही भाव शरीर के प्रति जागने से दूसरे के भाव को पकड़ना एकदम आसान हो जाता है; क्योंकि उसकी सारी स्थितियां दिखाई पड़ने लगती हैं। और तीसरे शरीर पर जागने पर तो चीजें बड़ी साफ हो जाती हैं, क्योंकि फिर तो रंग भी दिखाई पड़ने लगते हैं उसके व्यक्तित्व के।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

विभिन्न शरीरों के आभामंडल

संन्यासियों के, साधुओं के कपड़ों का चुनाव, उनके रंग का चुनाव, तीसरे शरीर के रंगों को देखकर किया गया है। चुनाव अलग-अलग हुए, क्योंकि अलग-अलग शरीरों पर जोर था। जैसे बुद्ध ने पीला रंग चुना, क्योंकि सातवें शरीर पर जोर था उनका। सातवें शरीर को उपलब्ध व्यक्ति के आसपास जो आरा (आभामंडल) बनता है, वह पीला है। इसलिए बुद्ध ने पीत वस्त्र चुने अपने भिक्षुओं के लिए। लेकिन पीत वस्त्र चुने तो जरूर, लेकिन पीत वस्त्र के कारण ही बौद्ध भिक्षु को हिंदुस्तान में टिकना मुश्किल हुआ; क्योंकि पीला रंग जो है, वह हमारे मन में मृत्यु से संबंधित है। वह है भी, क्योंकि सातवां शरीर जो है, वह मृत्यु – महामृत्यु है।

तो पीला रंग जो है, वह हमारे मन में बहुत गहरे में मृत्यु का बोध देता है; लाल रंग जीवन का बोध देता है। इसलिए गेरुए वस्त्रवाला संन्यासी ज्यादा आकर्षक सिद्ध हुआ बजाय पीत वस्त्र संन्यासियों के। वह जीवंत मालूम पड़ा। वह खून का रंग है, और छठवें शरीर का रंग है – ब्रह्म का, कॉस्मिक बॉडी का रंग है। तो जैसा सूर्यादय होता है सुबह, वैसा रंग है। छठवें शरीर पर वैसे रंग का आरा बनना शुरू होता है।

जैनों ने सफेद वस्त्र चुने, वह पांचवें शरीर का रंग है; वह आत्म शरीर से संबंधित है। जैनों का आग्रह ईश्वर की फिक्र छोड़ देने का है, निर्वाण की फिक्र छोड़ देने का है; क्योंकि आत्मा तक ही वैज्ञानिक चर्चा हो सकती है। और महावीर बहुत ही वैज्ञानिक बुद्धि के आदमी हैं; वे उतनी ही दूर तक बात करेंगे जितनी दूर तक गणित जाता है; उससे आगे वे कहेंगे, अब हम बात नहीं करेंगे, अब तुम जाकर देखना; वह दूसरी बात है, हम बात नहीं करेंगे; क्योंकि कोई भूल-चूक की बात नहीं करना चाहते वे। कुछ मिस्टिक (रहस्यवादी) बात नहीं करना चाहते। तो जिसको मिस्टिसिज्म़ (रहस्यवाद) से बचना है, वह पांचवें शरीर के आगे इंच भर नहीं बात करेगा। तो महावीर ने सफेद रंग चुन लिया, वह पांचवें शरीर का रंग था।

और भी मजे की बात है : तीसरे शरीर से यह बोध होना शुरू हो जायेगा; तीसरे शरीर से तुम्हें रंग दिखाई पड़ने शुरू हो जायेंगे। ये रंग भी तुम्हारे भीतर होनेवाले सूक्ष्म तरंगों के स्पंदन का प्रभाव हैं। आज नहीं कल, इनके चित्र लिये जा सकेंगे; क्योंकि जब आंख से इन्हें देखा जा सकता है तो बहुत दिन तक कैमरे की आंख नहीं देखेगी, ऐसा कहना मुश्किल है। इनके चित्र आज नहीं कल लिये जा सकेंगे। और तब हम व्यक्तित्व को पहचानने

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

के लिए एक बड़ी अदभुत क्षमता को उपलब्ध हो जायेंगे।

रंगों का मनुष्य के व्यक्तित्व से गहरा संबंध

वह तुम ब्लूशर का टेस्ट देखे हो ? एक जर्मन विचारक है जिसने लाखों लोगों पर रंगों का अध्ययन किया है। और अब तो यूरोप और अमरीका में बहुत से अस्पताल भी उसका प्रयोग कर रहे हैं; क्योंकि आप कौन सा रंग पसंद करते हैं, यह आपके बहुत गहरे व्यक्तित्व की खबर देता है। एक खास बीमारी का मरीज एक खास तरह के रंग को पसंद करता है, स्वस्थ आदमी दूसरे तरह के रंग को पसंद करता है, शांत आदमी दूसरे तरह के रंग को पसंद करता है, महत्वाकांक्षी आदमी दूसरी तरह के रंग को पसंद करता है, महत्वाकांक्षाहीन आदमी बिलकुल दूसरी तरह के रंग को पसंद करता है – और इन रंगों की पसंद से तुम अपने तीसरे शरीर पर तुम्हारे क्या प्रगट हो रहा है, उसकी खबर देते हो।

अब यह मजे की बात है कि तुम्हारे तीसरे शरीर पर जो रंग प्रगट हो रहे हैं – तुम्हारे चारों तरफ – अगर उनको पकड़ा जाये – और तुमसे रंगों की जांच करवायी जाये, तो यह बड़े मजे की बात है कि वे रंग दोनों बराबर एक से होते हैं – जो रंग तुम्हारे चारों तरफ फैलता है, वही रंग तुम पसंद करते हो।

रंगों का मनोविज्ञान

रंग का अदभुत अर्थ और उपयोग है। अब जैसे, कभी यह ख्याल में नहीं था कि रंग इतना अर्थपूर्ण हो सकता है... और व्यक्तित्व की बाहर तक खबर दे सकता है... और बाहर से भी रंग के प्रभाव भीतर के व्यक्तित्व तक छूते हैं; उनसे बचा नहीं जा सकता। जैसे किसी रंग को देखकर तुम क्रोधित हो जाओगे। जैसे लाल रंग है, वह सदा से क्रांति का रंग इसीलिए समझा गया। इसीलिए क्रांतिवादी जो है वह लाल झंडा बना लेगा। इसमें बचाव बहुत मुश्किल है। क्योंकि वह क्रोध का रंग है। और क्रोधी चित्त के आसपास गहरे लाल रंग का वर्तुल बनता है – खून का रंग है वह, हत्या का रंग है, क्रोध का रंग है, मिटाने का रंग है।

अब यह मजे की बात है कि अगर इस कमरे की सारी चीजों को लाल रंग दिया जाये, तो आपका ब्लड-प्रेशर बढ़ जायेगा – जितने लोग यहां बैठे हैं, सब का रक्तचाप बढ़ जायेगा। और अगर कोई व्यक्ति निरंतर लाल रंग में रहे, तो कोई भी हालत में उसका रक्तचाप स्वस्थ नहीं रह सकता, वह अस्वस्थ

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

हो जायेगा। नीला रंग रक्तचाप को नीचे गिरा देता है – वह आकाश का रंग है और परम शांति का रंग है। अगर सब तरफ नीला कर दिया जाये तो तुम्हारे रक्तचाप में कमी पड़ती है।

रंग चिकित्सा

आदमी की बात हम छोड़ दें, अगर एक नीली बोतल में पानी भर कर हम उसे सूरज किरणों में रख दें, तो वह जो पानी है वह रक्तचाप को कम करता है। उस पानी का केमिकल कंपोज़िशन (रासायनिक-संरचना) बदल जाता है। वह नीले रंग को पीकर उसकी आंतरिक व्यवस्था बदल जाती है। अगर उसको हम पीले रंग की बोतल में रख दें, तो उसका व्यक्तित्व दूसरा हो जाता है। अगर तुम पीले रंग की बोतल में वही पानी रखो, और नीले रंग की बोतल में वही पानी रखो, और दोनों को धूप में रख दो, तो नीली बोतल का पानी सड़ने में असमर्थ हो जायेगा और पीली बोतल का पानी तत्काल सड़ जायेगा। नीली बोतल का पानी बहुत दिन तक शुद्ध बना रहेगा, सड़ेगा नहीं; पीली बोतल का पानी एकदम सड़ जायेगा। वह पीला रंग जो है मृत्यु का रंग है... और चीजों को एकदम बिखरा देता है।

इस सबके वर्तुल तुम्हारे व्यक्तित्व के आसपास तुम्हें खुद भी दिखाई पड़ने शुरू हो जायेंगे। यह तीसरे शरीर पर होगा। और जब इन तीनों शरीरों पर तुम जागकर देख पाओगे, तो तुम्हारा वह जागकर जो देखना है, वह हारमनी (संतुलन) होगी... और तब तुम्हारे ऊपर किसी भी तरह के शक्तिपात से कोई संघातक परिणाम नहीं हो सकता; क्योंकि यही तुम्हारा जो बोधपथ है, शक्तिपात की ऊर्जा इसी बोधपथ से तुम्हारे चौथे शरीर में प्रवेश कर जायेगी; यह रास्ता बन जायेगा। अगर यह रास्ता नहीं है तो खतरा पूरा है। इसलिए मैंने कहा कि हमारे तीन शरीर सक्षम होने चाहिए तभी गति हो सकती है।

जैविक विकास में प्रथम तीन शरीरों की क्रमिक सक्रियता

प्रश्न : चौथे, पांचवें, छठे या सातवें चक्रों में स्थित व्यक्ति मृत्यु के बाद पुनर्जन्म ले तो उसकी क्रमशः चक्रीय स्थिति क्या होगी ? अशरीरी उच्च योनियां किन शरीरवाले व्यक्तियों को मिलती हैं ? अंतिम उपलब्धि के लिए क्या अशरीरी योनि के प्राणी को पुनः मनुष्य शरीर लेना पड़ता है ?

अब इसमें कुछ और बातें दूर से समझनी शुरू करनी पड़ेंगी। सात शरीर की मैंने बात कही। सात शरीरों को ध्यान में रखकर हम पूरे अस्तित्व को भी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

सात विभागों में बांट दें। सभी अस्तित्व में सातों शरीर सदा मौजूद हैं – जागे हुए या सोये हुए; सक्रिय या निष्क्रिय; विकृत या स्वरूप-स्थित – लेकिन मौजूद हैं।

एक धातु का टुकड़ा पड़ा है, एक लोहे का टुकड़ा पड़ा है, इसमें भी सातों शरीर मौजूद हैं; लेकिन सातों ही सोये हुए; सातों ही निष्क्रिय। इसलिए लोहे का टुकड़ा मरा हुआ मालूम पड़ता है।

एक पौधा है। उसका पहला शरीर सक्रिय हो गया है; उसका भौतिक शरीर सक्रिय हो गया है। इसलिए पौधे में जीवन की पहली झलक हमें मिलनी शुरू हो जाती है कि वह जीवित है।

एक पशु है, उसका दूसरा शरीर सक्रिय हो गया है। इसलिए पशु में मूवमेंट (गति) शुरू हो जाते हैं, जो पौधे में नहीं है। पौधा एक जगह जड़ जमाकर खड़ा है, गतिमान नहीं है; क्योंकि गति के लिए दूसरा शरीर जगना जरूरी है, इथरिक बॉडी जगना जरूरी है। सारी गति उससे आती है। अगर सिर्फ एक शरीर जगा हुआ है तो अगति में होगा – ठहरा हुआ होगा, खड़ा हुआ होगा।

पौधा खड़ा हुआ पशु है। कुछ पौधे हैं जो थोड़ी गति करते हैं – वे पशु और पौधे के बीच की अवस्था में हैं; उन्होंने यात्रा की है थोड़ी। जैसे अफ्रीका के दलदलों में कुछ पौधे हैं, जो सालभर में कोई बीस-पच्चीस फीट सरक जाते हैं – जो अपनी जड़ों से पकड़ने-छोड़ने का काम करते हैं, थोड़ा हटते हैं इधर-उधर। वह पशु और पौधों के बीच की संक्रमण-कड़ी हैं।

पशु में दूसरा शरीर भी सक्रिय हो गया है। सक्रिय का मतलब सजग नहीं, सक्रिय का मतलब क्रियाशील हो गया है; पशु को कोई पता नहीं है। उसके दूसरे इथरिक (भाव) शरीर के सक्रिय हो जाने की वजह से उसमें क्रोध भी आता है, भय भी आता है, प्रेम भी प्रगट करता है, भागता भी है, बचता भी है, डरता भी है, छिपता भी है, हमला भी करता है – और गतिमान है।

आदमी में तीसरा शरीर सक्रिय हो गया है – एस्ट्रल बॉडी। इसलिए न केवल वह शरीर से गति करता है, बल्कि चित्त से भी गति करता है, मन से भी यात्रा करता है – भविष्य की भी यात्रा करता है, अतीत की भी यात्रा करता है।

पशुओं के लिए कोई भविष्य नहीं है, इसलिए पशु कभी चिंतित और तनावग्रस्त नहीं दिखाई पड़ते; क्योंकि सब चिंता भविष्य की चिंता है – कल क्या होगा, वही तकली चिंता है। लेकिन पशु के लिए कल नहीं है, आज ही

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

सब कुछ है। आज भी नहीं है... उसके अर्थों में; क्योंकि जिसको कल नहीं उसको आज का क्या मतलब है ? जो है, वह है।

मनुष्य में और भी सूक्ष्म गति आयी है। वह गति उसके मन की गति है। वह तीसरे एस्ट्रल बॉडी (सूक्ष्म-शरीर) से आयी है। वह अब मन से भविष्य की भी कल्पना करता है – मृत्यु के बाद भी क्या होगा, इसकी भी चिंता करता है; मरने के बाद कहा जाऊंगा, नहीं जाऊंगा, उसकी भी चिंता करता है; जन्म के पहले कहां था, नहीं था, उसकी भी फिक्र करता है।

अशरीरी उच्च योनियां

चौथा शरीर थोड़े से मनुष्यों में सक्रिय होता है, सभी मनुष्यों में नहीं। और जिन मनुष्यों में चौथा शरीर सक्रिय हो जाता है – मत्तस शरीर – अगर वे मरें, तो वे देव योनि, जिसको हम कोई भी नाम दे दें, उस तरह की योनि में प्रवेश कर जाते हैं – जहां चौथे शरीर की सक्रियता की बहुत सुविधा है।

तीन शरीरों तक आदमी आदमी रहता है, सक्रिय रहे तो। चौथे शरीर से आदमी के ऊपर की योनियां शुरू होती हैं, लेकिन चौथे शरीर से एक फर्क समझ लेना जरूरी होगा :

अगर चौथा शरीर सक्रिय हो जाये, तो आदमी की शरीर लेने की संभावना कम और अशरीरी अस्तित्व की संभावना बढ़ जाती है। लेकिन जैसा मैंने कहा कि सक्रिय और सचेतन का फर्क याद रखना। अगर सिर्फ सक्रिय हो और सचेतन न हो, तो उसे हम प्रेतयोनि कहेंगे; और अगर सक्रिय हो और सचेतन भी हो, तो देवयोनि कहेंगे। प्रेत में और देव में उतना ही फर्क है : उन दोनों का चौथा शरीर सक्रिय हो गया है, लेकिन प्रेत के चौथे शरीर की सक्रियता का उसें कोई बोध नहीं, वह अवेयर (सजग) नहीं है उसके प्रति; और देव को उस चौथे शरीर की सक्रियता का बोध है, वह अवेयर है।

इसलिए प्रेत अपने चौथे शरीर की सक्रियता से हज़ार तरह के नुकसान करता रहेगा – खुद के भी, दूसरों के भी; क्योंकि मूर्छा सिर्फ नुकसान ही कर सकती है। और देव बहुत तरह के लाभ पहुंचाता रहेगा – अपने को भी और दूसरों को भी; क्योंकि सजगता सिर्फ लाभ ही पहुंचा सकती है।

पांचवां शरीर जिसका सक्रिय हो गया, वह देवयोनि के भी पार चला जाता है। पांचवां शरीर आत्म शरीर है। और पांचवें शरीर पर सक्रियता और सजगता एक ही अर्थ रखते हैं; क्योंकि पांचवें शरीर पर बिना सजगता के कोई भी नहीं जा सकता। इसलिए वहां सक्रियता और सजगता साइमल्टेनियस,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban-Mumukshu Bhawan

युगपत घटित होती हैं।

चौथे शरीर तक यात्रा हो सकती है किसी की सोये सोये भी। अगर जाग जाये तो यात्रा बदल जायेगी – देवयोनि की तरफ हो जायेगी; और अगर सोया रहे तो यात्रा प्रेतयोनि की तरफ हो जायेगी।

पांचवें शरीर के साथ सक्रियता और सजगता का एक ही अर्थ है, क्योंकि वह आत्म-शरीर है; वहां बेहोश होकर आत्मा का तो कुछ अर्थ ही नहीं होता। आत्मा का मतलब ही होश है।

इसलिए आत्मा का दूसरा नाम चेतना है, दूसरा नाम कांशसनेस है। वहां बेहोशी का कोई मतलब नहीं होता। तो पांचवें शरीर से तो दोनों एक ही बात हैं, लेकिन पांचवें शरीर के पहले दोनों रास्ते अलग हैं।

चौथे शरीर तक ही स्त्री-पुरुष का फासला है, और चौथे शरीर तक ही निद्रा और जागरण का फासला है। असल में चौथे शरीर तक ही सब तरह के द्वैत और द्वंद्व का फासला है। पांचवें शरीर से सब तरह का अद्वैत और अद्वंद्व शुरू होता है। पांचवें शरीर से युनिटि (एकता) शुरू होती है; उसके पहले एक डाइवर्सिटि (अनेकता) थी, एक भेद था। पांचवें शरीर की जो संभावना है, वह देवयोनि से नहीं है, न प्रेतयोनि से है, यह थोड़ी बात ख्याल लेने जैसी है।

मनुष्य योनी एक चौराहा है

पांचवें शरीर की संभावना प्रेतयोनि से इसलिए नहीं है कि प्रेतयोनि मूर्छित योनि है – और सजगता के लिए जो शरीर अनिवार्य है, वह उसके पास नहीं है; पहला शरीर उसके पास नहीं है, फिजिकल बॉडी उसके पास नहीं है, जिससे सजगता शुरू होती है – पहली सीढ़ी उसके पास नहीं है जिससे सजगता शुरू होती है। वह सीढ़ी न होने की वजह से प्रेत को वापस लौटना पड़े मनुष्य योनि में। इसलिए मनुष्ययोनि एक तरह के क्रॉस-रोड (चौराहे) पर है।

देवयोनि ऊपर है लेकिन आगे नहीं, इस फर्क को ठीक से समझ लेना – मनुष्ययोनि से देवयोनि ऊपर है, लेकिन आगे नहीं; क्योंकि आगे जाने के लिए तो मनुष्ययोनि पर वापिस लौट आना पड़ता है। प्रेत को इसलिए लौटना पड़ता है कि वह मूर्छित है और मूर्छा तोड़ने के लिए भौतिक शरीर एकदम ज़रूरी है; देव को इसलिए लौटना पड़ता है कि देवयोनि में किसी तरह का दुख नहीं है। असल में वह जागृत योनि है, जागृति में दुख नहीं हो सकता। और जहां दुख नहीं है वहां तड़फ की कोई तड़फ नहीं पैदा होती; जहां दुख नहीं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

है वहां मिटाने का कोई ख्याल नहीं है; जहां दुख नहीं है वहां पाने का कोई ख्याल नहीं है।

तो देवयानि एक स्टेटिक (स्थिर) योनि है, जिसमें गति नहीं है आगे। और सुख की एक खूबी है... कि अगर सुख तुम्हें मिल जाये, तो आगे कोई गति नहीं रह जाती। दुख हो तो सदा गति होती; क्योंकि दुख से हटने को, दुख से मुक्त हाने को तुम कुछ खोजते हो; सुख मिल जाये तो खोज बंद हो जाती। इसलिए एक बड़ी अजीब बात है जो कि समझ में नहीं आती है लोगों को।

महावीर और बुद्ध के जीवन में इस उल्लेख का बड़ा मूल्य है... कि देवता उनसे शिक्षा लेने आते हैं। और जब कोई बुद्ध को, महावीर को पूछता है कि क्या मजा है कि मनुष्य के पास और देवता आयें! देवयोनि तो ऊपर है, तो मनुष्य के पास वे आयें, यह अजीब मामला मालूम होता है। लेकिन यह अजीब नहीं है। योनि तो ऊपर है, लेकिन स्टेटिक (स्थिर) योनि है; मूवमेंट (गति) खत्म हो गया वहां; वहां से आगे कोई गति नहीं है। और अगर आगे गति करनी हो तो जैसे लंबी छलांग लगाने के लिए थोड़ा पीछे लौटना पड़ता है, फिर छलांग लगानी पड़ती है, ऐसा देवयोनि से वापिस लौटकर मनुष्ययोनि पर खड़े होकर ही छलांग लगती है।

सुखों से ऊबकर ही देवयोनि से लौटना संभव

सुख की एक खूबी यह है कि उसमें आगे गति नहीं है और दूसरी खूबी यह है कि सुख उबानेवाला है, बोरिंग है। सुख से ज्यादा उबानेवाला तत्त्व दुनिया में दूसरा नहीं है। दुख भी इतना नहीं उबाता; दुख में बोर्डम (ऊब) बहुत कम है – है ही नहीं; सुख में बहुत बोर्डम है। दुखी चित्त कभी नहीं उबता। इसलिए दुखी समाज असंतुष्ट समाज नहीं होता, और दुखी आदमी असंतुष्ट आदमी नहीं होता, सिर्फ सुखी आदमी असंतुष्ट होता है; और सुखी आदमी का समाज असंतुष्ट समाज होता है। अमरीका जितना असंतुष्ट है, उतना भारत नहीं है – उसका कारण कुल इतना है कि हम दुखी हैं और वह सुखी है; आगे गति नहीं रह गयी, और दुख नहीं है जो गति देता था, और सुख की पुनरुक्ति है – वही सुख, वही सुख – रोज-रोज, रोज-रोज दोहर के बेमानी हो जाता है।

तो देवयोनि जो है वह एक... बोर्डम (ऊब) की चरम शिखर है वह; वहां उससे ज्यादा उबानेवाला कोई स्थान नहीं जगत में। वहां जाकर जैसी ऊब पैदा होती है... लेकिन वक्त लगता है ऊब पैदा होने में... और फिर संदेना

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

के ऊपर निर्भर करता है : जितना संवेदनशील व्यक्ति होगा उतनी जल्दी ऊब जायेगा; जितना संवेदनहीन व्यक्ति होगा उतनी देर में ऊबेगा । नहीं भी ऊबे ! भैस एक ही घास को रोज चरती रहती है और जिंदगी भर में नहीं ऊबती । संवेदना जैसी चीज बहुत कम है । जितनी संवेदना होगी, जितनी सेंसिटिविटि होगी, उतनी ऊब जल्दी पैदा हो जायेगी; क्योंकि संवेदनशीलता जो है वह नये की तलाश करती है... और नया चाहिए ।

संवेदना एक तरह की चंचलता है, और चंचलता एक तरह का जीवन है । तो देवयोनि एक अर्थ में डेड (मृत) योनि है । प्रेतयोनि भी मरी योनि है, लेकिन, फिर भी देवयोनि प्रेतों से भी ज्यादा मरी योनि है; क्योंकि प्रेतों की दुनिया में एक अर्थ में ऊब बिलकुल नहीं है । क्योंकि दुख काफी है और दुख देने की सुविधा काफी है; दूसरे को सताने का भी रस बहुत है, और खुद को भी सताये जाने की बहुत सुविधा है । उपद्रव की बहुत गुंजाइश है । देवयोनि बिलकुल शांत योनि है जहां उपद्रव बिलकुल नहीं है ।

तो देवयोनि से जो लौटना होता है, वह लौटना होता है ऊब के कारण । अंततः जो लौटना है वहां से, वह बोर्डम की वजह से । और ध्यान रहे, इस लिहाज से वह मनुष्ययोनि से ऊपर है कि वहां संवेदनशीलता बहुत बढ़ जाती है; और हम जिन सुखों से वर्षों में नहीं ऊबते, उन सुखों से उस योनि में एक बार भी भोगने से ऊब पैदा हो जाती है ।

इसलिए तुमने पढ़ा होगा पुराणों में कि देवता पृथ्वी पर जन्म लेने को तरसते हैं । अब यह हैरानी की बात है, उनके तरसने का कोई कारण नहीं है; क्योंकि यहां पृथ्वी पर सब देवयोनि में जाने को तरस रहे हैं । और ऐसी भी कथाएं हैं कि कोई देवता उतरेगा और पृथ्वी पर किसी स्त्री को प्रेम करने आयेगा । ये कथाएं सूचक हैं । कोई अप्सरा उतरेगी पृथ्वी पर और किसी पुरुष से प्रेम करेगी, ये कथाएं सूचक हैं; ये चित्त की सूचक हैं । ये यह कह रही हैं कि उस योनि में सुख तो बहुत है, लेकिन सुख नीरस हो जाता है – सुख, सुख, सुख ! उसके बीच में अगर दुख के क्षण न हों, तो उबानेवाला हो जाता है । और अगर कभी हमारे सामने दोनों विकल्प रखे जायें कि अनंत सुख चुन लो – सुख ही सुख रहेगा – कभी ऐसा क्षण नहीं आयेगा कि तुम्हे लगे कि दुख है; और अनंत दुख चुन लो, दुख ही दुख रहेगा; तो बुद्धिमान आदमी दुख को चुन लेगा ।

तो यह जो देवयोनि है, वहां से वापिस लौटना पड़े; प्रेतयोनि है, वहां से वापिस लौटना पड़े ।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पांचवें शरीर में मृत व्यक्ति अयोनिज

मनुष्ययोनि चौराहे पर है, वहां से सब यात्राएं संभव है। मनुष्ययोनि पर जो आदमी पांचवें शरीर को उपलब्ध हो जाये, उसको फिर कहीं भी नहीं जाना पड़ता; फिर वह अयोनि में प्रवेश करता है – वह योनिमुक्त होता है।

योनि का मतलब ख्याल में है न ? किसी मां कि योनि में प्रवेश से मतलब है योनि का। वह किसी वर्ग की मां हो। गर्भ-प्रवेश से मतलब है योनि का। तो वह कोई गर्भ-प्रवेश नहीं करता। जो अपने को उपलब्ध हो गया, उसकी यात्रा एक अर्थ में समाप्त हो गयी। यह जो पांचवें शरीर का व्यक्ति है, इसी को हम कहते हैं – मुक्ति, मोक्ष। लेकिन अगर यह अपने पर तृप्त हो जाये, रुक जाये तो रुक सकता है – अनंतकाल तक रुक सकता है; क्योंकि यहां न दुख है, न सुख है; न बंधन है, न पीड़ा है; यहां कुछ भी नहीं है। लेकिन सिर्फ स्वयं का होना है यहां, सर्व का होना नहीं है। तो अनंत समय तक भी कोई व्यक्ति इस स्थिति में पड़ा रह सकता है जब तक कि उसमें सर्व को जानने की जिज्ञासा न उठ जाये। है वह जिज्ञासा का बीज हमारे भीतर, इसलिए वह उठ आती है।

जिज्ञासा परम होनी चाहिए

और इसलिए साधक अगर पहले से ही सर्व को जानने की जिज्ञासा रखे, तो पांचवीं योनि में रुकने की असुविधा से बच जाता है। इसलिए अगर पूरी की पूरी साइंस को तुम समझोगे तो पहले से ही जिज्ञासा परम होनी चाहिए। कहीं बीच के किसी ठहराव को अगर तुम मंजिल समझ कर चले, तो जब वह तुम्हें मिल जायेगी मंजिल तो तुम्हारा मन होगा कि बात खत्म हो गयी।

पांचवें शरीर में अहंकार से मुक्ति, अस्मिता से बंधन

तो पांचवें शरीर के व्यक्ति को कोई योनि नहीं लेनी पड़ती। लेकिन वह स्वयं में बंधा रह जाता है – सबसे छूट जाता है, स्वयं में बंधा रह जाता है; अस्मिता से नहीं छूटता, अहंकार से छूट जाता है। क्योंकि अहंकार जो था, वह सदा दूसरे के खिलाफ दावा था।

इसको ठीक से समझ लेना... जब मैं कहता हूं – 'मैं', तो मैं किसी 'तू' को दबाने के लिए कहता हूं। इसलिए जब मैं किसी 'तू' को दबा लेता हूं तो मेरा 'मैं' बहुत अकड़कर प्रगट होता है और जब कोई 'तू' मुझे दबा देता है तो मेरा मैं बहुत दीनहीन हो जाता है। वह 'मैं' जो है, वह 'तू'

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri

Digitized by Madhuban Trust

को दबाने का प्रयास है।

तो अहंकार जो है वह सदा दूसरे की अपेक्षा में है। दूसरा तो खत्म हो गया, दूसरे से अब कोई लेना-देना नहीं है, उससे कोई अपेक्षा न रही; अस्मिता जो है वह अपनी अपेक्षा में है।

अहंकार और अस्मिता में इतना ही फर्क है – 'तू' से कोई मतलब नहीं है मुझे, लेकिन फिर भी 'मैं' तो हूं। यह दावा नहीं है 'मैं' का अब, लेकिन मेरा होना तो है ही। अब मैं किसी 'तू' के खिलाफ नहीं कह रहा हूं 'मैं', लेकिन हूं 'मैं' हूं... बिना किसी 'तू' की अपेक्षा के।

इसलिए मैंने कहा – अहंकार कहेगा 'मैं', और अस्मिता कहेगी 'हूं'। उतना फर्क होगा। 'मैं हूं' में दोनों बातें हैं। 'मैं' अहंकार है और 'हूं' अस्मिता है। द फीलिंग ऑफ आइनेस (अस्मिता का अनुभव) – 'तू' के खिलाफ नहीं, अपने पक्ष में... मैं हूं।

दुनिया में कोई आदमी न रह जाये – तीसरा महायुद्ध हो और सब लोग मर जायें, और मैं रह जाऊं। तो मेरे भीतर अहंकार नहीं रह जायेगा, लेकिन अस्मिता होगी। मैं जानूंगा कि मैं हूं। हालांकि मैं किसी से न कह सकूंगा कि 'मैं', क्योंकि कोई 'तू' नहीं बचा जिससे मैं कह सकूं। तो जब बिलकुल तुम अकेले हो और कोई भी दूसरा नहीं है, तब भी तुम 'हो' – होने के अर्थ में।

तो पांचवें शरीर पर अहंकार तो विदा हो जाता है। इसलिए सबसे बड़ी कड़ी जो बंधन की है वह गिर जाती है, लेकिन अस्मिता रह जाती है, 'हूं' का भाव रह जाता है – मुक्त, स्वतंत्र, कोई बंधन नहीं, कोई सीमा नहीं। लेकिन अस्मिता की अपनी सीमा है – दूसरे की कोई सीमा नहीं रही, लेकिन अस्मिता की अपनी सीमा है। छठवें शरीर पर अस्मिता टूटती है, या छोड़ी जाती है। और छठवां शरीर जो है वह कॉज़मिक बॉडी है।

द्विज अर्थात ब्रह्मज्ञानी

पांचवें शरीर के बाद योनि का सवाल समाप्त हो गया, लेकिन जन्म अभी बाकी हैं। इस फर्क को भी ख्याल में ले लेना : एक जन्म तो योनि से होता है, किसी के गर्भ से होता है, और एक जन्म अपने ही गर्भ से होता है। इसलिए इस मुल्क में हम ब्राह्मण को द्विज कहते हैं। असल में ब्रह्मज्ञानी को कहते थे कभी, ब्राह्मण को कहने की कोई ज़रूरत नहीं है; ब्रह्मज्ञानी को द्विज कहते थे।

एक और तरह का जन्म है – ट्वाइस बार्न (दुबारा-जनमा)। एक जन्म तो वह है जो गर्भ से मिलता है, वह दूसरे से मिलता है; और एक ऐसा जन्म

CC-0. Public Domain. Vinod Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

भी है, जो फिर अपने से ही... क्योंकि जब आत्म शरीर उपलब्ध हो गया, अब तुम्हें दूसरे से जन्म कभी नहीं मिलेगा; अब तो तुम्हें अपने ही आत्म शरीर को जन्माना होगा, कॉज़मिक बॉडी में। और यह तुम्हारी अंतर्यात्रा है : अब तुम्हारा अंर्तगर्भ है और अंतरयोनि है। अब इसका बाह्य-योनि से और बाह्य-गर्भ से कोई संबंध नहीं है। अब तुम्हारे कोई माता-पिता न होंगे, अब तुम्हीं पिता और तुम्हीं माता और तुम्हीं पुत्र बनोगे। अब यह बिलकुल निपट अकेली यात्रा है।

तो इस स्थिति को, पांचवें शरीर से छठवें शरीर में जब प्रवेश हो, तब कहना चाहिए कोई व्यक्ति द्विज हुआ, उसके पहले नहीं। उसका दूसरा जन्म हुआ जो अयोनिज है, जिसमें योनि नहीं है; और जिसमें परगर्भ नहीं है, जो आत्मगर्भ है।

उपनिषद का ऋषि कहता है कि उस गर्भ के ढक्कन को खोल वह जो तूने स्वर्ण-पात्रों से ढंक रखा है; उस गर्भ के ढक्कन को खोल वह जो तूने स्वर्ण के परदों से ढंक रखा है। परदे जरूर वहां स्वर्ण के हैं – यानी परदे ऐसे हैं कि उन्हें तोड़ने का मन न होगा; परदे ऐसे हैं कि बचाने की तबीयत होगी।

अस्मिता सबसे ज़्यादा कीमती परदा है जो हमारे ऊपर है; उसे हम ही न छोड़ना चाहेंगे, कोई दूसरा बाधा देनेवाला नहीं होगा – कोई कहेगा नहीं कि रोको, कोई रोकनेवाला नहीं होगा। लेकिन परदा ही इतना प्रीतिकर है 'अपने होने का'... कि उसे छोड़ न पाओगे। इसलिए ऋषि कहता है, स्वर्ण के परदों को हटा... और उस गर्भ को खोल, जिससे व्यक्ति द्विज हो सके। तो ब्रह्मज्ञानी को द्विज... ब्रह्मज्ञानी का मतलब छठवें शरीर पानेवाले को...

पांचवें शरीर से छठवें शरीर की यात्रा ट्वाइस बार्न, द्विज होने की यात्रा है। और गर्भ बदला, योनि बदली, अब सब अयोनिज हुआ, और गर्भ अपना हुआ – आत्मगर्भा हुए हम।

पांचवें से छठवें में जन्म है, और छठवें से सातवें में मृत्यु है, इसलिए उसको द्विज नहीं कहा; उसको द्विज कहने का कोई मतलब नही है; क्योंकि... अब मेरा मतलब समझे तुम ? अब समझना आसान हो जायेगा।

पांचवें से छठवें को हम कहते हैं – जन्म अपने से; छठवें से सातवें को हम कहते हैं – मृत्यु अपने से। दूसरों से जन्म लिये थे – दूसरों की योनियों से, दूसरों के शरीरों से; वह मृत्यु भी दूसरों की थी, इसे थोड़ा समझना पड़ेगा।

परयोनि से जन्मे व्यक्ति की मृत्यु भी परायी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

जब जन्म दूसरे से था, तो मृत्यु तुम्हारी कैसे हो सकती है ? जन्म तो

Digitized by Madhuban Trust

मैं लूंगा अपने माता-पिता से, और मरूंगा मैं ? ये कैसे हो सकता है ? ये दोनों छोर असंगत हो जायेंगे । ये दोनों छोर असंगत हो जायेंगे : जब जन्म पराया है, तो मृत्यु मेरी नहीं हो सकती; जब जन्म दूसरे से मिला है, तो मृत्यु भी दूसरे की है । फर्क इसलिए है... कि उस बार मैं एक योनि से प्रकट हुआ था, इस बार दूसरी योनि में प्रवेश करूंगा, इसलिए पता नहीं चल रहा; उस वक्त आया था तो दिखाई पड़ गया था, अब जा रहा हूं तो दिखाई नहीं पड़ रहा । समझ रहे हो न तुम ? जन्म जो है उसके पहले मृत्यु है । कहीं तुम मरे थे, कहीं तुम जन्मे हो । जन्म दिखाई पड़ता है, तुम्हारी मृत्यु का हमें पता नहीं ।

अब तुम्हें एक जन्म मिला एक मां-बाप से – एक शरीर मिला, एक देह मिली – एक सत्तर साल, सौ साल दौड़नेवाला एक यंत्र मिला । यह यंत्र सौ साल बाद गिरेगा । इसका गिरना उसी दिन से सुनिश्चित हो गया, जिस दिन तुम जन्मे – गिरना... कब गिरेगा, नहीं उतना महत्त्वपूर्ण है – गिरना । जन्म के साथ ही तय हो गया है कि तुम मरोगे । जिस योनि से तुम जन्म लाये उसी योनि से तुम मृत्यु भी ले आये – साथ ही ले आये ।

असल में जन्म देनेवाली योनि में मृत्यु छिपी ही है, सिर्फ फासला पड़ेगा सौ साल का । इस सौ साल में तुम एक छोर से दूसरे छोर की यात्रा पूरी करोगे । और जिस जगह से तुम आये थे, ठीक उसी जगह वापस लौट जाओगे । तो जो जन्म दूसरे की योनि से हुआ है, वह मृत्यु भी दूसरे की ही योनि से जन्मे शरीर की है; वह मृत्यु भी परायी है । तो न तो तुम जन्मे हो अभी, और न तुम मरे हो कभी; जन्म में भी दूसरा माध्यम था, मृत्यु में भी दूसरा ही माध्यम होने को है ।

पांचवें शरीर से जब तुम छठवें शरीर में, ब्रह्म शरीर में प्रवेश करोगे आत्म शरीर से तो तुम पहली दफा जन्मोगे, आत्मगर्भा बनोगे, अयोनिज तुम्हारा जन्म होगा, लेकिन तब एक अयोनिज मौत भी आगे प्रतीक्षा करेगी; और यह जन्म जहां तुम्हें ले जायेगा, मृत्यु तुम्हें वहां से भी आगे ले जायेगी; क्योंकि जन्म तुम्हें ब्रह्म में ले जायेगा, मृत्यु तुम्हें निर्वाण में ले जायेगी ।

छठवें शरीर की चेतनाएं अवतार, ईश्वर-पुत्र व तीर्थंकर

यह जन्म बहुत लंबा हो सकता है, यह जीवन अंतहीन हो सकता है । जिनको हम ईश्वर कहें, ऐसा व्यक्ति अगर टिका रहेग तो ईश्वर बन जायेगा; ऐसी चेतना अगर कहीं रुकी रह जायेगी तो अरबों लोग उसे पूजेंगे, उसके प्रति प्रार्थनाएं प्रेषित की जायेंगी । जिनको हम अवतार कहते, ईश्वर कहते,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection. Deoghar.

Digitized by Madhuban Trust

ईश्वर-पुत्र कहते, वे पांचवें शरीर से छठवें शरीर में गये हुए लोग हैं; तीर्थंकर कहते, वे सब छठवें शरीर में गये हुए लोग हैं। यदि ये चाहें तो इस छठवें शरीर में ये अनंत काल तक रुक सकते हैं। इस जगह से ये बड़े उपकार भी कर सकते हैं। हानि का तो अब कोई उपाय नहीं, कोई सवाल भी नहीं है। इस जगह से ये बड़े गहरे सूचक बन सकते हैं। और इस तरह के लोग हैं इस छठवें शरीर में जो निरंतर प्रयास करते रहते हैं पीछे की यात्रीयों के लिए; बहुत तरह के प्रयास करते रहते हैं। इस छठवें शरीर से चेतनाएं बहुत तरह के संदेश भी भेजती रहती हैं।

और इन छठवें शरीर के लोगों को, जिनको इनका थोड़ा सा बोध हो जायेगा, वे इनको भगवान से नीचे तो रखने का कोई उपाय नहीं है। भगवान वे हैं ही। उनके भगवान होने में कोई कमी नहीं रह गयी, अब ब्रह्म शरीर उन्हें उपलब्ध है।

जीते जी भी इसमें कोई प्रवेश कर जाता है; जीते जी भी कोई पांचवें से छठवें में प्रवेश कर जाता है। यह शरीर भी मौजूद है। और जब जीते जी कोई पांचवें से छठवें में प्रवेश कर जाता है, तो हम उसे बुद्ध और महावीर, राम और कृष्ण और क्राइस्ट बना लेते हैं – जिनको दिखाई पड़ जाता है, वे ही बना लेते है; जिनको नहीं दिखाई पड़ता, उनका तो कोई सवाल ही नहीं।

बुद्ध, गांव में एक आदमी को दिखाई पड़ता है कि वे ईश्वर हो गये, और दूसरे आदमी को दिखाई पड़ता है – कुछ भी नहीं, साधारण तो आदमी है। हमारे जैसे उनको सर्दी-जुकाम भी होता है; हमारे जैसे वे बीमार भी पड़ते हैं; हमारे जैसे भोजन भी करते हैं; हमारे जैसे चलते-सोते भी हैं; हमारे जैसे मरते भी हैं, तो हममें-उनमें फर्क क्या है ? फिर जिनको दिखाई पड़ता है, जिनको नहीं दिखाई पड़ता है – उनकी भीड़ सदा बड़ी है, जिनको नहीं दिखाई पड़ता। जिनको दिखाई पड़ता है, वे पागल मालूम पड़ते हैं। और बेचारे पागल दिखते भी हैं, क्योंकि उनके पास कोई इविडेंस (सबूत) भी तो नहीं है।

असल में दिखाई पड़ने के लिए कोई इविडेंस (प्रमाण) नहीं होता। अब यह माइक मुझे दिखाई पड़ रहा है, और अगर आपको... यहां किसी को दिखाई न पड़े, तो मैं और क्या इविडेंस दूंगा कि यह दिखाई पड़ रहा है – मैं कहूंगा, दिखाई पड़ रहा है और मैं पागल हो जाऊंगा; क्योंकि जब सबको नहीं दिखाई पड़ रहा है, और आपको दिखाई पड़ रहा है तो आपका दिमाग खराब है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तीर्थंकर को पहचानना मुश्किल

ज्ञान को भी हम बहुत गहरे अर्थ में गणना से नापते हैं। उसका भी मतदान है, वोटिंग है उसका भी।

तो बुद्ध किसी को दिखाई पड़ते हैं – भगवान हैं; किसी को दिखाई पड़ते हैं – नहीं हैं। जिसको दिखाई पड़ते हैं – नहीं; वह कहता है : क्या पागलपन कर रहे हो, यह बुद्ध वही है जो शुद्धोधन का बेटा है, फलाने का लड़का है; फलानी इसकी मां थी, फलानी इसकी बहू है – वही तो है, यह कोई और तो नहीं है। बुद्ध के बाप तक को नहीं दिखाई पड़ता कि यह आदमी कुछ और हो गया, वे भी यही समझते हैं कि मेरा बेटा है, और वे भी कहते हैं कि तू कहां की नासमझी में पड़ा है, घर वापस लौट आ ! ये सब तू क्या कर रहा है ? राज्य सब बर्बाद हो रहा है, मैं बूढ़ा हुआ जा रहा हूं, अब तू वापिस लौट आ, अब संभाल ले सब। उनको भी नहीं दिखाई पड़ता कि अब यह किस राज्य का मालिक हो गया। पर जिसको दिखाई पड़ता है उसके लिए यह है। उसके लिए तीर्थंकर हो जायेगा, भगवान हो जायेगा, ईश्वर का बेटा हो जायेगा – कुछ भी हो जायेगा। वह कोई नाम चुनेगा, जो छठवें शरीर के आदमी के लिए इस स्थिति में भी दिखाई पड़ने लगेगा।

छठवें शरीर के सीमांत पर निर्वाण की झलक

सातवां शरीर जो है, वह इस शरीर में कभी उपलब्ध नहीं होता। इस शरीर में सातवां शरीर कभी उपलब्ध नहीं होता। इस शरीर में हम छठवें शरीर के सीमांत पर खड़े भर हो सकते हैं – ज़्यादा से ज़्यादा; जहां से सातवां शरीर दिखाई पड़ने लगता है... वह छलांग, वह गड्ढ, वह एबिस, वह इटरनिटि (अनंतता) दिखाई पड़ने लगती है; वहां हम खड़े हो सकते हैं।

इसलिए बुद्ध के जीवन में दो निर्वाण की बात कही जाती है जो बड़ी कीमत की है। एक निर्वाण तो वह, जो उन्हें बोधिवृक्ष के नीचे, निरंजना के तीर पर हुआ – मरने के चालीस साल पहले। इसे कहा जाता है 'निर्वाण'। इस दिन वे उस सीमांत पर खड़े हो गये। और इस सीमांत पर वे चालीस साल खड़े ही रहे – इसी सीमांत पर। दूसरा जिस दिन उनकी मृत्यु हुई, उस दिन कहा जाता है, वह हुआ 'महापरिनिर्वाण'; उस दिन वे उस सातवें में प्रवेश कर गये।

इसलिए मरने के पहले उनसे कोई पूछता है कि तथागत का मृत्यु के बाद क्या होगा ? तो बुद्ध कहते हैं, तथागत नहीं होंगे। लेकिन यह मन को भरता नहीं है हमारे। फिर-फिर उनके भक्त उनसे पूछते हैं कि बुद्ध... जब

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Dehradun

Digitized by Madhuban Trust

महानिर्वाण होता है बुद्ध का, तो फिर क्या होता है ? तो बुद्ध कहते हैं, जहां सब होना बंद हो जाता है उसी का नाम महापरिनिर्वाण है । जब तक कुछ होता रहता है, तब तक छठवां, तब तक अस्तित्व, फिर अनस्तित्व ।

तो बुद्ध अब नहीं होंगे । अब कुछ भी नहीं बचेगा । अब तुम समझना कि वे कभी थे ही नहीं । वे ऐसे ही विदा हो जायेंगे जैसे स्वप्न विदा हो जाता है । वे ऐसे ही विदा हो जायेंगे, जैसे रेत पर खिंची रेखा हवा के झोंके में साफ हो जाती; जैसे पानी पर लकीर खींचते हैं और खींच भी नहीं पाते और विदा हो जाती – ऐसे ही वे खो जायेंगे; अब कुछ भी नहीं होगा ।

मगर यह मन को भरता नहीं । हमारा मन करता है – कहीं, कहीं, कहीं – किसी तल पर, कहीं किसी कोने में – दूर, कितने ही दूर, लेकिन... हों – किसी रूप में हों, अरूप हो जायेगा; आकार में हों, निराकार हो जायेगा; शब्द में हों, निशब्द हो जायेगा; सत्व में हों, तो शून्य हो जायेगा ।

सातवें शरीर के बाद की फिर कोई खबर देने का उपाय नहीं है । सीमांत पर खड़े हुए लोग हैं जो सातवें शरीर को देखते हैं, उस गड्ढे को देखते हैं, लेकिन उस गड्ढ में जाकर खबर देने का कोई उपाय नहीं है । इसलिए सातवें शरीर के संबंध में सब खबरें सीमा के किनारे खड़े हुए लोगों की खबरें हैं – गये हुए की कोई खबर नहीं है, क्योंकि कोई उपाय नहीं । जैसे कि हम पाकिस्तान की सीमा पर खड़े होकर देखें और कहें कि वहां एक मकान है, और एक दूकान है, और एक आदमी खड़ा है, और एक वृक्ष है, और सूरज निकल रहा है, लेकिन यह खड़ा है आदमी हिंदुस्तान की सीमा में ।

सातवें शरीर में महामृत्यु

छठवें से सातवें में महामृत्यु है । और, तुम बड़े हैरान होओगे जानकर... कि बहुत प्राचीन समय में आचार्य का मतलब यह होता था कि जो मृत्यु सिखाये, जो महामृत्यु सिखाये । ऐसे सूत्र हैं, जो कहते हैं – आचार्य यानी मृत्यु । इसलिए नचिकेता जब पहुंच गया है यम के पास, तो वह ठीक आचार्य के पास पहुंच गया है । वह... वह मृत्यु ही सिखा सकता है यम, और कुछ सिखा सकता नहीं – जहां मिटना सिखाया जाये, जहां टूटना और समाप्त होना सिखाया जाये ।

पर इसके पहले एक जन्म आवश्यक है, क्योंकि अभी तो तुम हो ही नहीं । और जिसे तुमने समझा है कि तुम हो, वह तो बिलकुल उधार है, वह बारोड है, वह तुम्हारा आस्तित्व नहीं । इसे तुम अगर खोओगे भी तो तुम इसके

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

मालिक न थे – यानी मामला ऐसा है कि जैसे मैं कोई चीज चुरा लूं और फिर मैं उसका दान कर दूं। वह चीज मेरी थी नहीं, तो दान मेरा कैसे होगा ? तो जो मेरा नहीं है उसे तो मैं दे भी नहीं सकता।

इसलिए यहां इस जगत में जिसको हम त्यागी कहते हैं वह त्यागी नहीं है; क्योंकि वह उसे छोड़ रहा है जो उसका था नहीं। और जो तुम्हारा था नहीं उसके छोड़नेवाले तुम कैसे हो सकते हो ? और जो तुम्हारा था नहीं उसको तुमने छोड़ा, यह दावा पागलपन का है।

त्याग घटित होता है छठवें शरीर से सातवें में प्रवेश से; रिनन्सीएशन (परित्याग) वहां है, क्योंकि वहां तुम वही छोड़ते हो जो तुम हो। और कुछ तो तुम्हारे पास बचता नहीं – तुम्हीं हो, उसी को तुम छोड़ते हो। इसलिए त्याग की घटना तो सिर्फ एक ही है, वह है छठवें से सातवें शरीर में प्रवेश की। उसके पहले तो हम बच्चों की बातें कर रहे हैं।

जो आदमी कह रहा है मेरा है, वह पागलपन की बातें कर रहा है; जो कह रहा है कि जो भी मेरा था वह मैंने छोड़ दिया है, वह भी पागलपन की बातें कर रहा है; क्योंकि दावेदार वह अब भी है कि वह मेरा था और मैं मानता था कि मेरा था – और अब मैंने किसी और को दे दिया, और अब वह उसका हो गया है। हमारे तो सिर्फ हम हैं, लेकिन उसका हमें कोई पता नहीं है।

इसलिए पांचवें से छठवें में तुम्हें पता चलेगा कि तुम कौन हो, और छठवें से सातवें में तुम त्याग कर सकोगे उसका जो तुम हो। और जिस दिन कोई उसका त्याग कर पाता है जो वह है, उसके बाद फिर कुछ पाने को शेष नहीं रह जाता, कुछ खोने को शेष नहीं रह जाता। उसके बाद तो कोई सवाल ही नहीं है। उसके बाद अनंत सन्नाटा और चुप्पी है। उसके बाद हमारे पास... यह भी हम नहीं कह सकते कि आनंद है, यह भी नहीं कह सकते कि शांति है, यह भी नहीं कह सकते कि सत्य है; असत्य है, प्रकाश है – कुछ भी नहीं कह सकते।

यह सातवें शरीर की स्थिति होगी।

पांचवें शरीर का मिलना और जागना एक ही बात

प्रश्न : स्थूल शरीर के जीवित रहते अगर पांचवां शरीर उपलब्ध हुआ तो मृत्यु के बाद वह व्यक्ति फिर कौन से शरीर में जन्म लेगा ?

पांचवें शरीर के बाद अगर पांचवां शरीर मनुष्य शरीर में उपलब्ध हुआ, और पांचवां शरीर बिना जागृत हुए उपलब्ध नहीं होता, अगर तुम जाग गये

CC-0. Public Domain. Vinin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

पांचवें शरीर में, जागे बिना उपलब्ध नहीं होता, तो पांचवें शरीर का मिलना और जागना एक ही बात है। फिर तुम्हें पहले शरीरों की कोई जरूरत नहीं, अब तो तुम पांचवें शरीर से ही काम कर सकते हो। तुम जागे हुए आदमी हो, अब कोई कठिनाई नहीं है। अब तुम्हें पहले शरीरों की कोई जरूरत नहीं। यह तो चौथे शरीर तक सवाल बना रहेगा सदा।

अगर चौथे शरीर में देवता हो गया एक आदमी, अगर चौथा शरीर सक्रिय हो गया और जाग गया – चौथा शरीर निष्क्रिय रहा, सोया रहा, तो प्रेत हो गया। इन दोनों स्थितियों में तुम्हें वापस लौटना पड़ेगा, क्योंकि तुम्हें अभी अपने स्वरूप का कोई पता नहीं चला, अभी तो तुम्हें स्वरूप का पता लगाने के लिए भी 'पर' की ज़रूरत है। उस 'पर' के ही आधार पर तुम अभी 'स्व' का पता लगा पाओगे। अभी तो अपने को पहचानने के लिए तुम्हें दूसरे की ज़रूरत है। अभी दूसरे के बिना तुम अपने को भी न पहचान पाओगे। अभी तो दूसरा ही तुम्हारी सीमा बनायेगा और तुम्हें पहचानने का कारण बनेगा।

तो इसलिए चौथे शरीर तक तो कोई भी स्थिति में जन्म लेना पड़ेगा। पांचवें शरीर के बाद जन्म की कोई ज़रूरत नहीं है; अर्थ भी नहीं है, पांचवें शरीर के बाद तुम्हारा होना इन सब चार शरीरों के बिना हो जायेगा। लेकिन, पांचवें शरीर से भी अभी एक और नये तरह के जन्म की बात शुरू होती है, वह छठवें शरीर में प्रवेश की। वह दूसरी बात है, उसके लिए इन शरीरों की कोई भी ज़रूरत नहीं है।

तीर्थंकर को वासना बांधनी पड़ती है

प्रश्न : तीर्थंकर यदि जन्म लेना चाहेंगे तो स्थूल शरीर में लेंगे न ?

अब यह जो मामला है, यह बहुत दूसरी बात हुई। यह जो बात है न, यह बिलकूल दूसरी बात है। थोड़ी सी बात कर लें। अगर, तीर्थंकर को जन्म लेना हो , जैसा कि तीर्थंकर जन्म लेता है, तो एक बड़ी मजे की बात है... और वह यह है कि मरने के पहले उसे चौथे शरीर को छोड़ना नहीं पड़ता – और न छोड़ने का एक उपाय है, और उसकी विधि है – और वह है तीर्थंकर होने की वासना।

तो चौथा शरीर जब छूट रहा हो तब एक वासना बचा लेनी पड़ती है, ताकि चौथा न छूटे। चौथे के छूटने के बाद तो जन्म ले नहीं सकते, फिर तो तुम्हारा सेतु टूट गया जिससे तुम आ सकते थे।

तो चौथे शरीर के पहले तीर्थंकर होने की वासना को बचाना पड़ता है। इसलिए सभी लोग, तीर्थंकर होने के योग्य लोग तीर्थंकर नहीं होते। बहुत से

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तीर्थंकर होने योग्य लोग सीधे यात्रा पर निकल जाते हैं – थोड़े से लोग... और इसलिए उनकी संख्या भी तय कर रखी है। वह संख्या तय करने का कारण है कि उतने से काम चल जाता है, उतने से ज़्यादा लोगों को वैसी वासना रखने की कोई जरूरत नहीं। उसकी संख्या तय कर रखी है कि इतने युग के लिए इतने तीर्थंकर काफी हो जायेंगे; इतने आदमी के लिए इतने तीर्थंकर काफी पड़ेंगे।

तो तीर्थंकर की वासना बांधनी पड़ती है। और उस वासना को बड़ी तीव्रता से बांधना पड़ता है, क्योंकि वह आखिरी वासना है... और जरा छूट जाये हाथ से तो बात गयी। तो दूसरों को मैं सिखाऊंगा, दूसरों को मैं बताऊंगा, दूसरों को मैं समझाऊंगा, दूसरों के लिए मुझे आना है, वह एक... चौथे शरीर में उतनी वासना का बीज प्रबल होना चाहिए। अगर वह प्रबल है तो उतरना हो जायेगा। पर उसका मतलब यही हुआ कि अभी चौथे शरीर को छोड़ा नहीं – पांचवें शरीर पर पैर रख लिया है, लेकिन चौथे शरीर पर एक खूंटी गाड़ रखी है। वह इतनी शीघ्रता से उखड़ती है कि अक्सर मुश्किल मामला है बहुत।

तीर्थंकर बनाने की प्रक्रिया

इसलिए तीर्थंकर बनाने की प्रॉसेस (प्रक्रिया) है। और इसलिए तीर्थंकर स्कूल्स (परंपरा) में बनते हैं, वे इंडीविजुअल्स (वैयक्तिक) नहीं हैं। जैसे कि एक स्कूल (समूह) साधना कर रहा है, कुछ साधक लोग साधना कर रहे हैं, और उनमें वे एक आदमी को पाते हैं जिसमें कि शिक्षक होने की पूरी योग्यता है – जो, जो जानता है उसे कह सकता है; जो, जो जानता है उसे बता सकता है; जो, जो जानता है उसे दूसरे तक कम्युनिकेट (संप्रेषित) कर सकता है, तो वह स्कूल उसके चौथे शरीर पर खूंटियां गाड़ना शुरू कर देगा और उसको कहेगा कि तुम चौथे शरीर की फिक्र करो – यह चौथा शरीर खत्म न हो जाये; क्योंकि तुम्हारा यह चौथा शरीर काम पड़ेगा, इसको बचा लो। और इसको बचाने के उपाय सिखाये जायेंगे। और इसको बचाने के लिए उतनी मेहनत करनी पड़ती है, जितना छोड़ने के लिए नहीं करनी पड़ती।

तीर्थंकर का करुणावश पुनर्जन्म लेना

क्योंकि छोड़ना तो एकदम सरलता से हो जाता है। और जब सब नावों की खूटियां उखड़ गयी हों, और पाल खिंच गया हो, और हवा भर गयी हो,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

और दूर का सागर पुकार रहा हो, और आनंद ही आनंद हो, तब वह जो एक खूंटी है, उसको रोकना कितना कठिन है, उसका हिसाब लगाना मुश्किल है।

इसलिए तीर्थंकर को हम कहते हैं – तुम महा करुणावान हो। उसका और कोई कारण नहीं है; क्योंकि उसकी करुणा का बड़ा हिस्सा तो यही है कि जब उसे जाना था, जब जाने की सब तैयारी पूरी हो गयी थी, तब वह उनके लिए रुक गया है जो तट पर अभी हैं, और जिनकी नावें अभी तैयार नहीं हैं। उसकी नाव बिलकुल तैयार थी। अब वह उस तट के कष्ट झेल रहा है, उस तट की धूल भी झेल रहा है, और उस तट की गालियां भी झेल रहा हैं, उस तंट के पत्थर भी झेल रहा है – और उसकी नाव बिलकुल तैयार थी, और वह कभी भी जा सकता था। वह नाहक रुक गया है इन सबके बीच। और ये सब उसे मार भी सकते हैं, हत्या भी कर सकते हैं। तो उसकी करुणा का कोई अंत नहीं, लेकिन उस करुणा कि वासना स्कूल (लंबी परंपरा) में पैदा होती है... इंडिविजुअल (व्यक्तिगत) साधक तो कभी तीर्थंकर नहीं हो पाते। वह तो बाद में... उनको पता ही नहीं चलता, कब खूंटी उखड़ जाती है – जब नाव चल पड़ती है तब उनको पता चलता है कि यह तो गया मामला; वह तट दूर छूटा जा रहा है। इसलिए खूंटी के लिए बहुत और तरह का...

तीर्थंकर के अवतरण में अन्य जागृत लोगों का योगदान

और इस सबकी सहायता के लिए जैसा मैंने कहा कि छठवें शरीर को जो लोग उपलब्ध हैं – जिनको हम ईश्वर कहें – छठवें शरीर को जो लोग उपलब्ध है, वे भी कभी इसमें सहयोगी होते हैं – किसी व्यक्ति को इस योग्य पाकर... कि इसको अभी ...इसको अभी तट से नहीं छूटने देना है, वे हज़ार तरह के प्रयास करते हैं। इसके लिए देवता भी सहयोगी होते हैं – जैसा मैंने कहा कि वे शुभ में सहयोगी होंगे – वे हज़ार प्रयास करते हैं; इस आदमी को प्रेरणा देते हैं कि ये खूंटी एक बचा लेना। यह खूंटी हमे दिखाई पड़ती है, तुम्हें दिखाई नहीं पड़ती, लेकिन उसको तुम बचा लेना।

तो जगत एकदम अनार्किक (बेनियम) नहीं है; अव्यवस्था नहीं है, उसमें बड़ी गहरी व्यवस्थाएं हैं; और व्यवस्थाओं के भीतर व्यवस्थाएं है। और कई दफा बहुत तरह की कोशिश की जाती है, फिर भी गड़बड़ हो जाती है। जैसे कृष्णमूर्ति के संबंध में खूंटी गाड़ने की बहुत कोशिश की गई, वह नहीं हो सका। एक पूरा स्कूल बहुत मेहनत किया, वह खूंटी गाड़ने की कोशिश थी, वह नहीं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

हो सका। वह प्रयास असफल चला गया। उसमें पीछे से भी लोगों का हाथ था। उसमें दूरगामी आत्माओं का हाथ भी था। उसमें छठवें शरीर के लोगों का हाथ भी था, पांचवें शरीर के लोगों का हाथ भी था, उसमें चौथे शरीर के जागृत लोगों का भी हाथ था। और उसमें हज़ारों लोगों का हाथ था। और यह कोशिश थी... कृष्णमूर्ति को चुना गया था – और दो-चार बच्चे चुन गये थे... जिनसे संभावना थी की जिनको तीर्थंकर बनाया जा सके। चूक गयी वह बात, नहीं हो सकी; वह खूंटी नहीं गाड़ी जा सकी। इसलिए कृष्णमूर्ति से तीर्थंकरों का जो फायदा मिल सकता था जगत को, वह नहीं मिल सका। मगर वह दूसरी बात है, उससे कोई... उससे कोई यहां मतलब नहीं है।

बंबई, रात्रि, दिनांक 10 जुलाई, 1970.

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

बारहवीं प्रश्नोत्तर चर्चा

तंत्र के गुह्य आयामों में

प्रश्न : आपने कहा है कि पांचवें शरीर में पहुंचने पर साधक के लिए स्त्री और पुरुष का भेद समाप्त हो जाता है। यह उसके प्रथम चार शरीरों के पॉज़ीटिव और निगेटिव विद्युत के किस समायोजन से घटित होता है ?

भीतर के पुरुष अथवा स्त्री से मिलन

स्त्री और पुरुष शरीरों के संबंध में पहला शरीर स्त्री का स्त्रैण है, लेकिन दूसरा उसका शरीर भी पुरुष का ही है। और ठीक इससे उलटा पुरुष के साथ है। तीसरा शरीर फिर स्त्री का है, चौथा शरीर फिर पुरुष का है।

मैंने पीछे कहा कि स्त्री का शरीर भी आधा शरीर है और पुरुष का शरीर भी आधा शरीर है – इन दोनों को मिलाकर ही पूरा शरीर बनता है। यह मिलन दो दिशाओं में संभव है। पुरुष का शरीर – पहला शरीर – अपने से बाहर स्त्री के पहले शरीर से मिले तो एक यूनिट, एक इकाई पैदा होती है। इस इकाई से प्रकृति की संतति का, प्रकृति के जन्म का काम चलता है। यदि अंतर्मुखी हो सके पुरुष या स्त्री, तो उनके भीतर के पुरुष से या स्त्री से मिलन होता है और एक दूसरी यात्रा शुरू होती है जो परमात्मा की दिशा में है। बाहर के शरीर-मिलन से जो यात्रा शुरू होती है जो प्रकृति की दिशा में है; भीतर के शरीर के मिलन से जो यात्रा होती है, वह परमात्मा की दिशा में है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पुरुष का पहला शरीर जब अपने ही भीतर के इथरिक बॉडी के स्त्री-शरीर से मिलता है, तो एक यूनिट बनता है; स्त्री का पहला शरीर जब अपने ही इथरिक शरीर के पुरुष-तत्व से मिलता है, तो एक यूनिट बनता है। यह यूनिट बहुत अदभुत है, यह इकाई बहुत अदभुत हैं; क्योंकि अपने से बाहर के स्त्री या पुरुष से मिलना क्षणभर के लिए ही हो सकता है। सुख क्षणभर का होगा और फिर छूटने का दुख बहुत लंबा होगा, इसलिए उस दुख में से फिर मिलने की आकांक्षा पैदा होती है। लेकिन मिलना फिर क्षणभर का होता है और फिर छूटना फिर लंबे दुख का कारण बन जाता है।

तो बाहर के शरीर से जो मिलन है वह क्षणभर को ही घटित हो पाता है, लेकिन भीतर के शरीर से जो मिलन है वह चिरस्थायी हो जाता है – वह एक बार मिल गया तो दूसरी बार टूटता नहीं। इसलिए भीतर के शरीर पर जब तक मिलन नहीं हुआ है तभी तक दुख है। जैसे ही मिलन हुआ तो सुख की एक अंतरधारा बहनी शुरू हो जाती है। वह सुख की अंतरधारा वैसे ही है, जैसे क्षणभर के लिए बाहर के शरीर से मिलने पर संभोग में घटित होती है। लेकिन वह इतनी क्षणिक है कि वह आ भी नहीं पाती कि चली जाती है। बहुत बार तो उस सुख का भी कोई अनुभव नहीं हो पाता, क्योंकि वह इतनी त्वरा, इतनी तेजी में घटना घटती है कि उसका कोई अनुभव भी नहीं हो पाता।

ध्यान : आत्मरति की प्रक्रिया

योग की दृष्टि से अगर अंतर्मिलन संभव हो जाये, तो बाहर संभोग की वृत्ति तत्काल विलीन हो जाती है; क्योंकि जिस आकांक्षा के लिए वह की जा रही थी, वह आकांक्षा तृप्त हो गयी है। मैथुन के जो चित्र मंदिरों की दीवालों पर खुदे हैं, वे अंतरमैथुन की ही दिशा में इंगित करनेवाले चित्र हैं।

अंतरमैथुन ध्यान की प्रक्रिया है... और इसलिए बहिरमैथुन और अंतरमैथुन में एक विरोध ख्याल में आ गया... और वह विरोध इसलिए ख्याल में आ गया कि जो भी अंतरमैथुन में प्रवेश करेगा उसके बाहर के जगत से यौन का सारा संबंध विच्छिन्न हो जायेगा। स्त्री जब अपने पहले शरीर से दूसरे शरीर से मिलेगी... तो यह भी समझ लेने जैसा है कि जब स्त्री अपने पहले शरीर से दूसरे शरीर से मिलेगी, तो जो यूनिट बनेगा दोनों के मिलने पर वह फिर स्त्रैण होगा – पूरा यूनिट; और पुरुष का पहला शरीर जब दूसरे शरीर से मिलेगा तो जो इकाई बनेगी वह फिर पुरुष की होगी – पूरा शरीर; क्योंकि जो प्रथम है वह द्वितीय को आत्मसात कर लेता है... जो प्रथम है, वह द्वितीय

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

को आत्मसात कर लेता है; दूसरा उसमें समाविष्ट हो जाता है।

लेकिन, अब ये स्त्री और पुरुष भी बहुत दूसरे अर्थों में हैं – उस अर्थों में नहीं, जैसा कि हम बाहर स्त्री-पुरुष को देखते हैं; क्योंकि बाहर जो पुरुष है वह अधूरा है, इसलिए सदा अतृप्त है; बाहर जो स्त्री है वह अधूरी है, इसलिए सदा अतृप्त है।

अगर हम जैविक विकास को खोजने जायें तो यह पता चलेगा कि जो प्राथमिक प्राणी है जगत में, उनमें स्त्री और पुरुष के शरीर अलग-अलग नहीं है। जैसे अमीबा है, जो कि प्राथमिक जीव है। अमीबा के शरीर में दोनों एकसाथ मौजूद हैं – स्त्री और पुरुष। उसका आधा हिस्सा पुरुष का है, आधा स्त्री का। इसलिए अमीबा से ज्यादा तृप्त प्राणी खोजना बहुत कठिन है। उसमें कोई अतृप्ति नहीं है। उसमें डिसकंटेंट (असंतोष) जैसी चीज पैदा नहीं होती, इसलिए वह विकास भी नहीं कर पाया; वह अमीबा अमीबा ही बना हुआ है।

तो बिलकुल जो प्राथमिक कड़ियां हैं बायोलॉजिकल (जैविक) विकास की, वहां भी शरीर दो नहीं हैं, वहां एक ही शरीर है – और दोनों हिस्से एक ही शरीर में समाविष्ट हैं।

आत्मरति से पूर्ण स्त्रीत्व और पूर्ण पुरुषत्व प्राप्त

स्त्री का पहला शरीर जब दूसरे से मिलेगा तो फिर एक नये अर्थों में स्त्री – जिसको हम पूर्ण स्त्री कहें, पैदा होगी। और पूर्ण स्त्री के व्यक्तित्व का हमें कोई अंदाज नहीं, क्योंकि हम जिस स्त्री को भी जानते हैं वे सभी अपूर्ण हैं; पूर्ण पुरुष का भी हमें कोई अंदाज नहीं, क्योंकि जितने पुरुष हम जानते हैं वे सब अपूर्ण हैं – वे सब आधे-आधे हैं। जैसे ही यह इकाई पूरी होगी, एक परम तृप्ति इसमें प्रवेश कर जायेगी – जिसमें असंतोष जैसी चीज क्षीण होगी, विदा हो जायेगी।

यह जो पूर्ण पुरुष होगा या पूर्ण स्त्री होगी, पहले और दूसरे शरीर के मिलने से, अब इनके लिए बाहर से तो कोई भी संबंध जोड़ना मुश्किल हो जायेगा। इनके लिए बाहर से संबंध जोड़ना बिलकुल मुश्किल हो जायेगा, क्योंकि बाहर अधूरे पुरुष और अधूरी स्त्रियां होंगी जिनसे इनका कोई तालमेल नहीं बैठ सकता। लेकिन, अगर एक पूर्ण पुरुष, भीतर जिसके दोनो शरीर मिल गये हों... और एक स्त्री, जिसके दोनों शरीर मिल गये हैं – इनके बीच संबंध हो सकता है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पूर्ण पुरुष और पूर्ण स्त्री के बीच बहिर्संभोग का तांत्रिक प्रयोग

और तंत्र ने इसी संबंध के लिए बड़े प्रयोग किये। इसलिए तंत्र बहुत परेशानी में पड़ा और बहुत बदनाम भी हुआ। क्योंकि हम नहीं समझ सके कि वे क्या कर रहे हैं। हमारी समझ के बाहर था। हमारी समझ के बाहर होना बिलकुल स्वाभाविक था। क्योंकि अगर एक स्त्री और एक पुरुष, तंत्र की दशा में, जब कि उनके भीतर के दोनों शरीर एक हो गये हैं, संभोग कर रहे हैं, तो हमारे लिए वह संभोग ही है – और हम सोच भी नहीं सकते कि यह... यह क्या हो रहा है।

लेकिन यह बहुत ही और घटना थी। और यह घटना बड़ी सहयोगी थी साधक के लिए। इसके बड़े कीमती अर्थ थे। क्योंकि एक पूर्ण पुरुष और एक पूर्ण स्त्री का बाहर जो मिलन था, वह एक नये मिलन का सूत्रपात था, एक नये मिलन की यात्रा थी; क्योंकि अभी एक तरह से यात्रा खत्म हो गयी – अधूरे पुरुष, अधूरी स्त्री पूरे हो गये – एक जगह पर जाकर चीज खड़ी हो गयी और पठार आ गया। क्योंकि अब हमें और कोई आकांक्षा का ख्याल नहीं है।

अगर एक पूर्ण पुरुष और एक पूर्ण स्त्री इस अर्थों में मिलते हैं, तो उनके भीतर पहली दफा अधूरे से बाहर एक पूर्ण स्त्री और पूर्ण पुरुष के मिलन का क्या रस और आनंद हो सकता है, वह उनके ख्याल में आता है। और उनको दूसरी बात भी ख्याल में आती है कि अगर ऐसा ही पूर्ण मिलन भीतर घटित हो सके, तब तो अपार आनंद की वर्षा हो जायेगी; क्योंकि आधे पुरुष ने आधी स्त्री को भोगा था। फिर उसने अपने भीतर की आधी स्त्री से अपने को जोड़ा, तब उसने पाया की अपार आनंद मिला। फिर पूरे पुरुष ने पूरी स्त्री को भोगा और तब स्वभावतः बिलकुल तर्कसंगत उसको ख्याल आयेगा कि अगर मेरे भीतर भी एक पूर्ण स्त्री मुझे मिल सके, तो अपने भीतर वह पूर्ण स्त्री की खोज में तीसरे और चौथे शरीर का मिलन घटित होता है।

उनके बीच संभोग में ऊर्जा का स्खलन नहीं

तीसरा शरीर पुरुष का फिर पुरुष है और चौथा स्त्री है; स्त्री का तीसरा शरीर स्त्री का है और चौथा शरीर पुरुष का है। तंत्र ने इस व्यवस्था को कि कहीं आदमी रुक न जाये एक शरीर की पूर्णता पर, क्योंकि बहुत तरह की पूर्णताएं हैं। अपूर्णता कभी नहीं रोकती, लेकिन बहुत तरह की पूर्णताएं हैं जो किसी आगे की पूर्णता की दृष्टि से अपूर्ण होंगी, लेकिन पीछे की अपूर्णता की

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deobarid

Digitized by Madhuban Trust

दृष्टि से बड़ी पूरी मालूम पड़ती हैं। पीछे की अपूर्णता मिट गयी है, आगे की पूर्णता का हमें... और बड़ी पूर्णता का कोई पता नहीं है – रुकाव हो सकता है।

इसलिए तंत्र ने बहुत तरह की प्रक्रियाएं विकसित की हैं, जो बड़ी हैरानी की थीं – और जिनको हम समझ भी नहीं सकते हैं एकदम से। जैसे अगर पूर्ण पुरुष और पूर्ण स्त्री का संभोग होगा, तो उसमें किसी की ऊर्जा का पात नहीं होगा। वह हो नहीं सकता; क्योंकि वे दोनो अपने भीतर कंपलीट सर्कल (पूर्ण वृत्त) हैं; उनसे कोई ऊर्जा का स्खलन नहीं होनेवाला – लेकिन, बिना ऊर्जा-स्खलन के पहली दफा सुख का अनुभव होगा।

और मजे की बात यह है कि जब भी ऊर्जा-स्खलन से सुख का अनुभव होगा, तो पीछे दुख का अनुभव अनिवार्य है; क्योंकि ऊर्जा-स्खलन से जो विषाद, और जो फस्ट्रेशन, और जो दुख, और जो पीड़ा, और जो संताप पैदा होगा, वह होगा। सुख तो क्षण भर में चला जायेगा, लेकिन जो ऊर्जा खोयी है, उसको पूरा करने में चौबीस घंटे, अड़तालीस घंटे और ज्यादा वक्त भी लग सकता है। उतनी देर तक चित्त उस अभाव के प्रति दुखी रहेगा।

अगर बिना ऊर्जा-स्खलन के संभोग हो सके, इसके लिए तंत्र ने बड़ी आश्चर्यजनक दिशा में काम किया, और बड़ी हिम्मतवार दिशा में काम किया। उस पर तो पीछे कभी अलग बात करनी पड़े, क्योंकि उनका सारा प्रक्रिया का जाल है पूरा का पूरा। और वह जाल चूंकि टूट गया, और वह पूरा का पूरा विज्ञान धीरे-धीरे इज़ोटेरिक (गुह्य) हो गया, फिर उसकी सामने बात करना मुश्किल हो गयी, क्योंकि हमारी नैतिक मान्यताओं ने हमें बड़ी कठिनाई में डाल दिया, और हमारे नासमझ समझदारों ने... जिनको कि कुछ भी पता नहीं होता, लेकिन जो कुछ भी कहने में समर्थ होते हैं, उन्होंने बहुत सी कीमती बातों को जिंदा रहना मुश्किल कर दिया। उनको विदा कर देना पड़ा, या वे छुप गयीं और अंडरग्राउंड (भूगर्भा) हो गयीं... और भीतर छुपकर चलने लगीं, लेकिन उनकी धाराएं या जीवन में स्पष्ट नहीं रह गयी।

दोनों की निकटता से दोनों की शक्ति का बढ़ना

यह पूर्ण स्त्री और पुरुष के संभोग की संभावना... और यह संभोग बहुत और तरह का है; इसमें ऊर्जा का स्खलन नहीं है, बल्कि एक नयी घटना घटती है – जिसको कि इशारे में कहा जा सकता है : अधूरी स्त्री और अधूरे पुरुष का जब भी मिलन होगा, तो दोनों की शक्ति क्षीण होगी – मिलने के पहले उनकी जितनी शक्ति थी, मिलने के बाद उन दोनों की शक्ति कम होगी ; और

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पूरे पुरुष और पूरी स्त्री के मिलन में इससे उलटी घटना घटेगी : मिलन के पहले जितनी उनकी शक्ति थी, मिलने के बाद दोनों की ज्यादा होगी – ठीक इससे उलटी घटना घटेगी : दोनों के पास ज्यादा शक्ति होगी। ये शक्ति उन्हीं के भीतर पड़ी है जो कि दूसरे के निकट आने से सजग और जागरूक और सक्रिय हो जायेगी। उनकी ही शक्ति है – पहले में भी उनकी ही शक्ति दूसरे के निकट आने से स्खलित होती थी – दूसरी घटना में उनकी ही शक्ति दूसरे के निकट आने से सक्रिय और सजग हो जायेगी... और जो उनके भीतर छिपा है वह पूरा का पूरा उनको प्रगट होगा – इस घटना से इंगित मिलेगा कि भीतर भी क्या पूर्ण पुरुष और पूर्ण स्त्री का मिलन हो सकता है; क्योंकि पहला मिलन भीतर भी अधूरे पुरुष और अधूरी स्त्री का मिलन है। इसलिए दूसरे यूनिट पर काम शुरू होता है।

तीसरे और चौथे शरीर के अंतर्मैथुन से द्वंद्व-मुक्ति

तीसरा और चौथा शरीर जब मिलेगा, तो तीसरा शरीर पुरुष का फिर पुरुष है और चौथा शरीर फिर स्त्री है; स्त्री का तीसरा शरीर स्त्री है, चौथा पुरुष है। इन दोनों के मिलन पर पुरुष के भीतर पुरुष ही बचेगा – फिर तीसरा शरीर प्रमुख हो जायेगा – और स्त्री के भीतर फिर स्त्री बचेगी। और ये दो पूर्ण स्त्रियां फिर लीन हो जायेंगी एक में, क्योंकि इनके बीच अब कोई सीमारेखा नहीं रह जायेगी कि जहां से ये अलग हो सकें। इनके अलग होने के लिए बीच-बीच में पुरुष के शरीर का होना जरूरी था – या पुरुष के बीच-बीच में स्त्री का शरीर होना जरूरी था, जिनसे यह फासला होता था।

पहले और दूसरे शरीर की मिली हुई स्त्री, और तीसरे-चौथे शरीर की मिली हुई स्त्री – दोनों के मिलने की घटना के साथ ही वे एक हो जायेंगी। और तब दोहरे चरण में स्त्री के पास और भी पूर्ण स्त्रैणता पैदा होगी। इससे बड़ी स्त्रैणता नहीं संभव है, क्योंकि इसके बाद फिर कोई स्त्रैणता की सीमा नहीं। बस यह पूरी स्त्रैण स्थिति होगी; यह पूर्ण स्त्री होगी – यह पूर्ण स्त्री होगी जिसको अब पूर्ण से भी मिलने की कोई आकांक्षा नहीं रह जायेगी।

पहली पूर्णता में भी दूसरे पूर्ण से मिलने का रस था, और उसके मिलने से शक्ति जगती थी, अब वह भी बात समाप्त हो जायेगी। अब इसको परमात्मा भी मिलता हो तो उस अर्थ में मिलने का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा... न पुरुष को। पुरुष के भीतर भी दो पुरुष मिलकर पूर्ण हो जायेंगे।

चार शरीरों को मिलकर पुरुष के पास पुरुष बचेगा, स्त्री के पास स्त्री

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

बचेगी। और इसके बाद कोई पुरुष-स्त्री नहीं है पांचवें शरीर से।

इसलिए स्त्री और पुरुष के इस चौथे शरीर के बाद जो घटना घटेगी, वह दोनों की फिर भिन्न होगी – भिन्न होनेवाली है – घटना एक ही होगी, लेकिन दोनों की समझ भिन्न होगी। पुरुष अब भी आक्रमक होगा, स्त्री अब भी समर्पक होगी; स्त्री सरेंडर (समर्पण) कर देगी; स्त्री अपने को... चौथे शरीर को पूरा पा लेने के बाद संपूर्ण रूप से छोड़ सकेगी; अब उसके छोड़ने में इंच भर की भी कमी नहीं रहेगी। और यह जो छोड़ना है, यह जो लेट गो है, यह जो समर्पण है, यह उसे आगे की यात्रा पर पहुंचा देगा पांचवें शरीर की – जहां फिर स्त्री स्त्री नहीं रह जाती; क्योंकि स्त्री होने के लिए भी अपने को थोड़ा सा बचाना जरूरी था।

असल में हम जो हैं, वह अपने को थोड़ा सा बचाकर हैं। अगर हम अपने को पूरा छोड़ सकें तो हम तत्काल और हो जायेंगे – जो हम कभी भी नहीं थे। हमारे होने में हमारा बचाव है पूरे वक्त। अगर एक स्त्री एक साधारण पुरुष के लिए भी पूरा छोड़ सके, तो उसके भीतर एक क्रिस्ट्रलाइज़ेशन (केंद्रीकरण) घटित हो जायेगा; वह चौथें शरीर को पार कर जायेगी।

इसलिए कई बार स्त्रियों ने साधारण पुरुष के प्रेम में भी चौथा शरीर पार कर लिया।

'सती' शब्द का गुह्य अर्थ

जिनको हम सती कहते हैं, उनका कोई और दूसरा मतलब नहीं है – इज़ोटेरिक (गुह्य) अर्थों में; उनका और कोई मतलब नहीं। उनका यह मतलब नहीं है कि जिनकी दृष्टि दूसरे पुरुष पर नहीं उठती।

सती का मतलब यह है कि जिनके पास दूसरों पर दृष्टि उठाने को बची नहीं। सती का मतलब यह नहीं है कि जिनकी दृष्टि दूसरे पुरुष पर नहीं उठती, सती का मतलब यह है कि जिनके पास अब स्त्री ही नहीं बची जो दूसरे पर दृष्टि उठाये।

अगर साधारण पुरुष के प्रेम में भी कोई स्त्री इतनी सर्मार्पत हो जाये, तो उसको यह यात्रा करने की जरूरत नहीं है, उसके चार शरीर इकट्ठे होकर पांचवें के द्वार पर वह खड़ी हो जायेगी।

इसी वजह से जिन्होंने यह अनुभव किया था, उन्होंने कहा कि पति परमात्मा है। उनके पति को परमात्मा कहने का मतलब पुरुष को कोई परमात्मा बनाने का नहीं था, लेकिन उनको लगा कि पति के माध्यम से पांचवें का दरवाजा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

खुल गया था। इसलिए उनके कहने में कोई भूल न थी। उनका कहना बिलकुल उचित था; क्योंकि जो साधक को बड़ी मेहनत से उपलब्ध होता है, वह उनको प्रेम से ही उपलब्ध हो गया था... और एक व्यक्ति के प्रेम में ही वे उस जगह पहुंच गयीं थीं।

सीता जैसी पूर्ण स्त्री की तेजस्विता

अब जैसे सीता है। सीता को हम उन स्त्रियों में गिनते हैं जिनको कि सती कहा जाता है। अब सीता का समर्पण बहुत अनूठा है – समर्पण की दृष्टि से पूर्ण है; वह टोटल सरेंडर (समग्र समर्पण) है। रावण सीता को ले जाकर भी सीता का स्पर्श भी नहीं कर सका।

असल में रावण अधूरा पुरुष है और सीता पूर्ण स्त्री है।

पूरी स्त्री की तेजस्विता इतनी है कि अधूरा पुरुष उसे छू भी नहीं सकता... उसकी तरफ आंख उठाकर भी गौर से नहीं देख सकता। वह तो अधूरी स्त्री को ही देखा जा सकता है। और जब एक पुरुष एक स्त्री को छूता है, तो सिर्फ पुरुष जिम्मेवार नहीं होता – स्त्री का अधूरा होना अनिवार्य रूप से भागीदार होता है। और जब कोई रास्ते पर किसी स्त्री को धक्का देता है तो धक्का देनेवाला आधा ही जिम्मेदार होता है, धक्का बुलानेवाली स्त्री भी आधी जिम्मेवार होती है; वह धक्का बुलाती है, निमंत्रण देती है। चूंकि वह पैसिव है, इसलिए उसका हमला हमें दिखाई नहीं पड़ता। पुरुष चूंकि ऐक्टिव है, इसलिए उसका हमला दिखाई पड़ता है – दिखाई पड़ता है कि इसने धक्का मारा; यह हमें दिखाई नहीं पड़ता है कि किसी ने धक्का बुलाया।

रावण सीता को आंख उठाकर भी नहीं देख सका। और सीता के लिए रावण का कोई अर्थ ही नहीं था। लेकिन, जीत जाने पर राम ने सीता की परीक्षा लेनी चाही – अग्नि-परीक्षा लेनी चाही। सीता ने उसको भी इनकार नहीं किया। अगर वह इनकार भी कर देती तो सती की हैसियत खो जाती। सीता कह सकती थी कि आप भी अकेले थे, और परीक्षा मेरी अकेली ही क्यों हो, हम दोनों ही अग्नि-परीक्षा से गुजर जायें – क्योंकि अगर मैं अकेली थी किसी दूसरे पुरुष के पास तो आप भी अकेले थे... और मुझे पता नहीं कि कौन स्त्रियां आपके पास रही हों। तो हम दोनों ही अग्नि-परीक्षा से गुजरें।

लेकिन सीता के मन में यह सवाल ही नहीं उठा; सीता अग्नि-परीक्षा से गुजर गयी। अगर उसने एक बार भी सवाल उठाया होता तो सीता सती की हैसियत से खो जाती। तब समर्पण पूरा नहीं था, इंच भर फासला रह जाता।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

और अगर सीता एक बार भी सवाल उठा लेती और फिर आग में गुजरती तो जल जाती; फिर नहीं बच सकती थी अग्नि से। लेकिन समर्पण पूरा था; दूसरा कोई पुरुष नहीं था सीता के लिए।

इसलिए यह हमें चमत्कार मालूम पड़ता है कि वह आग से गुजरी और जली नहीं ! लेकिन कोई भी व्यक्ति जो अंतर-समाहित है... साधारण व्यक्ति भी, किसी अंतर-समाहित स्थिति में आग पर से निकले तो नहीं जलेगा। हिप्नोसिस (सम्मोहन) की हालत में एक साधारण से आदमी को कह दिया जाये कि अब तुम आग पर नहीं जलोगे, तो वह आग पर से निकल जायेगा और नहीं जलेगा।

बिना जले आग पर से गुजर जाने का राज़

साधारण सा फकीर आग पर से गुजर सकता है एक विशेष भावदशा में, जब वह भीतर उसका सर्कल पूरा होता है। सर्कल टूटता है संदेह से। अगर उसे एक बार भी यह ख्याल आ जाये कि कहीं मैं जल न जाऊं, तो भीतर का वर्तुल टूट गया, अब वह जल जायेगा। अगर भीतर का वर्तुल न टूटे तो दो फकीर अगर कूद रहे हों कहीं आग पर, और आप भी पीछे खड़े हों, और आप... दो को कूदते हुए देखकर आपको लगे कि जब दो कूद रहे हैं और नहीं जलते तो मैं क्यों जलूंगा, और आप भी कूद जायें, तो आप भी नहीं जलेंगे। पूरी कतार, भीड़ गुजर जाये आग से, नहीं जलेगी। और उसका कारण है... क्योंकि जिसको जरा भी शक होगा, वह उतरेगा नहीं; वह बाहर खड़ा रह जायेगा – वह कहेगा, पता नहीं, मैं जल न जाऊं। लेकिन जिसको पूरा ख्याल आ गया है, जो देख रहा है कि कोई नहीं जल रहा है तो मैं क्यों जलूंगा – वह गुजर जायेगा, उसको कोई आग नहीं छुएगी।

अगर हमारे भीतर का वर्तुल पूरा है तो हमारे भीतर आग तक के प्रवेश की गुंजाइश नहीं है।

तो सीता को आग न छुई हो, इसमें कोई कठिनाई नहीं। आग से गुजरने के बाद भी जब राम ने उसको छोड़ दिया, तब भी वह यह नहीं कह रही है कि मेरी परीक्षा भी हो गयी, अग्नि-परीक्षा में भी सही उतर गयी, फिर भी मुझे छोड़ा जा रहा है ! नहीं, उसकी तरफ से समर्पण पूरा है। इसलिए छोड़ने की कोई बात ही नहीं उठती, इसलिए सवाल का कोई सवाल नहीं है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पूर्ण समर्पण से चारों शरीरों का अतिक्रमण

स्त्री अगर एक व्यक्ति के प्रेम में भी पूरी हो जाये, तो वह जो सीढ़ियां हैं साधना की, उनमें चार की तो छलांग लगा जायेगी। पुरुष के लिए यह संभावना कठिन है। पुरुष के लिए यह संभावना बहुत कठिन है, क्योंकि समर्पक चित्त नहीं है उसके पास।

यह बड़े मजे की बात है कि आक्रमण भी पूरा हो सकता है, लेकिन आक्रमण पूरा होने में सदा और बहुत सी चीजें जिम्मेदार होंगी, आप अकेले नहीं। लेकिन समर्पण के पूरे होने में आप अकेले जिम्मेदार होंगे और बहुत सी चीजों का कोई सवाल नहीं है। अगर मुझे समर्पण करना है किसी के प्रति तो मैं उससे बिना पूछे पूरा कर सकता हूं, लेकिन अगर आक्रमण करना है किसी के प्रति तब तो आक्रमण का अंतिम जो परिणाम होगा, उसमें मैं अकेला नहीं वह दूसरा व्यक्ति भी जिम्मेवार होगा। इसलिए जहां शक्तिपात की चर्चा मैंने की, तो वहां ऐसा प्रतीत हुआ होगा कि स्त्री में थोड़ी सी कमी है, उसको थोड़ी से कठिनाई है।

मैंने कहा था, कंपंसेशन (अंतर्संतुलन) के नियम हैं जीवन में। वह कभी उसके समर्पण की शक्ति से पूरी हो जाती है। पुरुष कभी भी किसी को कितना ही प्रेम करे, पूरा नहीं कर पाता। उसके न करने का कारण है : वह आक्रामक है, समर्पक नहीं है। और आक्रामण का पूरा होना असंभव मामला है। आक्रमण भी तभी पूरा हो सकता है जब कोई पूरा समर्पण कर दे... तो उस पर पूरा आक्रमण हो सकता है, अन्यथा वह नहीं हो सकता।

तो स्त्री के चार शरीर पूरे हो जायें, एक हो जाये इकाई, तो पांचवें पर बड़ी सरलता से वह समर्पण कर पाती है। और इस चौथी अवस्था में, जब स्त्री इन दोहरी सीढ़ियों को पार करके पूरी होती है, तब दुनिया की कोई शक्ति उसको रोक नहीं सकती, और उसके लिए सिवाय परमात्मा के फिर कोई बचता नहीं।

असल में, चार शरीरों में रहते हुए जिसको उसने प्रेम किया था वह भी परमात्मा हो गया था। और अब तो जो भी है वह परमात्मा है।

मीरा के जीवन में बहुत मीठी घटना है कि वह गयी है वृंदावन, और वहां उस बड़े मंदिर में कृष्ण का जो पुजारी है, वंह स्त्रियों का दर्शन नहीं करता है... स्त्रियों को देखता नहीं है। इसलिए उस मंदिर में स्त्रियों के लिए प्रवेश निषिद्ध है। लेकिन मीरा तो अपना मंजीरा बजाती हुई भीतर प्रवेश ही कर गयी है। उसे लोगों ने रोका और कहा कि स्त्री का जाना भीतर मना है, क्योंकि

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

वह जो पुरोहित है मंदिर का, वह स्त्री नहीं देखता है। तो मीरा ने कहा, बड़ी अदभुत घटना है; मैं तो सोचती थी कि एक ही पुरुष है जगत में, कृष्ण ! दूसरा पुरुष कौन है, उसे मैं जरूर देखना चाहती हूं ! वह मुझे भले देखने में डरता हो, लेकिन मैं उसे देखना चाहती हूं – दूसरा पुरुष कौन है ? दूसरा पुरुष भी है !

उस पुरोहित को खबर पहुंचायी गयी कि एक स्त्री दरवाजे पर प्रवेश कर गयी है और वह कहती है कि मैं उस दूसरे पुरुष को देखना चाहती हूं, क्योंकि मैं तो देखती हूं कि एक ही पुरुष है, कृष्ण – वह दूसरा पुरुष कहां है ? उसके मैं दर्शन करना चाहती हूं। वह जो मंदिर का पुरोहित था, पुजारी था, वह आया और भागा और मीरा के पैरों में गिरा... और उसने कहा कि जिसके लिए एक ही पुरुष बचा है, अब उसको स्त्री कहना बेमानी है; उसका कोई मतलब ही नहीं रहा; अब बात ही खत्म हो गयी। और मैं तेरे पैर छूने आया हूं, और भूल हो गयी मुझसे। मैंने साधारण स्त्रियों को देखकर अपने को पुरुष समझ रखा था, लेकिन तेरी जैसी स्त्री के लिए तो मेरे पुरुष होने का कोई अर्थ नहीं है।

समर्पण भक्ति बन जाती है और आक्रमण योग

पुरुष अगर चौथे शरीर पर पहुंचेगा, तो वह पूर्ण पुरुष हो जायेगा – दोहरी सीढ़ियां पार करके पूर्ण पुरुष हो जायेगा। उस दिन के बाद उसके लिए कोई स्त्री नहीं है; उस दिन के बाद उसके लिए स्त्री का कोई अर्थ नहीं है। अब वह सिर्फ आक्रमण की ऊर्जा है, जैसे स्त्री चौथे शरीर को पार करके सिर्फ समर्पण की ऊर्जा है – सिर्फ शक्ति... जो समर्पित हो सकती है; और पुरुष सिर्फ शक्ति है जो आक्रमक हो सकती है। अब सिर्फ शक्तियां बच गयी हैं, अब इनका स्त्री-पुरुष नाम नहीं है, अब ये सिर्फ ऊर्जाएं हैं।

पुरुष का जो आक्रमण है, वही योग की बहुत सी प्रक्रियाओं में विकसित हुआ; स्त्री का जो समर्पण है, वही भक्ति की बहुत सी प्रक्रियाओं में विकसित हुआ।

समर्पण भक्ति बन जाती है, आक्रमण योग बन जाता है... लेकिन बात एक ही है; उन दोनों में कुछ भेद नहीं है अब। यह सिर्फ स्त्री और पुरुष की तरफ से भेद है।

अब बूंद सागर में गिरती है कि सागर बूंद में गिरता है, इससे अंतिम परिणाम में कोई भेद नहीं है। पुरुष की जो बूंद जो है, वह सागर में गिरेगी – वह छलांग लगायेगा और सागर में गिर जायेगा; स्त्री की बूंद जो है,

CC-0. Public Domain. Vinin Kumar Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

वह खायी बन जायेगी और पूरे सागर को अपने में पुकार लेगी – वह समर्पित हो जायेगी और पूरा सागर उसमें गिरेगा।

अब भी वह निगेटिव (ग्राहक, ऋणात्मक) होगी। निगेटिविटि (ग्राहकता, ऋणात्मक) होगी उसकी पूरी की पूरी... वह गर्भ रह जायेगी और सारे सागर को अपने में ले लेगी; समस्त विश्व की ऊर्जा उसमें प्रवेश कर जायेगी। पुरुष अब भी गर्भ नहीं बन सकता; पुरुष अब भी वीर्य ही होगा – और एक छलांग लगायेगा, और सागर में डूब जायेगा।

पांचवें शरीर से स्त्री-पुरुष का भेद समाप्त

बहुत गहरे में उनके व्यक्तित्व इस सीमा तक, आखिरी सीमा तक पीछा करेंगे – चौथे शरीर के आखिरी तक – पांचवें शरीर की दुनिया अलग हो जायेगी; तब आत्मा ही शेष रह जाती है। और आत्मा का कोई लैंगिक भेद नहीं है। इसलिए उसके बाद यात्रा में कोई फर्क नहीं पड़ता। चौथे तक फर्क पड़ेगा और फर्क ऐसा ही होगा कि बूंद साग़र में गिरेगी कि सागर बूंद में गिरेगा। अंतिम परिणाम एक ही हो जायेगा – बूंद सागर में गिरे कि सागर बूंद में गिरे, कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है। लेकिन, चौथे शरीर की आखिरी सीमा तक फर्क रहेगा। अगर स्त्री ने छलांग लगाना चाही तो वह मुश्किल में पड़ जायेगी और अगर पुरुष ने समर्पण करना चाहा तो वह मुश्किल में पड़ जायेगा। बहुत सी स्त्रियां छलांग लगाने की मुश्किल में पड़ती हैं, बहुत से पुरुष समर्पण करने की मुश्किल में पड़ जाते हैं। उस भूल से सावधान रहना जरूरी है।

लंबे संभोग में स्त्री और पुरुष के बीच विद्युत-वलय

प्रश्न : आपने एक प्रवचन में कहा है कि लंबे संभोग में स्त्री और पुरुष के बीच एक प्रकाश-वलय निर्मित होता है। यह क्या है, कैसे निर्मित होता है, और इसका क्या उपयोग है ? प्रथम चार शरीरों की विद्युतीय विभिन्नता के आधार पर इन प्रश्नों का उत्तर देने की कृपा करें। अकेले ध्यान में उपरोक्त घटना का क्या रूप होगा ?

हां, जैसा मैंने कहा कि स्त्री आधी है, पुरुष आधा है; दोनों ऊर्जाएं हैं, दोनों विद्युत हैं – स्त्री निगेटिव पोल (ऋणात्मक ध्रुव) है, पुरुष पॉज़िटिव पोल (धनात्मक ध्रुव) है। और जहां कहीं भी विद्युत की ऋणात्मक और धनात्मक ऊर्जाएं एक वर्तुलाकार में मिलती हैं, वहां प्रकाश-पुंज पैदा हो जाता है। प्रकाश-पुंज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

ऐसा हो सकता है जो दिखाई न पड़े, ऐसा हो सकता है जो कभी दिखाई पड़ जाये; ऐसा हो सकता है जो किसी को दिखाई पड़े, किसी को दिखाई न पड़े, लेकिन वर्तुल निर्मित होता है। पर पुरुष और स्त्री का मिलन इतना क्षणिक है कि वर्तुल निर्मित हो ही नहीं पाता और टूट जाता है। इसलिए संभोग को लंबाने की क्रियाएं हैं, और संभोग को लंबाने की पद्धतियां हैं। अगर आधे घंटे के पार संभोग चला जाये तो वलय, वह विद्युत का वर्तुल, प्रकाश-पुंज, स्त्री और पुरुष को घेरे हुए दिखाई पड़ सकता है। उसके चित्र भी लिये गये हैं और कुछ आदिवासी कौमें अब भी इतने लंबे संभोग में गुजर सकती हैं। और इसलिए उनके वर्तुल बन जाते हैं।

तनावों के बढ़ने पर संभोग की अवधि का घटना

साधारणतः सभ्य समाज में वर्तुल खोजना बहुत मुश्किल है; क्योंकि जितना तनावग्रस्त चित्त होगा, संभोग उतना ही क्षणिक होगा। असल में जितना टेंस माइंड (तनावयुक्त मन) होगा, उतना जल्दी स्खलन होगा उसका; जितना तनाव से भरा चित्त है, उतना स्खलन त्वरित होगा; क्योंकि तनाव से भरा चित्त असल में संभोग नहीं खोज रहा है, रिलीज (राहत) खोज रहा है।

पश्चिम में सेक्स का जो उपयोग है, वह छींक से ज्यादा नहीं रह गया – एक तनाव है जो फिक जाता है; एक बोझ है सिर पर जो निकल जाता है। ऊर्जा कम हो जाती है तो आप शिथिल हो जाते हैं। रिलेक्स (विश्रामपूर्ण) होना दूसरी बात है, शिथिल होना दूसरी बात है। रिलेक्स होने का मतलब है, विश्राम का मतलब है : ऊर्जा भीतर है और आप विश्राम में हैं; और शिथिल होने का मतलब है : ऊर्जा फिक गयी और अब आप निढाल पड़े रह गये हैं; अब ऊर्जा नहीं है तो आप शिथिल हो गये हैं – इसलिए सोच रहे हैं कि विश्राम हो रहा है।

तो पश्चिम में जितना तनाव बढ़ा है उतना सेक्स जो है वह एक रिलीज़ (राहत), एक तनाव से छुटकारा, एक भीतरी शक्ति के दबाव से मुक्ति... ऐसी हालत हो गयी है। इसलिए पश्चिम में ऐसे विचारक हैं जो सेक्स को छींक से ज्यादा मूल्य देने को तैयार नहीं हैं... नाक में एक खुजलाहट हुई और छींक दी है तो मन हलका हो गया – बस, इससे ज्यादा मूल्य देने को पश्चिम में लोग राजी नहीं हैं। और उनका कहना ठीक भी है, क्योंकि वे जो कर रहे हैं, वह इतना ही है; वह इससे ज्यादा मूल्य का है भी नहीं।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

और पूरब में भी लोग उनसे धीरे-धीरे राजी होते चले जा रहे हैं, क्योंकि

Digitized by Madhuban Trust

पूरब भी तनावग्रस्त होता चला जा रहा है। कहीं दूर, किसी पहाड़-पर्वत की कंदरा में कोई व्यक्ति मिल सकता है, जो तनावग्रस्त न हो; जिसको उस सभ्यता ने अभी न छुआ हो... और जो वहां जी रहा हो जहां वृक्ष और पौधे और पत्तियों और पहाड़ों की दुनिया है। तो वहां अभी भी संभोग में वह वर्तुल बनता है। और या फिर तंत्र की प्रक्रियाएं हैं जिनसे कोई भी वर्तुल बना सकता है।

लंबे संभोग से दीर्घकालीन तृप्ति

उस वर्तुल के अनुभव बड़े अदभुत हैं; क्योंकि जब वह वर्तुल बनता है, तभी तुम्हें ठीक अर्थों में यह पता चलता है कि तुम एक हुए। स्त्री और पुरुष एक हुए, इसका अनुभव तुम्हें वर्तुल बनने के पहले पता नहीं चलता। उसके बनते ही मैथुन में रत दो व्यक्ति दो नहीं रह जाते; उस वर्तुल के बनते ही वे एक ही ऊर्जा के, एक ही शक्ति के प्रवाह बन जाते हैं – कोई चीज जाती और आती और घूमती हुई मालूम पड़ने लगती है और दो व्यक्ति मिट जाते हैं।

यह वर्तुल जिस मात्रा में बनेगा, उसी मात्रा में संभोग की आकांक्षा कम और दूरी पर हो जायेगी। यह हो सकता है कि एक दफा वर्तुल बन जाये तो वर्ष भर के लिए भी फिर कोई इच्छा न रह जाये, कोई कामना न रह जाये; क्योंकि एक तृप्ति की घटना घट जाये।

इसे ऐसे ही समझ सकते हो कि एक आदमी खाना खाये और वॉमिट कर दे, खाना खाये और उलटी कर दे, तो कोई तृप्ति तो नहीं होगी ! खाना खाने से तृप्ति नहीं होती, खाना पचने से तृप्ति होती है। आमतौर से हम सोचते हैं – खाना खाने से तृप्ति होती है; खाना खाने से कोई तृप्ति नहीं होती, तृप्ति तो पचने से होती है।

संभोग के भी दो रूप हैं : एक सिर्फ खाना खाने का और एक पचने का। तो जिसे हम आमतौर से संभोग कह रहे हैं, वह सिर्फ खाना खाने और उलटी कर देने जैसा है; उसमें कहीं कुछ पच नहीं पाता। अगर पच जाये तो उसकी तृप्ति लंबी और गहरी है। और जो पचना है वह इस विद्युत के वर्तुल बनने पर ही होता है। यह सिर्फ सूचक है उसका कि दोनों की चित्त-वृत्तियां एक-दूसरे में समाहित और लीन हो गयीं – दोनों अब दो न रहे, एक हो गये; दोनों अब दो शरीर ही रहे, लेकिन भीतर बहती हुई ऊर्जा एक ही हो गयी और छलांग लगाकर एक-दूसरे में प्रवाह करने लगी।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

गृहस्थ के लिए गहरी काम-तृप्ति ही काम-मुक्ति है

यह जो स्थिति है, यह स्थिति बड़ी गहरी तृप्ति दे जाती है। यह इस अर्थ में मैंने कहा था। इसका योग के लिए तो बहुत उपयोग है, साधक के लिए इसका बहुत उपयोग है, क्योंकि साधक को अगर ऐसा मैथुन उपलब्ध हो सके, तो मैथुन की जरूरत बहुत कम हो जाती है। और जितने दिन मैथुन की जरूरत नहीं होती, उतने दिन तक उसकी अंतर्यात्रा आसान हो जाती है। और एक दफा अंतर्यात्रा शुरू हो जाये, और भीतर की स्त्री से संभोग होने लगे, तब तो बाहर की स्त्री बेकार हो जायेगी, बाहर का पुरुष बेकार हो जायेगा।

गृहस्थ के लिए ब्रह्मचर्य का जो अर्थ है, वह यही हो सकता है... आप ख्याल लेते हैं ? गृहस्थ के लिए जो ब्रह्मचर्य का अर्थ है, वह यही हो सकता है कि उसका संभोग इतना तृप्तिदायी हो कि वर्षों के लिए बीच में ब्रह्मचर्य का क्षण छूट जाये। और एक दफा यह क्षण छूट जाये और भीतर की यात्रा शुरू हो जाये तो फिर बाहर की आवश्यकता ही विलीन हो जाती है। गृहस्थ के लिए कह रहा हूं।

संन्यासी को ध्यान द्वारा अंतर्मैथुन की उपलब्धि

संन्यस्त के लिए, जिसने गृहस्थी को स्वीकार नहीं किया, उसके लिए ब्रह्मचर्य का अर्थ... उसके लिए ब्रह्मचर्य का अर्थ अंतर्रमण है, उसके लिए अंतर्मैथुन है – उसे सीधे ही अंतर्मैथुन के प्रयोग खोजने पड़ेंगे। अन्यथा, वह सिर्फ बाहर की स्त्री से नाममात्र को बचा हुआ दिखाई पड़ेगा... उसका चित्त तो दौड़ता ही रहेगा, भागता ही रहेगा। और जितनी ऊर्जा स्त्री से मिलने में व्यय नहीं होती, उससे ज्यादा ऊर्जा स्त्री से न मिलने और दूर रहने की चेष्टा में व्यय हो जाती है।

तो संन्यासी के लिए थोड़ा सा अलग मार्ग है। और वह थोड़े से मार्ग में जो फर्क है, वह इतना ही है कि गृहस्थ के लिए बाहर की स्त्री से मिलना प्राथमिक होगा, द्वितीय चरण पर अंतर की स्त्री से मिलना होगा, संन्यस्त के लिए अंतर की स्त्री से सीधा मिलना होगा, पहला चरण नहीं है।

इसलिए हर किसी को संन्यासी बना देना नासमझी की हद है। असल में संन्यास देने का मतलब ही यह है कि हम उसके अंतर में झांक सकें और समझ सकें कि उसका पहला पुरुष उसकी अपनी ही स्त्री से मिलने की क्षमता और पात्रता में है या नहीं। अगर है... तो ही ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी जा सकती है, अन्यथा पागलपन पैदा करेंगे और कुछ फायदा नहीं होगा। लेकिन लोग

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

हैं कि दीक्षाएं दिये चले जा रहे हैं। कोई हजार संन्यासियों का गुरु है, कोई दो हजार संन्यासियों का गुरु है ! उन्हें कुछ पता नहीं कि वे क्या कर रहे हैं ! वे जिस आदमी को दीक्षा दे रहे हैं, वह अंतर्मैथुन के योग्य है ? यह तो दूर की बात है, यह भी पता नहीं कि अंतर्मैथुन भी कोई मैथुन है।

इसलिए मुझे जब भी संन्यासी मिलता है तो उसकी गहरी तकलीफ सेक्स की होती है। गृहस्थ तो मुझे मिल जाते हैं जिनकी और भी तकलीफें हैं, लेकिन संन्यासी मुझे नहीं मिलता जिसकी और कोई तकलीफ हो; उसकी तकलीफ सेक्स ही है। गृहस्थ की और भी तकलीफें हैं... हजार तकलीफें हैं, उसमें सेक्स एक तकलीफ है। लेकिन संन्यासी की एक ही तकलीफ है। और इसलिए सारा का सारा चित्त उसका इसी एक बिंदु पर अटका रह जाता है।

तो बाहर की स्त्री से बचने के तो उपाय बता रहे हैं उसके गुरु, लेकिन भीतर की स्त्री से मिलने का कोई उपाय नहीं है... उनके ख्याल में। इसलिए बाहर की स्त्री से बचा नहीं जा सकता, सिर्फ दिखाया जा सकता है कि बच रहे हैं... बचना बहुत मुश्किल है।

वह तो वैद्युतिक ऊर्जा है, उसके लिए जगह चाहिए। अगर वह भीतर जाये तो बाहर जाने से रुकेगी, अगर भीतर नहीं जा रही है तो बाहर जायेगी। कोई फिक्र नहीं कि स्त्री कल्पना की होगी, उससे भी काम चलेगा; वह कल्पना की स्त्री के साथ भी बाहर बह जायेगी, वह भीतर नहीं जा सकती। ठीक स्त्री के लिए भी यही होगा। लेकिन स्त्री और पुरुष के मामले में यहां भी थोड़ा सा भेद है जो ख्याल में ले लेना चाहिए।

कुंवारी स्त्री के लिए अंतर्मैथुन सरल

इसलिए अक्सर यह होगा कि साधु के लिए जितना सेक्स प्रॉबलम (समस्या) बनेगा, उतना साध्वी के लिए नहीं बनता। इधर मैं बहुत सी साध्वियों से परिचित हूं। साध्वी के लिए सेक्स इतना प्रॉबलम नहीं बनता... उसका कारण है कि पैसिव (निष्क्रिय) है उसका सेक्स। अगर एक दफा उठाया जाये तो प्रॉबलम बनता है, अगर बिलकुल न उठाया गया हो तो उसे पता ही नहीं चलता कि प्रॉबलम है।

स्त्री को इनीसिएशन (दीक्षा, पहल, प्रवेश) चाहिए सेक्स में भी। कोई पुरुष एक दफा स्त्री को ले जाये सेक्स में, इसके बाद उसमें तीव्र ऊर्जा उठनी शुरू होती है। लेकिन अगर न ले जायी जाये, तो वह जीवन भर कुंवारी रह सकती है। उसके कुंवारे रहने में बहुत सुविधा है, क्योंकि पैसिव है। वह खुद

CC-0. Public Domain. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

तो आक्रमक नहीं है उसका चित्त; वह प्रतीक्षा करती रहेगी, वह प्रतीक्षा करती रहेगी।

इसलिए मेरा मानना है कि विवाहित स्त्री को दीक्षा देना खतरनाक है, जब तक कि उसको अंतर्पुरुष से मिलना न सिखाया जाये। कुंवारी लड़की दीक्षा ले सकती है, कुंवारे लड़के से वह ज्यादा ठीक हालत में है। उसको जब तक एक दफा दीक्षा नहीं मिली काम की, यौन की, तब तक वह प्रतीक्षा कर सकती है – आक्रामक नहीं है, इसलिए। और अगर आक्रमण न हो बाहर से, तो अपने-आप धीरे-धीरे उसके भीतर का पुरुष उसकी बाहर की स्त्री से मिलना शुरू कर देता है, क्योंकि उसके नंबर दो का जो शरीर है, वह पुरुष का है; वह आक्रामक है।

तो अंतर्मैथुन स्त्री के लिए पुरुष की बजाय बहुत सरल है... मेरा मतलब समझ रहे हो न तुम ? उसका जो दूसरा पुरुष का शरीर है, वह आक्रामक है। इसलिए अगर बाहर से स्त्री को पुरुष न मिले, न मिले, न मिले; उसे पता ही न हो बाहर के पुरुष के द्वारा यौन में जाने का, तो उसके भीतर का पुरुष उस पर हमला करना शुरू कर देगा – उसकी इथरिक बॉडी उस पर हमला करने लगेगी, और उसका मुख भीतर की तरफ मुड़ जायेगा, वह अंतर्मैथुन में लीन हो जायेगी।

पुरुष के लिए अंतर्मैथुन जरा कठिन बात है, क्योंकि पुरुष का आक्रामक शरीर नंबर एक का है, नंबर दो का शरीर उसका स्त्री का है। नंबर दो का शरीर उस पर आक्रमण कर के नहीं बुला सकता; जब वह जायेगा तभी नंबर दो का शरीर उसको स्वीकार करेगा।

ये सारे भेद हैं। और ये भेद अगर ख्याल में हों तो सारी व्यवस्था इस सबके संबंध में दूसरी होनी चाहिए।

यह जो संभोग में विद्युत-वर्तुल पैदा हो सके तो गृहस्थ के लिए बड़ा सहयोगी है। और ऐसा ही वर्तुल, जब तुम्हारा अंतर्मैथुन होगा, तब भी पैदा होगा। इसलिए साधारण व्यक्ति को संभोग में जो विद्युत की ऊर्जा उसको घेर लेगी, वैसी ऊर्जा उस व्यक्ति को जो भीतर के शरीर से संबंधित हुआ है, चौबीस घंटे घेरे रहेगी। इसलिए तुम्हारे प्रत्येक शरीर पर तुम्हारा वर्तुल बढ़ता चला जायेगा।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

कि मेरे शरीर को तब तक बचाया जाये जब तक साइंस (विज्ञान) इस हालत

Digitized by Madhuban Trust

बुद्ध-पुरुष : एक ऊर्जा पुंज

इसलिए बहुत बार ऐसा हो सकता है, जैसे कि बुद्ध के मर जाने के बाद कोई पांच सौ वर्षों तक बुद्ध की कोई प्रतिमा नहीं बनायी गयी... और प्रतिमा की जगह बोधिवृक्ष की पूजा चली – प्रतिमा नहीं थी, सिर्फ वृक्ष ही था। मंदिर भी बनाते थे तो उसमें एक वृक्ष... पत्थर का वृक्ष बनाते थे – या पत्थर पर वृक्ष को खोद देते थे... और नीचे वह जगह खाली रहती, जहां बुद्ध के बैठने की जगह थी।

अब जो लोग पुरातत्त्व या इतिहास की खोज करते हैं, वे बड़ी मुश्किल में हैं कि बुद्ध की प्रतिमा क्यों न बनायी, बुद्ध का वृक्ष क्यों बनाया ? फिर पांच सौ साल के बाद क्यों प्रतिमा बनायी ? और पांच सौ साल तक वृक्ष के नीचे जगह क्यों खाली छोड़ी ?

अब यह बड़े राज़ की बात है... और परातत्त्वविद् को और इतिहासज्ञ को कभी पता नहीं चल सकता, क्योंकि इतिहास और पुरातत्त्व से इसका कोई लेना-देना नहीं है।

असल में जिन लोगों ने बुद्ध को गौर से देखा था, उनका कहना था कि जब गौर से देखो तो बुद्ध दिखाई नहीं पड़ते, सिर्फ वृक्ष ही रह जाता है, सिर्फ विद्युत की ऊर्जा रह जाती है – गौर से अगर देखो तो बुद्ध विदा हो जाते हैं, वहां सिर्फ विद्युत की ऊर्जा ही रह जाती है, वहां आदमी हो समाप्त जाता है। जैसे मैं यहां बैठा हूं और गौर से देखा जाऊं, सिर्फ कुर्सी दिखाई पड़े और मैं विदा हो जाऊं।

तो बुद्ध को जिन्होंने गौर से देखा, वे कहते थे कि बुद्ध दिखाई नहीं पड़ते थे, वृक्ष ही दिखाई पड़ता था; और जिन्होंने गौर से नहीं देखा, वे कहते थे – बुद्ध दिखाई पड़ते थे। इसलिए ऑथेंटिक (प्रामाणिक) उनका ही कहना था जिन्होंने गौर से देखा था। पांच सौ साल तक उनकी बात मानी गयी। पांच सौ साल तक उनकी बात मानी गयी जिन्होंने कहा था कि नहीं, बुद्ध कभी नहीं दिखाई पड़े; जब गौर से देखा तो वे नहीं थे, जगह खाली थी; वृक्ष ही रह गया था पीछे।

लेकिन, यह तब तक चल सका जब तक कि गौर से देखनेवाले लोग थे। और गैर-गौर से देखनेवालों ने माना कि भई, हमने तो कभी गौर से देखा नहीं, इसलिए हमको तो दिखाई पड़ते थे। लेकिन जब यह वर्ग खोता चला गया, तब यह बात मुश्किल हो गयी कि वृक्ष अकेला क्यों हो, नीचे बुद्ध होने चाहिए। फिर पांच सौ साल बाद उनकी प्रतिमा बनाई गयी।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

यह बहुत मजेदार बात है : जिन्होंने जीसस को भी गौर से देखा उनको जीसस नहीं दिखाई पड़े; जिन्होंने म्हावीर को गौर से देखा उनको महावीर दिखाई नहीं पड़े; जिन्होंने कृष्ण को गौर से देखा उनको कृष्ण नहीं दिखाई पड़े। अगर पूरी अटेंशन (होश) से इस तरह के लोग देखे जायें तो वहां सिर्फ विद्युत की ऊर्जा ही दिखायी पड़ेगी, वहां कोई व्यक्ति दिखाई नहीं पड़ेगा।

यह... तुम्हारे प्रत्येक दो शरीर के बाद यह ऊर्जा बड़ी होती जायेगी। और चौथे शरीर के बाद यह ऊर्जा पूर्ण हो जायेगी। पांचवें शरीर पर ऊर्जा ही रह जायेगी। छठवें शरीर पर यह ऊर्जा अलग दिखाई नहीं पड़ेगी, यह ऊर्जा चांद-तारों से, आकाश से – सबसे जुड़ जायेगी। सातवें शरीर पर ऊर्जा भी दिखाई नहीं पड़ेगी – पहले मैटर खो जायेगा, फिर एनर्जी भी खो जायेगी; पहले पदार्थ खो जायेगा, फिर शक्ति भी खो जायेगी। तो इस लिहाज से यह सोचने जैसी बात है।

निर्विचार की पूरी उपलब्धि पांचवें शरीर में

प्रश्न : निर्विचार की स्थायी उपलब्धि साधक को किस शरीर में होती है ? क्या चेतना और विषय के तादात्म्य के बिना भी विचार आ सकते हैं या विचार के लिए तादात्म्य आवश्यक है ?

निर्विचार की पूरी उपलब्धि पांचवें शरीर में होती है, लेकिन अधूरी झलके चौथे शरीर से शुरू हो जाती हैं। चौथे शरीर में विचार चलते हैं, लेकिन बीच में दो विचारों के जो खाली जगह होती है वह दिखाई पड़ने लगती है। चौथे शरीर के पहले वे दिखाई नहीं पड़ती। चौथे शरीर के पहले हमें लगता है कि विचार ही विचार हैं, और विचारों के बीच में जो गैप (अंतराल, खाली स्थान) हैं, वह हमें दिखाई नहीं पड़ता। चौथे शरीर में गैप दिखाई पड़ने लगता है और एम्फेसिस (जोर) एकदम बदल जाती है। अगर तुमने कभी गेस्टाल्ट के कोई चित्र देखे हैं तो यह ख्याल में आ सकेगा।

समझ लें कि एक सीढ़ियों का चित्र बनाया जा सकता है। वह चित्र ऐसा बनाया जा सकता है कि उसे अगर आप गौर से देखते रहें तो एक बार ऐसा लगे कि सीढ़ियां नीचे की तरफ आ रही हैं और एक बार ऐसा लगे कि सीढ़ियां ऊपर की तरफ जा रही हैं। लेकिन यह बड़े मजे की बात है कि दोनों चीजें एकसाथ नहीं देखी जा सकतीं – एक को ही तुम देख सकते हो। दोबारा जब तुम्हें दूसरी चीज दिखाई पड़ने लगेगी, तो पहली नदारद हो जायेगी।

एक ऐसा चित्र बनाया जा सकता है कि दो आदमियों के चेहरे

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

आमने-सामने दिखाई पड़ें – उनकी नाक, उनकी आंख, उनकी दाढ़ी, वह सब दिखाई पड़े। एक दफा ऐसा दिखाई पड़े कि दो आदमी आमन-सामने चेहरे करके बैठे हैं। इनको काला पोत दिया है – चहेरों को – बीच में जो जगह खाली है, वह सफेद है। और एक दफा ऐसा दिखाई पड़े कि बीच में एक गमला रखा हुआ है। तो गमले की कगारें दिखाई पड़ें – वह नाक और मुंह, वे गमले की कगारें हो जायें। लेकिन ये दोनों बातें एकसाथ दिखाई नहीं पड़ सकती हैं। जब तुम्हें दो चहेरे दिखाई पड़ेंगे तो गमला नहीं दिखाई पड़ेगा, और जब तुम्हें गमला दिखाई पड़ेगा तुम पाओगे कि वे दो चेहरे कहां गये ! वे दो चेहरे नहीं दिखाई पड़ेंगे। इसकी तुम लाख कोशिश करो, तो भी गेस्टाल्ट में इम्फेसिस (जोर) बदल जायेगी – तब तुम दोनों न देख पाओगे। जब तुम्हारी इम्फेसिस चेहरे पर जायेगी तो गमला नदारद हो जायेगा, जब तुम्हारी इम्फेसिस गमले पर जायेगी तो चेहरे नदारद हो जायेंगे।

तीसरे शरीर तक हमारा जो माइंड (मन) का गेस्टाल्ट है, उसकी इम्फेसिस विचार के ऊपर है। राम आया... तो राम दिखाई पड़ता है, आया दिखाई पड़ता है, राम और आया के बीच में जो खाली जगह है, और राम के पहले जो खाली जगह है, और आया के बाद में जो खाली जगह है, वह नहीं दिखाई पड़ती। इम्फेसिस 'राम आया' पर है। तो विचार दिखाई पड़ता है, बीच का अंतराल नहीं दिखाई पड़ता।

चौथे शरीर में फर्क होना शुरू होता है – अचानक तुम्हें ऐसा लगता है कि राम आया, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। जब राम नहीं आया था, तब खाली जगह थी; और जब राम आया, तब खाली जगह थी; और जब राम चला गया, तब खाली जगह थी। वह खाली जगह तुम्हें दिखाई पड़नी शुरू हो जाती है – चेहरे विदा होते हैं और गमला दिखाई पड़ने लगता है। और जब तुम्हें खाली जगह दिखाई पड़ती है, तब तुम विचार नहीं कर सकते – दो में से एक ही कर सकते हो : जब तक तुम विचार देखोगे तो विचार कर सकते हो, जब तुम खाली जगह देखागे तो खाली हो जाओगे। लेकिन यह बदलता रहेगा चौथे शरीर में : कभी गमला दिखाई पड़ने लगेगा, कभी दो चेहरे दिखाई पड़ने लगेंगे – यह चलता रहेगा – कभी विचार दिखाई पड़ेंगे, कभी खाली जगह दिखाई पड़ेगी। तो मौन भी आयेगा और विचार भी चलेंगे।

मौन और शून्य में फर्क

मौन में और शून्य में फर्क यही है कि मौन का गुणधर्म यह है कि अभी

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Deoband

Digitized by Madhuban Trust

विचार समाप्त नहीं हो गये, लेकिन एम्फेसिस (जोर) बदल गयी है – अब वाणी से चित्त हट गया है और चुप होने को रसपूर्ण पा रहा है; लेकिन अभी वाणी नहीं हट गयी है – वाणी से चित्त हट गया है, वाणी से ध्यान हट गया है, वाणी से अटेंशन (ध्यान) हट गयी है – अटेंशन चली गयी है मौन पर, लेकिन वाणी अभी आती है; और कभी-कभी जब पकड़ लेती है ध्यान को तो मौन खो जाता है और वाणी चलने लगती है।

चौथे शरीर की आखिरी घड़ियों में इन दोनों पर चित्त बदलता रहेगा।

पांचवें शरीर पर विचार एकदम खो जायेंगे और शून्य रह जायेगा।

इसको हम मौन नहीं कह सकते; क्योंकि मौन जो है वह मुखरता की ही अपेक्षा में है, बोलने की ही अपेक्षा में है।

मौन का मतलब है... न बोलना; शून्य का मतलब है... न बोलना और न न-बोलना – दोनों नहीं हैं वहां – वहां न गमला रहा, न दो चेहरे रहे, कागज खाली हो गया। अब अगर कोई पूछे कि चेहरा है कि गमला, तो तुम कहोगे, दोनों नहीं है।

पांचवें शरीर पर तो निर्विचार पूरी तरह घटित होगा, चौथे शरीर पर उसकी झलक आनी शुरू हो जायेगी – कभी दिखाई पड़ेगा। लेकिन निर्विचार भी सदा दो विचार के बीच में ही दिखाई पड़ेगा।

पांचवें शरीर पर निर्विचार दिखाई पड़ेगा, विचार नहीं दिखाई पड़ेगा।

तीसरे शरीर में विचारों के साथ पूरा तादात्म्य

अब दूसरा सवाल तुम्हारा जो है... कि क्या विचार के साथ आइडेंटिटि, तादात्म्य होना जरूरी है तभी विचार आते हैं, या ऐसा भी हो सकता है कि कोई विचार से तादात्म्य न हो और विचार आयें।

तीसरे शरीर तक तो आइडेंटिटि (तादात्म्य) और विचार का आना सदा साथ होता है – तुम्हारा तादात्म्य होता है और विचार आते है। इनमें कभी फासले का पता ही नहीं चलेगा। तुम्हारा विचार और तुम एक ही चीज हो, दो नहीं हो। जब तुम क्रोध करते हो तो यह कहना गलत है कि तुम क्रोध करते हो, यही कहना उचित है कि तुम क्रोध हो जाते हो; क्योंकि क्रोध करते हो यह तभी कहा जा सकता है जब तुम न भी कर सको;.क्योंकि करने का मतलब ही यह होता है...

अगर मैं कहूं कि मैं हाथ हिलाता हूं, और फिर तुम मुझसे कहो कि अच्छा, जरा रोककर दिखाइये। मैं कहूं, वह तो नहीं हो सकता; हाथ तो हिलता

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

ही रहेगा। तो फिर तुम कहोगे कि फिर आप हिलाते हैं, इसका क्या मतलब रहा ? कहिये, हाथ हिलता है। अगर आप हिलाते हैं, तो रोककर दिखाइये, फिर हिलाकर दिखाइये। तो अगर मैं रोक न सकूं तो हिलाने की मालकियत बेकार है; उसका कोई मतलब नहीं है।

चूंकि तुम विचार को रोक नहीं सकते तीसरे शरीर पर, इसलिए तुम्हारी आइडेंटिटि (तादात्म्य) पूरी है... तुम ही विचार हो।

इसलिए तीसरे शरीर तक आदमी के विचार पर अगर चोट करो तो उस पर ही चोट हो जाती है। अगर कह दो कि आपकी बात गलत है, तो उसको ऐसा नहीं लगता है कि मेरी बात गलत है; उसको लगता है, मैं गलत हूं। झगड़ा जो शुरू होता है, वह बात के लिए नहीं होता, फिर वह 'मैं' के लिए झगड़ा शुरू होता है; क्योंकि आइडेंटिटि पूरी है – तुम्हारे विचार को चोट पहुंचाना, मतलब तुम्हें चोट पहुंचाना हो जाता है। भला तुम कहो कि कोई बात नहीं है, आप मेरे विचार के खिलाफ हैं, लेकिन भीतर तुम जानते हो कि तुम्हारी खिलाफत हो गयी है। और कई बार तो ऐसा होता है कि विचार से कोई मतलब नहीं होता, चूंकि वह आपका है, इसलिए झगड़ा करना पड़ता है... और कोई मतलब नहीं होता उससे। क्योंकि आप कह चुके हैं कि मेरी इससे आइडेंटिटि है – यह मेरा मत है, यह मेरी किताब है, यह मेरा शास्त्र है, यह मेरा सिद्धांत है, यह मेरा वाद है, तो अब झगड़ा शुरू होगा।

तीसरे शरीर तक तुम्हारे और विचार के बीच कोई फासला नहीं होता, तुम ही विचार होते हो। चौथे शरीर में डगमगाहट शुरू होती है... तुम्हें ऐसी झलकें मिलने लगती है कि मैं अलग हूं और विचार अलग हैं। लेकिन, फिर भी तुम अपने को असमर्थ पाते हो कि विचार को रोक सको, क्योंकि बहुत गहरी जड़ों में संबंध रह जाता है – ऊपर से संबंध अलग मालूम होने लगता है – शाखाओं पर अलग हो जाता है... एक शाखा पर तुम बैठ जाते हो, दूसरे पर विचार बैठ जाता है। तुम्हें दिखाई तो पड़ता है अलग है, लेकिन नीचे जड़ में तुम और विचार एक होते हो। इसलिए लगता भी है : अलग है; लगता भी है कि अगर मेरा संबंध टूट जाये, तो बंद हो जायेगा... लेकिन बंद भी नहीं होता – संबंध भी किसी गहरे तल पर बना चला जाता है।

चौथे शरीर पर फर्क पड़ना शुरू होता है – तुम्हें यह झलक मिलने लगती है कि विचार कुछ अलग है, मैं कुछ अलग हूं... विचार कुछ अलग, मैं कुछ अलग। लेकिन अभी भी तुम इसकी घोषणा नहीं कर सकते, और अभी भी विचार का आना यांत्रिक होता है – न तो तुम रोक सकते हो, न तुम ला सकते

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

हो।

जैसे मैंने यह बात कही कि क्रोध को रोको, तो पता चलेगा कि तुम मालिक हो। इससे उलटा भी कहा जा सकता है कि अभी क्रोध को लाकर बताओ, तब समझेंगे कि मालिक हो। तो ला भी नहीं सकते – कहोगे कि कैसे ले आयें! ...आये कैसे ? और अगर तुम ले आओ, तो बस उसी दिन से तुम मालिक हो जाओगे, उसी दिन से तुम रोक भी सकते हो – किसी भी क्षण। मालकियत जो है वह लाने ले जाने में अलग-अलग नहीं है; अगर तुम ले आये तो तुम रोक भी सकते हो।

और यह बड़े मजे की बात है कि रोकना जरा कठिन है, लाना जरा सरल है। इसलिए अगर मालकियत लानी हो तो लाने से शुरू करना सदा आसान है – बजाय रोकने के; क्योंकि लाने की हालत में तुम शांत होते हो न! रोकने की हालत में तुम क्रोध में होते ही हो, तो इसलिए तुम अपने होश में भी नहीं होते, रोकोगे उसे कैसे ? इसलिए लाने के प्रयास से शुरूआत करना सदा आसान पड़ता है, बजाय रोकने के प्रयास के। जैसे तुम्हें हंसी आ रही है और तुम नहीं रोक पा रहे, यह जरा कठिन है... लेकिन नहीं आ रही है और हंसना शुरू करो, तो तुम दो-चार मिनट में हंसी ले आओगे। और जब वह आ जायेगी तब तुम्हें सिक्रेट (रहस्य) भी पता चल जायेगा कि आ सकती है... कहां से आती, कैसे आती ? तब तुम रोकने का भी रहस्य जान सकते हो किसी दिन... रोका भी जा सकता है।

निर्विचार की झलक से तादात्म्य का टूटना

चौथे शरीर में तुम्हें फर्क तो दिखाई पड़ने लगेगा कि मैं अलग हूं और विचार कहीं से आते हैं... मैं विचार ही नहीं हूं। इसलिए चौथे शरीर में जहां-जहां निर्विचार होगा, जो मैंने पहले कहा, वहीं-वहीं तुम्हारा साक्षी भी आ जायेगा; और जहां-जहां विचार होगा, वहां-वहां साक्षी खो जायेगा। वे जो निर्विचार के गैप्स हैं, अंतराल हैं, वहां-वहां तुम पाओगे कि विचार तो अलग है, मैं अलग हूं, तादात्म्य नहीं है... लेकिन अभी भी तुम अवश इसको जानोगेभर, अभी बहुत कुछ कर न पाओगे। लेकिन करने की सारी चेष्टा चौथे शरीर में ही करनी पड़ती है।

इसलिए चौथे शरीर की मैंने दो संभावनाएं कही : एक जो सहज है वह, और एक जो साधना से उपलब्ध होगी – उन दोनों के बीच तुम डालते रहोगे। और जिस दिन साधना से तुम विवेक को, चौथे शरीर की दूसरी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

संभावना को... पहली संभावना विचार, दूसरी संभावना विवेक... दूसरी संभावना को उपलब्ध हो जाओगे, उसी दिन चौथा शरीर भी छूटेगा और तादात्म्य भी छूटेगा।

पांचवें शरीर में एकसाथ ही जब तुम... पांचवें शरीर में जाओगे तो दो बातें छूटेंगी : चौथा शरीर छूटेगा और तादात्म्य छूटेगा।

पांचवें शरीर में चित्त-वृत्तियों पर पूर्ण मालकियत

पांचवें शरीर में तुम विचार को चाहोगे तो लाओगे, नहीं चाहोगे तो नहीं लाओगे। विचार पहली दफा साधन बनेगा और आइटेंडिटि (तादात्म्य) पर निर्भर नहीं रह जायेगा। तुम चाहोगे कि क्रोध लाना है तो तुम क्रोध ला सकोगे, और तुम चाहोगे कि प्रेम लाना है तो तुम प्रेम ला सकोगे, और तुम चाहोगे कि कुछ नहीं लाना है तो तुम कुछ नहीं ला सकोगे, और तुम चाहो कि आधे क्रोध को वहीं कह दो रुको, तो वह वहीं रुक जायेगा; और तुम जिस विचार को लाना चाहोगे वह आयेगा और जिसको नहीं लाना चाहोगे उसकी कोई सामर्थ्य नहीं रह जायेगी।

गुरजिएफ की जिंदगी में इस तरह की बहुत घटनाएं हैं, इसलिए लोगों ने तो उसको समझा कि वह आदमी कैसा आदमी है! अक्सर तो वह ऐसा करता कि अगर उसके आसपास दो आदमी बैठे हैं, तो एक की तरफ इस तरह से देखता है कि भारी क्रोध में है और दूसरे की तरफ इस तरह से देखता है कि भारी प्रेम में है – इतनी जल्दी बदल लेता! और वे दो आदमी दो रिपोर्ट (प्रभाव) लेकर जाते – दोनों साथ मिलने आये थे और एक आदमी कहता है कि बड़ा खतरनाक, अजीब आदमी है; दूसरा कहता है कितना प्रेमी आदमी है!

यह बिलकुल संभव है, पांचवें शरीर पर बिलकुल आसान है। इसलिए गुजरिएफ बिलकुल समझ के बाहर हो गया लोगों के कि वह क्या कर रहा है! वह चेहरे पर हजार तरह के भाव तत्काल ला सकता था। उसमें कोई कठिनाई न थी उसको... और लाने का कुल कारण इतना था कि पांचवें शरीर में तुम पहली दफा मालिक होते हो, तुम जो चाहो...

तब क्रोध और प्रेम और घृणा और क्षमा... और सब... और तुम्हारे सारे विचार तुम्हारा खेल हो जाते हैं – इसके बाद तुम्हारा खेल है। और इसलिए तुम जब चाहो तब विश्राम पा सकते हो।

खेल से विश्राम आसान है, जिंदगी से विश्राम बहुत मुश्किल है। अगर मैं खेल में ही क्रोध कर रहा हूं, तो तुम्हारे चले जाने के बाद इस कमरे में क्रोध

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deobanu

Digitized by Madhuban Trust

में नहीं बैठा रहूंगा। और अगर मैं खेल में ही बोल रहा हूं, तो तुम्हारे चले जाने के बाद इस कमरे में बोलता नहीं रहूंगा। लेकिन अगर बोलना मेरी जिंदगी है, तो तुम चले जाओगे तो मैं बोलता रहूंगा – कोई नहीं सुनेगा तो मैं ही सुनूंगा, मैं ही बोलूंगा; क्योंकि वह मेरी जिंदगी है; वह कोई खेल नहीं है जिससे विश्राम हो जाये वह मेरी जिंदगी है जो चौबीस घंटे मुझे पकड़े हुए है।

तो वह आदमी रात में भी बोलेगा, सपने में भी बोलेगा, सपने में भी सभा इकट्ठी कर लेगा, वहां भी बोलता रहेगा। सपने में भी लड़ेगा, झगड़ेगा – वही करेगा जो दिन में किया है; वह चौबीस घंटे करेगा, क्योंकि वह जिंदगी है; वह उसका प्राण है।

विचार : अपने या पराये ?

पांचवें शरीर पर तुम्हारी आइडेंटिटि (तादात्म्य) टूट जाती है। इसलिए पांचवें शरीर पर पहली दफा तुम अपने बस से मौन होते हो, शून्य होते हो... और जब जरूरत होती है तो तुम विचार को करते हो। तो पांचवें शरीर से विचार का पहली दफा उपयोग शुरू होता है। अगर हम इसको ऐसा कहें तो ज्यादा ठीक होगा कि पांचवें शरीर के पहले विचार तुम्हें करता है और पांचवें शरीर से तुम विचार करते हो... उसके पहले तो तुम्हें कहना ठीक नहीं है कि हम विचार करते हैं।

और पांचवें शरीर पर एक बात और पता चलती है कि विचार केवल हमारा ही होता है, ऐसा भी नहीं है, दूसरे के विचार भी हममें प्रवेश करते रहते हैं – ऐसा नहीं है कि हमारा विचार हमारा ही है, उसमें बहुत चारों तरफ के विचार हममें प्रवेश करते रहते हैं... और हमें अक्सर ख्याल नहीं होता कि हम किस विचार को अपना कह रहे हैं ! वह किसी और का हो सकता है।

शक्तिशाली विचारों की उम्र लंबी

एक हिटलर पैदा होता है तो पूरे जर्मनी को अपना विचार दे देता है; और पूरे जर्मनी का आदमी समझता है कि ये मेरे विचार हैं। ये उसके विचार नहीं हैं। एक बहुत डाइनेमिक (सक्रिय) आदमी अपने विचारों को विकीर्ण कर रहा है और लोगों में डाल रहा है, और लोग उसके विचारों की सिर्फ प्रतिध्वनियां हैं। और यह डाइनामिज़्म (सक्रियता) इतना गंभीर और इतना गहरा है ...कि मुहम्मद को मरे हज़ार साल हो गये, कि जीसस को मरे दो हज़ार साल हो गये... क्रिश्चियन सोचता है कि मैं अपने विचार कर रहा हूं। वह दो हज़ार साल

CC-0. Public Domain. Vinia Kumar Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

पहले जो आदमी छोड़ गया है तरंगें, वे अब तक पकड़ रही हैं। महावीर या बुद्ध या कृष्ण या क्राइस्ट – अच्छे या बुरे कोई भी तरह के डाइनामिक लोग, जो छोड़ गये हैं वह तुम्हें पकड़ लेता है।

तैमूरलंग ने अभी भी पीछा नहीं छोड़ दिया मनुष्यता का... और न चंगेज़खां ने छोड़ा है – न कृष्ण ने छोड़ा है, न राम ने छोड़ा है। पीछा वे नहीं छोड़ते। उनकी तरंगें पूरे वक्त डोल रही हैं। तुम जिस तरंग को पकड़ने की हालत में होते हो, उसको पकड़ लेते हो।

विचारों के सागर से घिरा व्यक्ति

इसलिए अक्सर ऐसा हो जाता है कि सुबह एक आदमी बहुत भला था और दोपहर होते-होते बुरा हो गया। सुबह वे राम की तरंगों में रहे हों, दोपहर चंगेज़खां की तरंगों में! रिसेप्टीविटि (ग्राहकता) है और समय से फर्क पड़ जाता है। सुबह भिखमंगा तुम्हारे दरवाजे पर भीख नांगने आता है, क्योंकि सुबह सूरज के उगने के साथ बुरी तरंगों का प्रभाव सर्वाधिक कम होता है पृथ्वी पर। सूरज के थकते-थकते प्रभाव बढ़ना शुरू हो जाता है। सांझ को भिखारी भीख मांगने नहीं आता, क्योंकि सांझ को आशा नहीं है दया की किसी से भी। सुबह थोड़ी आशा है... कि अगर सुबह उठे आदमी से हम कहें कि दो पैसा दे दे, तो वह एकदम से इनकार न कर पायेगा; सांझ को 'हां' भरना जरा मुश्किल हो जायेगा। सांझ भर में उसका सब... हाथ थक गया है बुरी तरह से, अब वह इनकार करने की हालत में है। अब उसकी सारी चित्त-दिशा और है... सारी पृथ्वी का वातावरण भी और है।

तो जो विचार हमें लगते हैं कि हमारे हैं, वे भी हमारे नहीं हैं। यह तुम्हें पांचवें शरीर में ही पता चलेगा जाकर कि क्या आश्चर्यजनक है कि विचार भी बाहर से आता और जाता है – तुम पर विचार भी आता और जाता है... और तुम्हें पकड़ता है और छोड़ता है। और हज़ारों तरह के विचार हैं... और बहुत कंट्राडिक्टरी – आपस में विरोधी विचार आदमी को पकड़े हुए हैं। इतने विरोधी विचार पकड़े हुए हैं, इसीलिए इतना कन्फ्यूज़न (उलझन, भ्रांति) है। एक-एक आदमी इतना कन्फ्यूज्ड (उलझा हुआ) है। अगर तुम्हारे ही विचार हों, तो कन्फ्यूज़न की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन एक हाथ चंगेज़खां पकड़े हुए हैं और दूसरा हाथ कृष्ण पकड़े हुए हैं, अब कन्फ्यूज़न होनेवाला है, क्योंकि दोनों के विचार प्रतीक्षा कर रहे हैं कि तुम कब तैयारी दिखाओ, वे तुम्हारे भीतर प्रवेश कर जायें। वे सब मौजूद हैं चारों तरफ।

CC-0. Public Domain. Mumukshu Bhawan Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पांचवें शरीर में विचार-मुक्ति

यह पांचवें शरीर में तुम्हें पता चलेगा, तुम्हारी आइडेंटिटि (तादात्म्य) पूरी टूट जायेगी। लेकिन तब, जैसा मैंने कहा कि जो बड़ा भारी फर्क होगा वह यह होगा कि इसके पहले तुम्हारे पास थॉट्स थे, विचार थे, इसके बाद तुम्हारे पास थिंकिंग होगी, विचारणा होगी। और इनमें भी फर्क हैं। विचार आणविक, एटॉमिक चीजें हैं – तुम पर आते हैं, पराये होते हैं सदा।

ऐसा अगर हम कहें कि विचार सदा पराये होते हैं तो हर्जा नहीं है। विचारणा अपनी होती है, विचार सदा पराये होते हैं; थिंकिंग अपनी होती है, थॉट् हमेशा पराया होता है।

तो पांचवें शरीर से तुम में थिंकिंग (विचारणा) पैदा होगी, तुम विचार कर सकोगे – तुम सिर्फ विचारों को पकड़कर संगृहीत किये हुए नहीं बैठे रहोगे। और इसलिए पांचवें शरीर की जो विचारणा है, उसका कोई बोझ तुम पर नहीं होगा, वह तुम्हारी अपनी है। और पांचवें शरीर पर चूंकि विचारणा का जन्म हो जायेगा, उसको 'प्रज्ञा' कहो – जो भी नाम देना चाहें, हम दें। पांचवें शरीर पर चूंकि तुम्हारी अपनी इनट्यूशन, अपनी प्रज्ञा, अपनी बुद्धि, अपनी मेधा जग जायेगी, इस पांचवें शरीर के बाद तुम पर दूसरें के विचारों का समस्त प्रभाव क्षीण हो जायेगा – इस अर्थ में भी तुम आत्मवान बनोगे, इस अर्थ में भी तुम आत्मा को उपलब्ध हो जाओगे, तुम स्वयम् हो जाओगे; क्योंकि तुम्हारे पास अब अपने विचार हैं, अपनी विचार-शक्ति है... और तुम्हारे पास देखने की अपनी आंख है, अपना दर्शन है। इसके बाद तुम जो चाहोगे, वह आ जायेगा; तुम जो चाहोगे, वह नहीं आयेगा; तुम जो सोचोगे, सोच सकोगे; तुम जो नहीं सोचोगे, नहीं सोच सकोगे – तुम मालिक हो। और यहां से आइडेंटिटि (तादात्म्य) का कोई सवाल नहीं रह जाता।

छठवें शरीर में विचारणा भी अनावश्यक

छठवें शरीर में विचारणा की भी कोई जरूरत नहीं रह जाती है। चौथे शरीर तक विचार की जरूरत है, पांचवें पर विचारणा – थिंकिंग, प्रज्ञा, छठवें शरीर पर वह भी समाप्त हो जाती है;क्योंकि छठवें शरीर पर तुम वहां होते हो जहां कोई जरूरत ही नहीं होती – तुम कॉज़मिक हो जाते हो; तुम ब्रह्म के साथ एक हो जाते हो; अब कोई दूसरा बचता नहीं।

असल में सब विचार दूसरे के साथ संबंध है। चौथे शरीर के पहले का जो विचार है, वह मूर्छित संबंध है... दूसरे के साथ; पांचवें शरीर पर जो विचार

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

है वह अमूर्छित संबंध है... लेकिन दूसरे के ही साथ । आखिर विचार की ज़रूरत क्या है ? विचार की ज़रूरत है क्योंकि दूसरे से संबंधित होना है । चौथे तक मूर्छित संबंध है, पांचवें पर जाग्रत संबंध है, छठवें पर संबंध के लिए कोई नहीं बचता – रिलेटेड (संबंधित) नहीं रहे, कॉज़मिक हो गये – 'तुम' और मैं' एक ही हो गये । तो अब तो कोई सवाल नहीं बचता... विचार की अब कोई जगह नहीं बचती है जहां विचार खड़ा हो ।

छठवें शरीर में केवल 'ज्ञान' शेष

इसलिए ब्रह्म शरीर है छठवां, वहां कोई विचार नहीं है, ब्रह्म में विचार नहीं है । इसलिए हम इसको ऐसा कह सकते हैं कि ब्रह्म में ज्ञान है ।

असल में विचार जो है, चौथे शरीर तक मूर्छित विचार, गहन अज्ञान है; क्योंकि वह इस बात की खबर है कि हमें विचार की ज़रूरत है अज्ञान से लड़ने के लिए । पांचवें शरीर में भीतर तो ज्ञान है, लेकिन बाहर जो हमसे अन्य हैं, उसके बाबत अब भी अज्ञान है – अभी भी वह अन्य दिखाई पड़ रहा है... इसलिए पांचवें शरीर में विचार करने की ज़रूरत है । छठवें शरीर में बाहर और भीतर कोई भी नहीं रहा – बाहर-भीतर न रहा, मैं-तू न रहा, यह-वह न रहा – अब कोई फासला न रहा जहां विचार की ज़रूरत है; अब तो जो है सो है । इसलिए छठवें शरीर में ज्ञान है, विचार नहीं है ।

सातवां शरीर ज्ञानातीत है

सातवें में ज्ञान भी नहीं है; क्योंकि जो जानता था, अब वह भी नहीं है; जो जाना जा सकता था, वह भी नहीं है । इसलिए सातवें में ज्ञान भी नहीं है । अज्ञान नहीं, ज्ञानातीत है सातवीं अवस्था – बियांड नॉलेज है । कोई चाहे तो उसको अज्ञान भी कह सकता है ।

इसलिए अक्सर ऐसा होता है कि परम ज्ञानी और परम अज्ञानी कभी-कभी बिलकुल एक से मालूम पड़ते हैं । परम ज्ञानी और परम अज्ञानी में कई बार बड़ा एकसा व्यवहार होगा । इसलिए छोटे बच्चे में और ज्ञान को उपलब्ध बूढ़े में बड़ी समानता हो जायेगी – वस्तुतः नहीं, लेकिन बड़े ऊपर से एक सा दिखाई पड़ने लगेगा । कभी-कभी परम संत का व्यवहार बिलकुल बच्चे जैसा हो जायेगा; कभी-कभी बच्चे के व्यवहार में परम संतता की झलक दिखाई पड़ेगी । और कभी-कभी परम ज्ञानी जो है वह परम अज्ञानी हो जायेगा, बिलकुल जड़भरत हो जायेगा – वह ऐसा मालूम पड़ने लगेगा कि इससे अज्ञानी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

और कौन होगा ! क्योंकि वह भी बियांड नॉलेज (ज्ञानातीत) है और यह बिलो नॉलेज (ज्ञान के पूर्व) है । एक ज्ञान के आगे चला गया, एक ज्ञान के अभी पीछे खड़ा है – इन दोनों में एक समानता है कि ज्ञान के बाहर हैं; दोनों ज्ञान के बाहर हैं, इतनी समानता है ।

समाधि के तीन प्रकार

प्रश्न : जिसको आप समाधि कहते हैं, वह किस शरीर में उपलब्ध होती है ?

असल में बहुत तरह की समाधियां हैं । इसलिए एक समाधि तो चौथे शरीर और पांचवें शरीर के बीच में घटेगी । और यह भी ध्यान रहे कि समाधि जो है, वह सदा दो शरीरों के बीच में घटती है; वह संध्याकाल है । समाधि जो है वह किसी एक शरीर की घटना नहीं है, दो शरीरों के बीच की घटना है; वह संध्याकाल है । जैसे अगर कोई पूछे कि संध्या, सांझ दिन की घटना है कि रात की ? तो हम कहेंगे कि सांझ न दिन की घटना है, न रात की – रात और दिन के बीच की घटना है ऐसे ही समाधि जो है – पहली समाधि चौथे और पांचवें शरीर के बीच में घटती है । चौथे-पांचवें शरीर के बीच में जो समाधि घटती है, उसी से आत्मज्ञान उपलब्ध होता है । एक समाधि पांचवें और छठवें शरीर के बीच में घटती है । पांचवें और छठवें शरीर के बीच में जो समाधि घटती है, उससे ब्रह्मज्ञान उपलब्ध होता है । एक समाधि छठवें और सातवें के बीच में घटती है । छठवें और सातवें के बीच में जो घटती है, उससे निर्वाण उपलब्ध होता है । तो तीन समाधियां हैं साधारणतः । तो ये तीन समाधियां तीन शरीरों के बीच में घटती हैं ।

चौथे शरीर में समाधि की मानसिक झलक

और एक फाल्स (भ्रामक) समाधि को भी समझ लेना चाहिए, जो समाधि नहीं है लेकिन चौथे शरीर में घटती है... लेकिन समाधि जैसी प्रतीत होती है । जिसको जापान में ज़ेन 'सतोरी' कहते हैं, वह सतोरी इसी तरह की समाधि है । वह वस्तुतः समाधि नहीं है ।

जैसे एक चित्रकार को घट जाता है कभी, एक मूर्तिकार को घटता है, एक संगीततज्ञ को घटता है... कि कभी वह लीन हो जाता है पूरी तरह और बड़े आनंद का अनुभव करता है । लेकिन वह चौथे, साइकिक (मनस) शरीर की घटनाएं हैं ।

असल चौथे शरीर में जिन बिलकुल समाहित और लीन हो जाये... किसी

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

भी बात को लेकर – सुबह सूरज को उगता देखकर, एक संगीत की धुन सुनकर, एक नृत्य को देखकर, एक फूल को खिलते देखकर – अगर चित्त बिलकुल लीन हो जाये, तो एक फाल्स समाधि, एक मिथ्या समाधि घटित होती है।

ऐसी मिथ्या समाधि हिप्नोसिस से पैदा हो सकती है। ऐसी मिथ्या समाधि मिथ्या शक्तिपात से घटित हो सकती है। ऐसी मिथ्या समाधि शराब से, गांजे से, चरस से, मेस्कलिन से, मेरीजुआना से, एस.एल.डी. से पैदा हो सकती है।

तो चार तरह की समाधियां हुईं, अगर ऐसा समझे तो। तीन समाधियां जो ऑथेंटिक, प्रामाणिक समाधियां हैं। उनमें भी तारतम्यता है। और एक चौथी झूठी समाधि... जो बिलकुल समाधि जैसी मालूम पड़ती है, लेकिन सिर्फ समाधि का ख्याल होती, घटना नहीं होती... और धोखे में डाल सकती है... और अनेक लोगों को धोखे में डाला हुआ है, और किसी शरीर में घटती है ? सिर्फ फाल्स समाधि चौथे शरीर में घटती है – सिर्फ झूठी समाधि जो हैं, वह संध्या नहीं है; वह किसी शरीर में घटती है; वह चौथे शरीर में घटती है। बाकी तीनों समाधियां शरीरों के बाहर घटती हैं – संक्रमण काल में... जब एक शरीर से तुम दूसरे में जा रहे होते – तब।

समाधि एक द्वार है, पैसेज है।

चौथे से पांचवें के बीच में एक समाधि है, जिससे आत्मज्ञान उपलब्ध होता है। पहली समाधि पर आदमी रुक सकता है। पहली तो बहुत बड़ी बात है, आमतौर से तो चौथे की फाल्स समाधि पर रुक जाता है; क्योंकि वह सरल है बहुत – खर्च कम पड़ता, मेहनत नहीं होती; और ऐसे ही पैदा हो सकती है; उसमें रुक जाता है। पहली समाधि बहुत कठिन बात हो जाती है – चौथे से पांचवें की यात्रा। दूसरी समाधि और कठिन हो जाती है... आत्मा से परमात्मा की यात्रा। और तीसरी तो सर्वाधिक कठिन हो जाती है। उसके लिये जो शब्द खोजे गये, वे सब कठिन हैं – वज्र भेद; वह सर्वाधिक कठिन है – होने से न होने की यात्रा, जीवन से मृत्यु में छलांग, अस्तित्व से अनस्तित्व में डूब जाना।

तो, ये तीन समाधियां हैं। पहली को आत्मसमाधि कहो, दूसरे को ब्रह्मसमाधि कहो, तीसरे को निर्वाणसमाधि कहो; और पहली को... और भी पहली को, मिथ्यासमाधि कहो। और उससे, सबसे ज्यादा बचने की ज़रूरत है, क्योंकि वह जल्दी से उपलब्ध हो सकती है... चौथे शरीर में घटती है। और इसको भी एक शर्त और कसौटी समझ लेना कि अगर किसी शरीर में घटे तो फाल्स होगी। दो शरीरों के बीच में ही घटनी चाहिए, वह द्वार है। उसको

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

बीच कमरे में होने की कोई ज़रूरत नहीं है। उसको कमरे के बाहर होना चाहिए और दूसरे कमरे के जोड़ पर होना चाहिए। वह पैसेज है, मार्ग है।

कुंडलिनी शक्ति और सर्प में समानताएं

प्रश्न : कुंडलिनी शक्ति का प्रतीक सांप को क्यों माना गया है ? कृपया उसके सभी कारणों का उल्लेख करें? थियोसॉफी के एंबलम, प्रतीक में एक वृत्ताकार सांप हैं जिसकी पूंछ मूंह के अंदर है। रामकृष्ण मिशन के प्रतीक में सांप के फन को स्पर्श करती हुई उसकी पूंछ है। कृपया इनके अर्थ भी स्पष्ट करें।

कुंडलिनी के लिए सर्प का प्रतीक बड़ा मौजूं (अर्थपूर्ण) है। शायद उससे अच्छा कोई प्रतीक नहीं है। इसलिए कुंडलिनी ने ही नहीं, सर्प ने बहुत-बहुत यात्राएं की हैं... उसके प्रतीक ने। और दुनिया के किसी कोने में भी ऐसा नहीं है कि सर्प कभी न कभी उनके धर्म में प्रवेश न कर गया हो; क्योंकि सर्प में कई खूबियां हैं जो कुंडलिनी से तालमेल खाती हैं।

पहली तो बात यह कि सर्प का ख्याल करते ही सरकने का ख्याल आता है – और कुंडलिनी का पहला अनुभव किसी चीज के सरकने का अनुभव है... कोई चीज जैसे सरक गयी – जैसे सर्प सरक गया।

सर्प का ख्याल करते ही एक दूसरी चीज ख्याल में आती है कि सर्प के कोई पैर नहीं हैं, लेकिन गति करता है – गति का कोई साधन नहीं है उसके पास, कोई पैर नहीं है – लेकिन गति करता है। कुंडलिनी के पास भी कोई पैर नहीं है, और कोई साधन नहीं है – निपट ऊर्जा है, फिर भी यात्रा करती है।

तीसरी बात जो ख्याल में आती है कि सर्प जब बैठा हो, विश्राम कर रहा हो, तो कुंडल मारकर बैठ जाता है। जब कुंडलिनी बैठी हालत में होती है, हमारे शरीर की ऊर्जा जब जगी नहीं है, तो वह भी कुंडल मारे ही बैठी रहती है। असल में एक ही जगह पर बहुत लंबी चीज को बैठना हो तो कुंडल मार कर ही बैठ सकती है... और तो कोई उपाय भी नहीं है उसके बैठने का। वह कुंडल लगाकर बैठ जाये तो बहुत लंबी चीज भी बहुत छोटी जगह में बन जाये। और बहुत बड़ी शक्ति बहुत छोटे मे बिंदु पर बैठी है, तो कुंडल मारकर ही बैठ सकती है। फिर सर्प जब उठता है, तो एक-एक कुंडल टूटते हैं – उसके जैसे-जैसे वह उठता है उसके कुंडल टूटते हैं। ऐसा ही एक-एक कुंडल कुंडलिनी का भी टूटता हुआ मालूम पड़ता है, जब कुंडलिनी का सर्प उठना शुरू होता है।

सर्प कभी खिलवाड़ में अपनी पूंछ भी पकड़ लेता है। सर्प का पूंछ पकड़ने

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

का प्रतीक भी कीमती है। और अनेक लोगों को वह ख्याल में आया कि वह पकड़ने का... पूंछ को पकड़ लेने का प्रतीक बड़ा कीमती है। वह कीमती इसलिए है कि जब कुंडलिनी पूरी जागेगी, तो वह वर्तुलाकार हो जायेगी... और भीतर उसका वर्तुल बनना शुरू हो जायेगा – उसका फन अपनी ही पूंछ पकड़ लेगा; सांप एक वर्तुल बन जायेगा।

अब कोई प्रतीक ऐसा हो सकता है कि सांप के मुंह ने उसकी पूंछ को पकड़ा। अगर पुरुष-साधना की दृष्टि से प्रतीक बनाया गया होगा तो मूंह पूंछ को पकड़ेगा – आक्रामक होगा; और अगर स्त्री-साधना के ध्यान से प्रतीक बनाया गया होगा तो पूंछ मूंह को छूती हुई मालूम पड़ेगी – समर्पित पूंछ है वह; मुंह ने पकड़ी नहीं है। यह फर्क पड़ेगा प्रतीक में, और कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है।

सहस्रार में कुंडलिनी का पूरा विस्तार

यह जो सर्प का फन है, यह भी सार्थक मालूम पड़ा; क्योंकि पूंछ तो उसकी पतली होती है, लेकिन उसका फन बड़ा होता है। और जब कुंडलिनी पूरी की पूरी जागती है, तो सहस्रार में जाकर फन की भांति फैल जाती है। उसमें बहुत फूल खिलते हैं, वह बहुत विस्तार ले लेती है; पूंछ तब उसकी बहुत छोटी रह जाती है। सर्प जब कभी खड़ा होता है तो बड़ा आश्चर्यजनक है : वह पूंछ के बल पूरा खड़ा हो जाता है। वह भी एक मिरेकल है, एक चमत्कार है।

सर्प में हड्डी नहीं होती, वह बिना हड्डी का जानवर है, लेकिन वह पूंछ के बल खड़ा हो सकता है। और जब बिना हड्डी का जानवर, कोई रेंगता हुआ पशु – सर्प जैसा – बिना हड्डियों के पूंछ के बल पूरा खड़ा हो जाता है, तो वह निपट ऊर्जा के सहारे खड़ा है, और कोई उपाय नहीं; उसके पास और ठोस साधन नहीं हैं खड़े होने के – सिर्फ शक्ति के बल, सिर्फ संकल्प के बल खड़ा है। खड़ा होने में कोई बहुत मैटीरियल (स्थूल) ताकत नहीं है उसके पास। समझ रहे हैं मेरा मतलब ? तो जब हमारी कुंडलिनी पूरी जागकर खड़ी होती है तो उसके पास कोई मैटीरियल (स्थूल) सहारा नहीं होता, एकदम इमैटीरियल फोर्स...

इसलिए सर्प प्रतीक की तरह लगा। और भी कई कारण थे जो सर्प में सार्थक लगे। जैसे, एक अर्थ में सर्प बहुत इनोसेंट है, बड़ा भोला है। इसलिए भोलेशंकर उसको सिर पर रखे हुए हैं। वह बहुत भोला है; एकदम भोला है। ऐसे अपनी तरफ से किसी को सताने नहीं जाता, लेकिन अगर कोई छेड़ दे

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Jabalpur

Digitized by Madhuban Trust

तो खतरनाक सिद्ध हो सकता है । तो यह ख्याल भी कुंडलिनी में है कि कुंडलिनी ऐसे बहुत इनोसेंट (सीधी-सादी) शक्ति है । अपनी तरफ से तुम्हें परेशान नहीं करती, लेकिन अगर तुम गलत ढंग से छेड दो, तो खतरे में पड़ सकते हो । भारी खतरा हो सकता है । इसलिए गलत ढंग से छेड़ना खतरनाक है, वह बोध भी ख्याल में है ।

इन सारी बातों को ध्यान में रखकर वह प्रतीक... उससे बेहतर कोई प्रतीक दिखाई नही पड़ा – सर्प से बेहतर । और सारी दुनिया में सर्प जो है, वह विज़डम का प्रतीक भी है, प्रज्ञा का प्रतीक भी है । जीसस का वचन है : सर्प-जैसे बुद्धिमान – चालाक, और कबूतर-जैसे भोले... ऐसे बनो । सर्प बहुत ही बुद्धिमान प्राणी है – बहुत सजग, बहुत जागरूक, बहुत तेज, बहुत गतिमान, वे सब उसकी खूबियां हैं । कुंडलिनी भी वैसी चीज है । बुद्धिमत्ता का चरम शिखर उससे छुआ जायेगा । उतनी ही चपल और गतिमान भी है । उतनी ही शक्तिशाली भी है ।

कुंडलिनी का आधुनिक प्रतीक – विद्युत व रोकट

तो पुराने दिनों में जब यह प्रतीक खोजा गया कुंडलिनी के लिए, तब शायद सर्प से बेहतर कोई प्रतीक नहीं था – अब भी नहीं है; लेकिन शायद भविष्य में और प्रतीक हो जायें... रॉकेट की तरह । कभी भविष्य का कोई ख्याल रॉकेट की तरह कुंडलिनी को पकड़ सकता है; वैसी उसकी यात्रा है – एक अंतरिक्ष से दूसरे अंतरिक्ष, एक ग्रह से दूसरे ग्रह – बीच में शून्य की पर्त है – वह कभी प्रतीक बन सकता है ।

प्रतीक तो युग खोजता है । यह प्रतीक तो उस दिन खोजा गया जब आदमी और पशु बड़े निकट थे । उस वक्त सारे प्रतीक हमने पशुओं से खोजे, क्योंकि हमारे पास वही तो जानकारी थी, उन्हीं से हम खोजते थे । सर्प उस समय हमारी नजर में सबसे निकटतम प्रतीक था ।

जैसे विद्युत... उस दिन हम नहीं कह सकते थे । आज जब मैं बात करता हूं तो कुंडलिनी के साथ इलेक्ट्रिसिटि (विद्युत) की बात कर सकता हूं । आज से पांच हजार साल पहले कुंडलिनी के साथ विद्युत की बात नहीं की जा सकती थी, क्योंकि विद्युत का कोई प्रतीक नहीं था । लेकिन सर्प में विद्युत जैसी क्वालिटि (गुण) भी है । हमें अब कठिन मालूम होता है, क्योंकि हममें से बहुतों के जीवन में सर्प का कोई अनुभव ही नहीं है । हमारी बड़ी कठिनाई है, क्योंकि हमारे लिए सर्प का कोई अनुभव नहीं है – कुंडलिनी का तो है ही नहीं, सर्प का भी

CC-0. Public Domain. Vidin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

बहुत अनुभव नहीं है। सर्प हमारे लिए एक मिथ (पौराणिक कथा) है।

आधुनिक युग में सर्प से अपरिचय और कुंडलिनी से भी

अभी पिछली दफा लंदन में बच्चों का एक सर्वे किया गया, तो लंदन में सात लाख ऐसे बच्चे हैं जिन्होंने गाय नहीं देखी। तो जिन बच्चों ने गाय न देखी हो, उन्होंने सर्प को देखा हो, यह जरा मुश्किल मामला है। ...नहीं। अब जिन बच्चों ने गाय नहीं देखी है, अब इनका चिंतन, इनका सोचना, इनके प्रतीक बहुत भिन्न हो जायेंगें।

सर्प बाहर हो गया दुनिया से – वह हमारी दुनिया का अब हिस्सा नहीं है बहुत। कभी वह हमारा बहुत निकट पड़ोसी था – चौबीस घंटे साथ था, सत्संग था। और तब आदमी ने उसकी सब चपलताएं देखीं – उसकी बुद्धिमानी देखी है, उसकी गति देखी है – उसकी सरलता भी देखी है, उसका खतरा भी देखा है – वह सब देखा है। ऐसी घटनाएं हैं जब कि कोई सर्प एक बच्चे को बचा लेता है... एक निरीह बच्चा पड़ा है, और सर्प उस पर फन मारकर बैठ जाये और उसको बचा ले; वह इतना भोला भी है। और ऐसी घटनाएं हैं भी कि वह खतरनाक से खतरनाक आदमी को एक दंश मार दे और समाप्त कर दे। वे दोनो उसकी संभावनाएं हैं।

तो जब आदमी सर्प के बहुत निकट रहा होगा, तब उसको पहचाना था वह। उसी वक्त कुंडलिनी की बात भी चली थी, वे दोनों तालमेल खा गये। वह बहुत पुराना प्रतीक बन गया। लेकिन सब प्रतीक अर्थपूर्ण हैं। क्योंकि जब बनाये गये हैं हजारों साल में, तो उनके पीछे कोई तालमेल है। लेकिन अब टूट जायेगा, बहुत दिन सर्प का प्रतीक नहीं चलेगा। अब बहुत दिन तक हम कुंडलिनी को सरपेंट पावर नहीं कह सकेंगे, क्योंकि सर्प बेचारा अब कहां है! अब उनमें उतनी शक्ति भी कहां है! अब वह जिन्दगी के रास्ते पर कहीं दिखाई नहीं पड़ता। वह कहीं हमारा पड़ोसी भी नहीं रहा, हमारे पास भी नहीं रहता। उससे हमारे कोई संबंध नहीं रह गये हैं। इसलिए यह सवाल उठता है, नहीं तो पहले यह कभी सवाल नहीं उठ सकता था, क्योंकि सर्प एकमात्र प्रतीक था।

शारीरिक संरचना में रूपांतरण

प्रश्न : ऐसा कहा गया है कि कुंडलिनी जब जागती है तो वह खून पी जाती है, मांस खा जाती है। इसका क्या अर्थ है?

हां, इसका अर्थ होता है... इसका अर्थ होता है। इसका अर्थ... और

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

बिलकुल वैसे ही होता है, जैसा कहा गया है। प्रतीक अर्थ नहीं होता। असल में कुंडलिनी जागे तो शरीर में बड़े रूपांतरण होते हैं... बड़े रूपांतरण होते हैं। कोई भी ऊर्जा शरीर में जागेगी नयी, तो शरीर का पुराना पूरा का पूरा कम्पोज़ीशन (संरचना) बदलता है। बदलेगा ही। जैसे, हमारा शरीर कई तरह के व्यवहार कर रहा है जिनका हमें पता नहीं है – जो अनजाने और अनकांशस (अचेतन) हैं।

जैसे कंजूस आदमी है। अब कंजूसी तो मन की बात है, लेकिन शरीर भी उसका कंजूस हो जायेगा... और शरीर उन तत्त्वों को डिपाज़िट (जमा) करने लगेगा जिनकी भविष्य में ज़रूरत है – अकारण इकट्ठे कर लेगा – इतने इकट्ठे कर लेगा कि उनके इकट्ठे होने से परेशानी में पड़ जायेगा। वह बोझिल हो जायेगा।

अब एक आदमी बहुत भयभीत है... तो शरीर उन तत्त्वों को बहुत इकट्ठे कर के रखेगा जिनसे भय पैदा किया जा सकता है। नहीं तो कभी भय का तत्व न रहे पास, और तुम्हें भयभीत होना है, तो शरीर क्या करेगा ? तुम उससे मांग करोगे – मुझे भयभीत होना है... और शरीर के पास भय की ग्रंथियां नहीं हैं, भय का रस नहीं है – तो क्या करेगा ? तो वह इकट्ठा करता है।

भयभीत आदमी का शरीर भय की ग्रंथियां इकट्ठी कर लेता है, भय इकट्ठा कर लेता है। अब जिस आदमी को भय में पसीना छूटता है, उसके शरीर में पसीने की ग्रंथियां बहुत मजबूत हो जाती हैं... और बहुत पसीना वह इकट्ठा करके रखता है। कभी भी रोज दिन में दस दफे ज़रूरत पड़ जाती है। तो हमारा शरीर जो है, वह हमारे चित्त के अनुकूल बहुत कुछ इकट्ठा करता रहता है।

जब हमारा चित्त बदलेगा तो शरीर बदलेगा... और कुंडलिनी जागेगी तो पूरा रूपांतरण होगा। उस रूपांतरण में बहुत कुछ बदलाहट होगी। उसमें तुम्हारा मांस कम हो सकता है, तुम्हारा खून कम हो सकता है, लेकिन उतना ही कम हो सकता है जितना कि तुम्हारे लिए ज़रूरत रह जाये। शरीर एकदम रूपांतरित होगा। शरीर के लिए जितना निपट आवश्यक है, वह रह जायेगा, शेष सब जलकर खाक हो जायेगा – तभी तुम हलके हो पाओगे... तभी उड़ने योग्य हो पाओगे। वह होगा फर्क।

इसलिए वह ठीक है ख्याल उनका। इसलिए साधक को एक विशेष प्रकार का भोजन, एक विशेष प्रकार की जीवन व्यवस्था... वह सब जरूरी है – अन्यथा वह बहुत मुश्किल में पड़ सकता है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

फिर कुंडलिनी जब जागेगी, तुम्हारे भीतर बहुत गर्मी पैदा होगी... क्योंकि वह तो एक इलेक्ट्रिक फोर्स (विद्युतीय ऊर्जा) है; वह तो बहुत तापग्रस्त ऊर्जा है।

कुंडलिनी की आग में सब कचरा भस्म

जैसा कि मैंने तुमसे कहा कि सर्प एक प्रतीक है, कुछ जगह कुंडलिनी को अग्नि का ही प्रतीक समझा गया है। वह भी अच्छा प्रतीक था। तो वह आग की तरह ही जलेगी तुम्हारे भीतर और लपटों की तरह ऊपर उठेगी – उसमें तुम्हारा बहुत कुछ जलेगा। तो अत्यंत रूखापन भीतर पैदा हो सकता है कुंडलिनी के जगने से। इसलिए व्यक्तित्व स्निग्ध चाहिए... और व्यक्तित्व में थोड़े रस-स्रोत चाहिएं।

अब जैसे क्रोधी आदमी है... अगर क्रोधी आदमी की कुंडलिनी जग जाये तो वह मुश्किल में पड़ेगा – क्योंकि वह वैसे ही रूखा आदमी है... और एक आग जग जाये उसके भीतर, तो कठिनाई हो जायेगी। प्रेमी आदमी है, वह स्निग्ध है – उसके भीतर रस की स्निग्धता है। कुंडलिनी जगेगी तो कठिनाई नहीं होगी।

इन सब बातों को ध्यान में रखकर वह बात कही गयी है – लेकिन वह बहुत क्रूड (कठोर) ढंग से कही गयी है। और पुराना ढंग सभी क्रूड (कठोर) था। वह बहुत विकसित नहीं है कहने का ढंग। पर ठीक कहा है कि मांस जलेगा, खून जलेगा, मज्जा जलेगी – क्योंकि तुम बदलोगे पूरे के पूरे; तुम दूसरे आदमी होनेवाले हो – तुम्हारी सारी की सारी व्यवस्था, सारी कंपोज़ीशन (संरचना) बदलने को है। इसलिए साधक की तैयारी में वह भी ध्यान में रखना अत्यंत ज़रूरी है।

बंबई, रात्रि, दिनांक 11 जुलाई, 1970.

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तेरहवीं प्रश्नोत्तर चर्चा

अज्ञात अपरिचित गहराइयों में

शरीर : मन का अनुगामी

प्रश्न : नारगोल शिविर में आपने कहा कि योग के आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बंध का आविष्कार ध्यान की अवस्थाओं में हुआ तथा ध्यान की विभिन्न अवस्थाओं में विभिन्न आसन व मुद्राएं बन जाती हैं जिन्हें देखकर साधक की स्थिति बताई जा सकती है। इसके उलटे यदि वे आसन और मुद्राएं सीधे की जायें तो ध्यान की वही भावदशा बन सकती है। तब क्या आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बंधों के अभ्यास से ध्यान हो सकता है ? ध्यान साधना में उनका क्या महत्त्व और उपयोग है ?

प्रारंभिक रूप से ध्यान ही उपलब्ध हुआ, लेकिन ध्यान के अनुभव से ज्ञात हुआ कि शरीर बहुत सी आकृतियां लेना शुरू करता है। असल में जब भी मन की एक दशा होती है तो उसके अनुकूल शरीर भी एक आकृति लेता है। जैसे जब आप प्रेम में होते हैं तो आपका चेहरा और ढंग का हो जाता है, जब क्रोध में होते हैं तो और ढंग का हो जाता है।

जब आप क्रोध में होते हैं तब आपके दांत भिंच जाते हैं, मुट्ठियां बंध जाती हैं, शरीर लड़ने को या भागने को तैयार हो जाता है – ऐसे ही, जब आप क्षमा में होते हैं तब मुट्ठी कभी नहीं बंधती, हाथ खुला हुआ हो जाता है। क्षमा का भाव अगर किसी आदमी में हो तो वह क्रोध की भांति मुट्ठी बांधकर

CC-0. Public Domain. Vidin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

नहीं रह सकता। जैसे मुट्ठी बांधना हमला करने की तैयारी है, ऐसे मुट्ठी खोलकर खुला हाथ कर देना हमले से मुक्त करने की सूचना है – वह दूसरे को अभय देना है; मुट्ठी बांधना दूसरे को भय देना है।

शरीर एक स्थिति लेता है, क्योंकि शरीर का उपयोग ही यही है कि मन जिस अवस्था में हो, शरीर तत्काल उस अवस्था के योग्य तैयार हो जाये। शरीर जो है, अनुगामी है; वह पीछे अनुगमन करता है।

तो साधारण स्थिति में... यह तो हमें पता है कि एक आदमी क्रोध में क्या करेगा; यह भी पता है कि प्रेम में क्या करेगा; यह भी पता है कि श्रद्धा में क्या करेगा – लेकिन और गहरी स्थितियों का हमें कोई पता नहीं है।

जब भीतरी चित्त में वे गहरी स्थितियां पैदा होती हैं, तब भी शरीर में बहुत कुछ होता है – मुद्राएं बनती हैं... जो कि बड़ी सूचक हैं; जो भीतर की खबर लाती हैं। आसन भी बनते हैं जो कि परिवर्तन के सूचक हैं।

असल में, भीतर की स्थितियों की तैयारी के समय तो बनते हैं आसन... और भीतर की स्थितियों की खबर देने के समय बनती हैं मुद्राएं। भीतर जब एक परिवर्तन चलता है तो शरीर को भी उस नये परिवर्तन के योग्य एडजस्टमेंट (संतुलन) खोजना पड़ता है।

अब भीतर यदि कुंडलिनी जाग रही है तो उस कुंडलिनी के लिए मार्ग देने के लिए शरीर आड़े-तिरछे न मालूम कितने रूप लेगा – वह मार्ग कुंडलिनी को भीतर मिल सके, इसलिए शरीर की रीढ़ बहुत तरह के तोड़ करेगी। जब कुंडलिनी जाग रही हो तो सिर भी विशेष स्थितियां लेगा। जब कुंडलिनी जाग रही है तो शरीर को कुछ ऐसी स्थितियां लेनी पड़ेंगी जो उसने कभी नहीं लीं। अब जैसे – जब हम जागते हैं तो शरीर खड़ा होता है या बैठता है; जब हम सोते हैं तब खड़ा और बैठा नहीं रह जाता, उसे लेटना पड़ता है।

समझ लें एक आदमी ऐसा पैदा हो जो सोना न जानता हो जन्म से साथ, तो वह कभी लेटेगा नहीं। तीस वर्ष की उम्र में उसको पहली दफे नींद आये, तो वह पहली दफा लेटेगा – क्योंकि उसके भीतर की चित्त-दशा बदल रही है और वह नींद में जा रहा है, तो उसको बड़ी हैरानी होगी कि यह लेटना अब तक तो कभी घटित नहीं हुआ, आज वह पहली दफा लेट क्यों रहा है! अब तक वह बैठता था, चलता था, उठता था – सब करता था, लेटता भर नहीं था। अब नींद की स्थिति बन सके भीतर इसलिए लेटना बड़ा सहयोगी है; क्योंकि लेटने के साथ ही मन को एक व्यवस्था में जाने में सरलता हो जाती है। लेटने में भी अलग-अलग व्यक्तियों की अलग-अलग स्थितियां होती हैं,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

एक सी नहीं होतीं; क्योंकि अलग-अलग व्यक्तियों के चित्त भिन्न होते हैं।

जैसे, जंगली आदमी तकिया नहीं रखता है, लेकिन सभ्य आदमी बिना तकिये के नहीं सो सकता। जंगली आदमी इतना कम सोचता है कि उसके सिर की तरफ खून का प्रवाह बहुत कम होता है। और नींद के लिए जरूरी है कि सिर की तरफ खून का प्रवाह कम हो जाये। अगर प्रवाह ज्यादा है तो नींद नहीं आयेगी, क्योंकि सिर के स्नायु शिथिल नहीं हो पायेंगे, विश्राम में नहीं जा पायेंगे – उनमें खून दौड़ता रहेगा। इसलिए आप तकिये पर तकिये रखते चले जाते हैं। जैसे आदमी शिक्षित होता है – सुसंकृत, तकिये ज्यादा होते जाते हैं; क्योंकि गर्दन इतनी ऊंची होनी चाहिए कि खून भीतर न चला जाये सिर के। जंगली आदमी बिना तकिये के सो सकता है।

ये हमारे शरीर की स्थितियां हमारे भीतर की स्थितियों के अनुकूल बनती हैं। तो आसन बनने शुरू होते हैं तुम्हारे भीतर की ऊर्जा के जागरण और विभिन्न रूपों में गति करने से। विभिन्न चक्र भी शरीर को विभिन्न आसनों में ले जाते हैं। और मुद्राएं पैदा होती हैं जब तुम्हारे भीतर एक स्थिति बनने लगती है – तब भी तुम्हारे हाथ, तुम्हारे चेहरे, तुम्हारे आंख की पलकें, सबकी मुद्राएं बदल जाती हैं।

यह ध्यान में होता है। लेकिन, इससे उलटी बात भी स्वाभाविक ख्याल में आयी है कि यदि हम इन क्रियाओं को करें तो क्या ध्यान हो जायेगा ? इसे थोड़ा समझना ज़रूरी है।

आसनों से चित्त में परिवर्तन अनिवार्य नहीं

ध्यान में ये क्रियाएं होती हैं, लेकिन, फिर भी अनिवार्य नहीं हैं – यानी ऐसा नहीं है कि सभी साधकों को एक सी क्रिया हो। एक कंडीशन (शर्त) ख्याल में रखनी ज़रूरी है, क्योंकि प्रत्येक साधक की स्थिति अलग है, और प्रत्येक साधक की चित्त की और शरीर की स्थिति भी भिन्न है – तो सभी साधकों को एक जैसा होगा, ऐसा नहीं है।

जब जैसे किसी साधक के चित्त में, मस्तिष्क में अगर खून की गति बहुत कम है और कुंडलिनी जागरण के लिए सिर में, खून की गति की ज्यादा ज़रूरत है... उसके शरीर को, तो वह तत्काल शीर्षासन में चला जायेगा – अनजाने – लेकिन सभी नहीं चले जायेंगे, क्योंकि सभी के सिर में खून की स्थिति और अनुपात अलग-अलग है; सबकी अपनी जरूरत अलग-अलग है।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

तो प्रत्येक साधक की स्थिति के अनुकूल बनना शुरू होगी और सबकी

Digitized by Madhuban Trust

स्थिति एक जैसी नहीं है।

तो एक तो यह फर्क पड़ेगा कि जब ऊपर से कोई आसन करेगा तो हमें कुछ भी पता नहीं है कि वह उसकी ज़रूरत है या नहीं है। आसन कभी सहायता भी पहुंचा सकता है, कभी नुकसान भी पहुंचा सकता है। अगर वह उसकी ज़रूरत नहीं है तो नुकसान पड़ेगा, अगर उसकी ज़रूरत है तो फायदा पड़ जायेगा – लेकिन वह अंधेरे में रास्ता होगा... यह एक कठिनाई है। दूसरी कठिनाई और है... और वह यह है कि हमें जो भीतर होता है, उसके साथ जब बाहर कुछ होता है, तब-तब भीतर से ऊर्जा बाहर की तरफ सक्रिय होती है। जब हम बाहर कुछ करते हैं तब वह केवल अभिनय होकर भी रह जा सकता है।

जैसे कि मैंने कहा कि जब हम क्रोध में होते हैं तो मुट्ठियां बंध जाती हैं, लेकिन मुट्ठियां बंध जाने से क्रोध नहीं आ जाता। हम मुट्ठियां बांधकर बिलकुल अभिनय कर सकते हैं और भीतर क्रोध बिलकुल न आये। फिर भी, अगर भीतर क्रोध लाना हो तो मुट्ठियां बांधना सहयोगी सिद्ध हो सकता है। अनिवार्यतः भीतर क्रोध पैदा होगा, यह नहीं कहा जा सकता। लेकिन मुट्ठी न बांधने और बांधने में अगर चुनाव करना हो तो बांधने में क्रोध के पैदा होने की संभावना बढ़ जायेगी बजाय मुट्ठी खुले होने के। तो इतनी थोड़ी सी सहायता मिल सकती है।

अब जैसे एक आदमी शांत स्थिति में आ गया तो उसके हाथ की शांत मुद्राएं बनेंगी, लेकिन एक आदमी हाथ की शांत मुद्राएं बनाता रहे, तो चित्त अनिवार्य रूप से शांत होगा, ऐसा नहीं है। हां, फिर भी चित्त को शांत होने में सहायता मिलेगी, क्योंकि शरीर तो अपनी अनुकूलता जाहिर कर देगा कि हम तैयार हैं – अगर चित्त को बदलना हो तो वह बदल जाये। लेकिन, फिर भी, सिर्फ शरीर की अनुकूलता से चित्त नहीं बदल जायेगा – और उसका कारण यह है कि चित्त तो आगे है, शरीर सदा अनुगामी है।

इसलिए चित्त बदलता है, तब तो शरीर बदलता है; लेकिन शरीर के बदलने से सिर्फ चित्त के बदलने की संभावना भर पैदा होती है, बदलाहट नहीं हो जाती।

भीतर से यात्रा शुरू करो

इसलिए भ्रांति का डर है कि कोई आदमी आसन ही करता रहे, मुद्राएं ही सीखता रहे और समझ ले कि बात पूरी हो गयी। ऐसा हुआ है ...हजारों

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

वर्षों तक ऐसा हुआ है कि कुछ लोग आसन-मुद्राएं ही करते रहे हैं और समझते हैं कि योग साध रहे हैं। धीरे-धीरे योग से ध्यान तो ख्याल से उतर गया। अगर कहीं तुम किसी से कहो कि वहां योग की साधना होती है... तो जो ख्याल आता है, वह यह है कि आसन, प्राणायाम इत्यादि होता होगा।

तो इसलिए मैं ज़रूर यह कहता हूं कि अगर साधक की ज़रूरत समझी जाये तो उसके शरीर की कुछ स्थितियां उसके लिए सहयोगी बनाई जा सकती हैं, लेकिन इनका कोई अनिवार्य परिणाम नहीं है। और इसलिए काम सदा भीतर से ही शुरू करने के मैं पक्ष में हूं, बाहर से शुरू करने के पक्ष में नहीं हूं। भीतर से शुरू होना चाहिए।

फिर अगर भीतर से शुरू होता हो तो समझा जा सकता है। अब जैसे कि एक साधक ध्यान में बैठा है और मुझे लगता है कि उसका रोना फूटना चाहता है, लेकिन वह रोक रहा है। अब यह मुझे दिखाई पड़ रहा है कि अगर वह रो ले दस मिनट, तो उसकी गति हो जाये – एक कैथार्सिस हो जाये, एक रेचन हो जाये उसका – लेकिन वह रोक रहा है, वह संभाल रहा है अपने को कि कहीं रोना न निकल जाये। इस साधक को अगर हम कहें कि अब तुम रोको मत, तुम अपनी तरफ से ही रो लो – तुम रोओ... तो यह दो मिनट तक तो अभिनय की तरह रोयेगा, तीसरे मिनट से इसका रोना सही और ठीक हो जायेगा, ऑथेंटिक (प्रामाणिक) हो जायेगा – क्योंकि रोना तो भीतर से फूटना ही चाह रहा था, यह रोक रहा था। इसके रोने की प्रक्रिया रोने को नहीं ले आयेगी, इसके रोने की प्रक्रिया रोकने को तोड़ देगी और जो भीतर से बह रहा था वह बह जायेगा।

अब जैसे एक साधक नाचने की स्थिति में है, लेकिन अपने को अकड़ा कर खड़ा किये हुए है। अगर हम उससे कह दें कि नाचो, तो प्राथमिक चरण में तो वह अभिनय ही शुरू करेगा, क्योंकि अभी... अभी वह नाच निकला नहीं है, वह नाचना शुरू करेगा, लेकिन भीतर से नाच फूटने की तैयारी कर रहा है, और इसने नाचना शुरू कर दिया – इन दोनों का तत्काल मेल हो जायेगा। लेकिन जिसके भीतर नाचने की कोई बात ही नहीं उसको हम कहें – नाचो ! तो वह नाचता रहेगा, लेकिन भीतर कुछ भी नहीं होगा।

इसलिए हजार बातें ध्यान में रखनी जरूरी हैं। तो जो भी मैं कहता हूं, उसमें बहुत सी शर्तें हैं। उन सारी शर्तों को ख्याल में रखोगे तो बात ख्याल में आ सकती है। और अगर इनको ख्याल में न रखना हो तो सार्थक यह है कि भीतर से यात्रा शुरू करो... और बाहर से जो भी होना हो, हो

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

रोको मत। बस, इतना पर्याप्त है – भीतर से काम शुरू करो, बाहर जो होता हो, उसको रोको मत, उससे लड़ो मत, तो सब अपने से हो जायेगा।

खड़े होकर ध्यान करने से होश रखना सदा आसान

प्रश्न : आजकल आप जिस प्रयोग की बात कर रहे हैं उसमें बैठकर प्रयोग करने में और खड़े होकर प्रयोग करने में क्या फिज़िकल (शरीरगत) और साइकिक (मनोगत) अंतर पड़ता है ?

बहुत अंतर पड़ता है। जो मैंने अभी कहा कि हमारे शरीर की प्रत्येक स्थिति हमारे मन की प्रत्येक स्थिति से कहीं गहरे में जुड़ी है और कहीं समानांतर, पैरेलल है। अगर हम किसी आदमी को लिटाकर कहें कि होश रखो, तो रखना मुश्किल हो जायेगा; अगर खड़े होकर कहें कि होश रखो तो आसान हो जायेगा; अगर खड़े होकर हम कहें कि सो जाओ तो मुश्किल हो जायेगा। अगर लेटकर हम कहें कि सो जाओ तो आसान हो जायेगा।

तो इस प्रयोग में दोहरी प्रक्रियाएं हैं। प्रयोग का आधा हिस्सा सम्मोहन का है, जिसमें कि निद्रा का डर है। इस प्रयोग की प्रक्रिया हिप्नोसिस की है। सम्मोहन का प्रयोग सिर्फ निद्रा और बेहोशी के लिए किया जाता है। इसलिए डर है कि साधक सो न जाये, तंद्रा में न चला जाये। खड़ा रहे तो इस डर को थोड़ा सा तोड़ने में सहायता मिलती है। संभावना कम हो गयी उसकी सोने की।

इस प्रयोग का दूसरा हिस्सा साक्षी भाव का है – जागरण का, अवेयरनेस का है। लेटने में अवेयरनेस (सजगता) प्राथमिक रूप से रखनी कठिन है, अंतिम रूप से रखनी आसान है। खड़े होकर होश रखना सदा आसान है।

तो होश रह सकेगा खड़े होकर, साक्षी भाव रह सकेगा; और दूसरी बात : सम्मोहन की जो प्रक्रिया है प्राथमिक, वह निद्रा में ले जाये, इसकी संभावना कम हो जायेगी।

प्रतिक्रियाओं में तीव्रता

और दो-तीन बातें हैं। जैसे : जब तुम खड़े हो, तब शरीर में जो मूवमेंट (गतियां) होने हैं, वे मुक्त भाव से हो सकेंगे। लेटकर उतने मुक्त भाव से न हो सकेंगे; बैठकर भी आधा शरीर तो कूद ही न पायेगा। समझ लो, पैरों को नाचना है और तुम बैठे हो, तब पैर नाच न पायेंगे। और तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, क्योंकि पैरों के पास भाषा नहीं है साफ... तुमसे कह दें कि अब हमें

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

नाचना है। बहुत सूक्ष्म इशारे हैं जिनको हम पकड़ नहीं पाते। अगर तुम खड़े हो तो पैर उठने लगेंगे और तुम्हें सूचना मिल जायेगी कि पैर नाचना चाहते हैं। लेकिन अगर तुम बैठे हो तो यह सूचना नहीं मिलेगी।

असल में बैठी हुई हालत में ध्यान करने का प्रयोग ही शरीर में होनेवाली इन गतियों को रोकने के लिए था। इसलिए ध्यान के पहले सिद्धासन या पद्मासन या सुखासन – ऐसे आसन का अभ्यास करना पड़ता था जिसमें शरीर डोल न सके। तो शरीर में जो ऊर्जा जगेगी उसकी संभावना बहुत पहले से है कि उसमें बहुत कुछ होगा – नाचोगे, गाओगे, रोओगे, कूदोगे, दौड़ोगे। तो ये स्थितियां सदा से पागल की समझी जाती रही हैं। कोई दौड़ रहा है, नाच रहा है, रो रहा है, चिल्ला रहा है – ये स्थितियां पागल की समझी जाती रही हैं। साधक भी यह करेगा तो पागल मालूम पड़ेगा। तो समाज के सामने वह पागल न मालूम पड़े इसलिए पहले वह सुखासन, सिद्धासन या पद्मासन का कठोर अभ्यास करेगा, जिसमें कि शरीर के रंच मात्र हिलने का डर न रह जाये। और जो बैठक है पद्मासन की या सिद्धासन की, वह ऐसी है कि उसमें तुम्हारे पैर जकड़ जाते हैं, जमीन पर तुम्हारा आयतन ज्यादा हो जाता है, ऊपर तुम्हारा आयतन कम होता जाता है – तुम एक मंदिर की भांति हो जाते हो, जो नीचे चौड़ा है – एक पिरामिड की भांति – और ऊपर संकरा है। तब मूवमेंट (गति) की संभावना सबसे कम हो जाती है।

मूवमेंट की सर्वाधिक संभावना तुम्हारे खड़े होने में है, जब कि नीचे कोई जड़ बनाकर चीज नहीं बैठ गयी है। तो तुम्हारी जो पालथी है, वह नीचे जड़ बनाने का काम करती है। जमीन के ग्रेविटेशन (गुरुत्वाकर्षण) पर तुम्हारा बहुत बड़ा हिस्सा शरीर का हो जाता है; वह उसे पकड़ लेता है। फिर हाथ भी तुम इस भांति से रखते हो कि उनसे डोलने की संभावना कम रह जाती है। फिर रीढ़ को भी सीधा और थिर रखना है। और पहले इस आसन का अभ्यास करना है काफी, जब इसका अभ्यास हो जाये तब ध्यान में जाना है।

स्थूल शरीर से रेचन करना सरल

मेरी दृष्टि में इससे उलटी बात है। और मेरी दृष्टि में बात यह है कि पागल और हममें कोई बुनियादी फर्क नहीं है। हम सब दबे हुए पागल हैं; सप्रेस्ड इनसेनिटि (दमित पागलपन) है हमारी। या कहना चाहिए हम जरा नार्मल (सामान्य) ढंग के पागल हैं। या कहना चाहिए कि हम औसत पागल हैं; एवरेज पागल हैं। हमारा सब पागलों से तालमेल खाता है। हमारे भीतर

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Dehradun.

Digitized by Madhuban Trust

जो पागल थोड़े आगे निकल जाते हैं वे जरा दिक्कत में पड़ जाते हैं। लेकिन हम सबके भीतर पागलपन है। और हम सबका पागलपन भी अपना निकास खोजता है।

जब तुम क्रोध में होते हो तब एक अर्थ में तुम मोमेंटरी मैडनेस (क्षणिक पागलपन) में होते हो। उस वक्त तुम वे काम करते हो जो तुमने होश में कभी न किये होते। तुम गालियां बकते हो, पत्थर फेंकते हो, सामान तोड़ सकते हो, छत से कूद सकते हो, कुछ भी कर सकते हो। यह पागल करता तो हम समझ लेते – लेकिन क्रोध में भी एक आदमी करता है तो हम कहते हैं, वह क्रोध में था। लेकिन था तो वही। ये चीजें उसके भीतर अगर नहीं थीं तो आ नहीं सकतीं; ये उसके भीतर हैं। लेकिन हम इन सबको संभाले हुए हैं। मेरी अपनी समझ यह है कि ध्यान के पहले इन सबका निकास हो जाना जरूरी है। जितना इनका निकास हो जायेगा, उतना तुम्हारा चित्त हलका हो जायेगा।

और इसलिए पुरानी जो साधना की प्रक्रिया थी, जिसमें तुम सिद्धासन लगाकर बैठते, उसमें जिस काम में वर्षों लग जाते, वह इस प्रक्रिया में महीनों में पूरी हो जायेगी। उसमें जिसमें जन्मों लग जाते, इसमें दिनों में हो सकती है। क्योंकि इसका निष्कासन तो उस प्रक्रिया में भी करना पड़ता था, लेकिन उस प्रक्रिया में जो मूवमेंट थे, वे फिजिकल बॉडी के (स्थूल शरीर के) बंद करके और इथरिक बॉडी (भाव शरीर) के करने पड़ते थे।

अब वह जरा दूसरी बात है। करनें तो पड़ते ही थे, रोना तो पड़ता ही था, क्योंकि अगर रोना भीतर है तो उसका निकालना जरूरी है; और अगर हंसना भीतर है तो उसका भी निकालना जरूरी है; और अगर नाचना भीतर है तो उसका भी निकालना जरूरी है; और अगर चिल्लाने की इच्छा है तो वह भी निकलनी चाहिए। लेकिन, अगर फिजिकल बॉडी का तुमने गहरा अभ्यास किया है और तुम उसे थिर रख सकते हो, घंटों के लिए, तो फिर इन सबका निकास तुम, इथरिक बॉडी (भाव शरीर) से कर सकते हो; वह तुम्हारे दूसरे शरीर से इनका निकास हो सकता है। तब किसी को दिखाई न पड़ेगा, सिर्फ तुमको दिखाई पड़ेगा। तब तुमने समाज से एक सुरक्षा कर ली – अब किसी को पता नहीं चल रहा है कि तुम नाच रहे हो, और भीतर तुम नाच रहे हो। यह नाच वैसा ही होगा जैसा तुम स्वप्न में नाचते हो। यह नाच वैसा ही होगा – भीतर तुम नाचोगे, भीतर तुम रोओगे, भीतर तुम हंसोगे, लेकिन तुम्हारा भौतिक शरीर इसकी कोई खबर बाहर नहीं देगा; वह जड़वत बैठा रहेगा; उस पर इसका कोई कंपन नहीं आयेगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

भौतिक शरीर के दमन से पागलपन की संभावना

मेरी अपनी मान्यता है कि इतनी परेशानी इतनी सी बात के लिए उठानी बेमानी है। और वर्षों किसी आदमी को आसनों का अभ्यास करवा कर फिर ध्यान में ले जाने का कोई प्रयोजन नहीं है। इसमें दूसरी और भी संभावनाएं हैं। इसमें बहुत संभावना यह है कि फिजिकल बॉडी का अगर बहुत गहरा सेंटर (केंद्र) हो, तो वह आदमी अगर अपने भौतिक शरीर का दमन कर दे, तो हो सकता है इथरिक शरीर में भी कंपन न हो सकें... और वह सिर्फ जड़ की भांति बैठा रहे। और उस हालत में भीतर तो गहरी प्रक्रिया न हो, बस बाहर से बैठने का अभ्यास हो जाये। और यह भी डर है कि उस हालत में चूंकि ये सारी गतियां न हो पायें, ये सब सप्रेस्ड (दमित) इकट्ठी रहें, तो वह कभी भी पागल हो सकता है।

पुराना साधक अनेक बार पागल होता देखा गया है; उसमें उन्माद आता था। जिस प्रक्रिया को मैं कह रहा हूं इसको अगर पागल भी करेगा, तो महीने दो महीने के भीतर पागलपन के बाहर हो जायेगा। साधारण आदमी इस प्रक्रिया में कभी भी पागल नहीं हो सकता, क्योंकि हम पागलपन को दबाने की कोशिश ही नहीं कर रहे हैं, हम उसको निकालने की कोशिश कर रहे हैं। पुरानी साधना ने हजारों लोगों को पागल किया है। हम उसको नाम अच्छे देते थे – कभी कहते थे उन्माद, कभी हर्षोन्माद, कभी एक्सटेसी – हम नाम कुछ भी देते थे; हम कहते थे : आदमी मस्त हो गया, औलिया हो गया, यह हो गया, वह हो गया। लेकिन वह हो जाता था पागल; उसने किसी चीज को इस बुरी तरह से दबाया कि अब वह उसके बस के बाहर हो गयी।

इस प्रक्रिया में पहला काम रेचन का

इस प्रक्रिया में दोहरा काम है। इसमें पहला काम केथार्सिस का है – इसमें पहला काम निकास का है; तुम्हारे भीतर जो दबा हुआ कचरा है, वह बाहर फिक जाये; पहले तुम हलके हो जाओ... तुम इतने हलके हो जाओ कि तुम्हारे भीतर पागलपन की सारी संभावना क्षीण हो जाये, फिर तुम भीतर यात्रा करो।

तो इस प्रक्रिया में जिसमें प्रगट पागलपन दिखाई पड़ता है, यह बड़े गहरे में पागलपन से मुक्ति की प्रक्रिया है। और मैं पसंद करता हूं कि जो है हमारे भीतर वह निकल जाये – उसका बोझ, उसका तनाव, उसकी चिंता छूट जानी चाहिए।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

और यह बड़े मजे की बात है कि अगर पागलपन तुम पर आये, तब तुम उसके मालिक नहीं होते; लेकिन जिस पागलपन को तुम लाये हो, तुम उसके सदा मालिक हो। और एक बार तुम्हें पागलपन की मालकियत का पता चल जाये, तो तुम पर वह पागलपन कभी नहीं आ सकता जो तुम्हारा मालिक हो जाये।

अब एक आदमी अपनी मौज से नाच रहा है, गा रहा है, चिल्ला रहा है, रो रहा है, हंस रहा है – वह सब कर रहा है जो पागल करता है; लेकिन सिर्फ एक फर्क है : पागल पर ये घटनाएं होती हैं, वह कर रहा है; उसके कोऑपरेशन (सहयोग) के बिना ये नहीं हो रही हैं। वह एक सेकेंड में चाहे कि बस, तो वह सब बंद हो जाता है। इस पर अब पागलपन कभी उतर नहीं सकता, क्योंकि पागलपन को इसने जिया है, देखा है, परिचित हुआ है – ये उसकी वालेंटरी, स्वेच्छा की चीज हो गयी है; पागल होना भी उसकी स्वेच्छा के अंतर्गत आ गया। हमारी सभ्यता ने हमें जो भी सिखाया है, उसमें पागलपन हमारी स्वेच्छा के बाहर हो गया है; वह नान वालेंटरी हो गया है। तो जब आता है तब हम कुछ भी नहीं कर सकते।

आनेवाली सभ्यता के पागलपन का ध्यान द्वारा निकास जरूरी

तो इस प्रक्रिया को आनेवाली सभ्यता के लिए मैं बहुत कीमती मानता हूं, क्योंकि आनेवाली पूरी सभ्यता रोज पागलपन की तरफ बढ़ती चली जाती है... और प्रत्येक व्यक्ति को पागलपन के निकास की जरूरत है। और कोई उपाय भी नहीं है। अगर वह एक घंटा ध्यान में इसको निकालता है तो लोग उसके लिए धीरे-धीरे राजी हो जाते हैं; वे जानते हैं कि वह ध्यान कर रहा है। अगर इसको वह सड़क पर निकालता है तो पुलिस उसको पकड़ कर ले जायेगी। अगर उसको क्रोध में निकालता है तो संबंध बिगड़ते हैं और कुरूप होते हैं। किसी से झगड़े में निकालता है... निकालता तो है ही, निकालेगा नहीं तो मुश्किल में पड़ जायेगा... निकालता रहेगा, तरकीबें खोजता रहेगा – कभी शराब पीकर निकाल लेगा, कभी जाकर ट्विस्ट (विशेष नाच) करके निकाल लेगा – लेकिन उतना उपद्रव क्यों लेना ?... उतना उपद्रव क्यों लेना ?

अब ट्विस्ट है या और तरह के नाच हैं, वे सब आकस्मिक नहीं हैं। मनुष्य का शरीर भीतर से मूव (गति) करना चाहता है, हमारे पास मूवमेंट की कोई जगह नहीं रह गयी। तो वह इंतजाम करता है, फिर इंतजाम में और जाल बुनते हैं। बिना इंतजाम के निकाल ले। तो ध्यान जो है वह बिना इंतजाम के निकालना है। हम कोई इंतजाम नहीं कर रहे हैं उसका, हम सिर्फ निकाल

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

रहे हैं। और हम मानते हैं कि वह भीतर है और निकल जाना चाहिए।

अगर हम एक-एक बच्चे को शिक्षा के साथ इस केथार्सिस (रेचन) को भी सिखा सकें, तो दुनिया में पागलों की संख्या एकदम गिराई जा सकती है; पागल होने की बात ही खत्म की जा सकती है। लेकिन वह रोज बढ़ती जा रही है। और जितनी सभ्यता बढ़ेगी, उतनी बढ़ेगी; क्योंकि सभ्यता उतना ही सिखायेगी – रोको। सभ्यता न तो जोर से हंसने देती, न जोर से रोने देती, न नाचने देती, न चिल्लाने देती; सभ्यता सब तरफ से दबा डालती है। और तुम्हारे भीतर जो-जो होना चाहिए वह रुकता जाता है, रुकता जाता है – फिर फूटता है; और जब वह फूटता है, तब तुम्हारे बस के बाहर हो जाता है।

तो केथार्सिस (रेचन) इसका पहला हिस्सा है, जिसमें इसको निकालना है।

इसलिए मैं शरीर के खड़े होने के पक्ष में हूं – क्योंकि तब शरीर की जरा सी भी गति तुम्हें पता चलेगी और तुम गति कर पाओगे, तुम पूरे मुक्त हो जाओगे। इसलिए मैं साधक के पक्ष में हूं कि जब वह अपने कमरे में प्रयोग करता हो तो कमरा बंद रखे – न केवल खड़ा हो, बल्कि नग्न भी हो, क्योंकि वस्त्र भी उसको रोकनेवाले न बनें; वह सब तरह से स्वतंत्र हो गति करने को। जरा सी गति और उसके सारे व्यक्तित्व में कहीं कोई अवरोध न हो जो उसे रोक रहा हो। तो बहुत शीघ्रता से ध्यान में गति हो जायेगी। और जो हठयोग और दूसरे योगों ने जन्मों में किया था, वर्षों में किया था, वह इस ध्यान के प्रयोग से दिनों में हो सकता है।

तीव्र साधना की ज़रूरत

और अब दुनिया में वर्षों और जन्मोंवाले योग नहीं टिक सकते। अब लोगों के पास दिन और घंटे भी नहीं हैं। और अब ऐसी प्रक्रिया चाहिए जो तत्काल फलदायी मालूम होने लगे कि एक आदमी अगर सात दिन का संकल्प कर ले तो फिर सात दिन में ही उसे पता चल जाये कि हुआ है बहुत कुछ... वह आदमी दूसरा हो गया है। अगर सात जन्मों में पता चले तब कोई प्रयोग नहीं करेगा। पुराने दावे जन्मों के थे – वे कहते थे : इस जन्म में करो, अगले जन्म में फल मिलेगा। वे बड़े प्रतीक्षा वाले धैर्यवान लोग थे। वे अगले जन्म की प्रतीक्षा में इस जन्म में भी साधना करते थे। अब कोई नहीं मिलेगा। फल आज न मिलता हो तो कल तक के लिए प्रतीक्षा करने की तैयारी नहीं है। कल का कोई भरोसा भी नहीं है। जिस दिन से हिरोशिमा और

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

नागासाकी पर एटम बम गिरा है, उस दिन से 'कल' खत्म हो गया है। अमरीका के हजारों-लाखों लड़के और लड़कियां कॉलेज में पढ़ने जाने को तैयार नहीं हैं – वे कहते हैं : हम पढ़-लिखकर निकलेंगे तब तक दुनिया बचेगी ? कल का कोई भरोसा नहीं है ! तो वे कहते हैं : हमारा समय जाया मत करो – जितने दिन हमारे पास हैं, हम जी लें। हाईस्कूल से लड़के और लड़कियां स्कूल छोड़कर भागे जा रहे हैं – कहते हैं : युनिवर्सिटी भी नहीं जायेंगे, क्योंकि छह साल में युनिवर्सिटी से निकलना... छह साल में दुनिया बचेगी ? अब बेटा बाप से पूछ रहा है कि छह साल... दुनिया का आश्वासन है ? तो हमें छह साल... जो थोड़े बहुत हमारी जिंदगी में है, हम क्यों न उनका उपयोग कर लें।

जहां कल इतना संदिग्ध हो गया है वहां तुम जन्मों की बातें करोगे, बेमानी है; कोई सुनने को राजी नहीं -- न कोई सुन रहा है। इसलिए मैं कह रहा हूं... आज प्रयोग हो और आज परिणाम होना चाहिए। और अगर एक घंटा कोई मुझे आज देने को राजी हो तो आज ही, उसी घंटे के बाद ही उसको परिणाम का बोध होना चाहिए, तभी वह कल घंटा दे सकेगा – नहीं तो कल के घंटे का कोई भरोसा नहीं। तो युग की जरूरत बदल गयी है। बैलगाड़ी की दुनिया थी, उस वक्त सब धीरे-धीरे चल रहा था; साधना भी धीरे-धीरे चल रही थी। जेट की दुनिया है, साधना भी धीरे-धीरे नहीं चल सकती; उसे भी तीव्र गतिमान, स्पीडी होना पड़ेगा।

ऊर्जा के प्रवाह को ग्रहण करने के लिए झुकना ज़रूरी

प्रश्न : साष्टांग दंडवत प्रणाम करना, दिव्य पुरुषों के चरणों पर माथा रखना या हाथों से चरण स्पर्श करना, पवित्र स्थानों में माथा टेकना, दिव्य पुरुषों का अपने हाथ से साधक के सिर अथवा पीठ को छूकर आशीर्वाद देना, सिक्खों व मुसलमानों का सिर ढांककर गुरुद्वारे व मस्जिद जाना, इन सब प्रथाओं का कुंडलिनी-ऊर्जा के संदर्भ में ऑकल्ट व स्पिरिचुअल (परा-वैज्ञानिक व आध्यात्मिक) अर्थ व महत्त्व समझाने की कृपा करें।

अर्थ तो है, अर्थ बहुत है। जैसा मैंने कहा, जब हम क्रोध से भरते हैं तो किसी को मारने का मन होता है। जब हम बहुत क्रोध से भरते हैं तो ऐसा मन होता है कि उसके सिर पर पैर रख दें। चूंकि पैर रखना बहुत अड़चन की बात हो गयी है, इसलिए लोग जूता मार देते हैं। पैर रखना, एक पांच-छह फुट के आदमी के सिर पर पैर रखना बहुत मुश्किल की बात है, इसलिए

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

सिंबालिक (प्रतीकात्मक)... उतार कर जूता उसके सिर पर मार देते हैं। लेकिन कोई नहीं पूछता दुनिया में कि दूसरे के सिर में जूता मारने का क्या अर्थ है ? सारी दुनिया में ! ऐसा नहीं है कि कोई एक कौम, कोई एक देश...

यह युनिवर्सल (सार्वभौम) तथ्य है कि क्रोध में दूसरे के सिर पर पैर रखने का मन होता है। और कभी जब आदमी निपट जंगली रहा होगा, तो जूता तो नहीं था उसके पास, वह सिर पर पैर रख कर ही मानता था। ठीक इससे उलटी स्थितियां भी हैं चित्त की। जैसे क्रोध की स्थिति है, तब किसी के सिर पर पैर रखने का मन होता है; और श्रद्धा की स्थिति है, तब किसी के पैर में सिर रखने का मन होता है। उसके अर्थ हैं – उतने ही, जितने पहले के।

कोई क्षण है... जब तुम किसी के सामने पूरी तरह झुक जाना चाहते हो; और झुकने के क्षण वही हैं, जब तुम्हें दूसरे के पास से अपनी तरफ ऊर्जा का प्रवाह मालूम पड़ता है।

असल में जब भी कोई प्रवाह लेना हो तब झुक जाना पड़ता है... नदी से भी पानी भरना हो तो झुकना पड़ता है। झुकना जो है, वह किसी भी प्रवाह को लेने के लिए अनिवार्य है। असल में सब प्रवाह नीचे की तरफ बहते हैं। तो ऐसे किसी व्यक्ति के पास अगर लगे किसी को कि कुछ बह रहा है उसके भीतर से – और कभी लगता है – तो उस क्षण में उसका सिर जितना झुका हो उतना सार्थक है।

शरीर के नुकीले हिस्सों से ऊर्जा का प्रवाह

फिर शरीर से जो ऊर्जा बहती है वह उसके उन अंगों से बहती है जो प्वाइंटेड (नुकीले) हैं – जैसे हाथ की अंगुलियां या पैर की अंगुलियां; सब जगह से ऊर्जा नहीं बहती। शरीर की जो विद्युत-ऊर्जा है, या शरीर से जो शक्तिपात है, या शरीर से जो भी शक्तियों का प्रवाह है, वह हाथ की अंगुलियों या पैर की अंगुलियों से होता है। पूरे शरीर से नहीं होता। असल में वहीं से होता है जहां नुकीले हिस्से हैं; वहां से शक्ति और ऊर्जा बहती है। तो जिसे लेनी है ऊर्जा, वह तो पैर की अंगुलियों पर सिर रख देगा... और जिसे देनी है ऊर्जा, वह हाथ की अंगुलियों को दूसरे के सिर पर रख देगा।

ये बड़ी आकल्ट (परा-विज्ञान) और बड़ी गहरी विज्ञान की बातें थीं। स्वभावतः, बहुत से लोग नकल में उन्हें करेंगे। हजारों लोग सिर पर पैर रखेंगे जिन्हें कोई प्रयोजन नहीं है; हजारों लोग किसी के सिर पर हाथ रख देंगे जिन्हें कोई प्रयोजन नहीं है। और तब जो एक बहुत गहरा सूत्र था, धीरे-धीरे

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

औपचारिक बन जायेगा। और जब लंबे अर्से तक वह औपचारिक और फॉर्मल होगा तो उसकी बगावत भी शुरू होगी – कोई कहेगा कि यह सब क्या बकवास है! पैर पर रखने से सिर क्या होगा? सिर पर हाथ रखने से क्या होगा? सौ में निन्यानबे मौके पर बकवास है। हो गयी है बकवास। क्योंकि सौ में एक मौके पर अब भी सार्थक है। और कभी तो सौ में सौ मौके पर ही सार्थक थी; क्योंकि कभी वह स्पॉन्टेनिअस ऐक्ट (सहज कृत्य) था।

ऐसा नहीं था कि तुम्हें औपचारिक रूप से लगे तो किसी के पैर छुओ। नहीं, किसी क्षण में तुम न रुक पाओ और पैर में गिरना पड़े तो रुकना मत, गिर जाना। और ऐसा नहीं था कि किसी को आशीर्वाद देना है तो उसके सिर पर हाथ रखो ही – यह उसी क्षण रखना था, जब तुम्हारा हाथ बोझिल हो जाये और बरसने को तैयार हो जाये... और उससे कुछ बहने को राजी हो... और दूसरा लेने को तैयार हो तभी रखने की बात थी।

मगर, सभी चीजें धीरे-धीरे प्रतीक हो जाती हैं। और जब प्रतीक हो जाती हैं तो बेमानी हो जाती हैं। और जब बेमानी हो जाती हैं तो उनके खिलाफ बातें चलने लगती हैं। और वे बातें बड़ी अपील करती हैं। जो बातें बेमानी हो गयी हैं उनके पीछे का विज्ञान तो खो गया होता है। है तो बहुत सार्थक। और फिर, जैसा मैंने पीछे तुम्हें कहा, यह तो जिंदा आदमी की बात हुई। यह जिंदा आदमी की बात हुई।

ऊर्जा पाने के लिए खाली और खुला हुआ होना ज़रूरी

एक महावीर, एक बुद्ध, एक जीसस के चरणों में कोई सिर रखकर पड़ गया है और उसने अपूर्व आनंद का अनुभव किया है, उसने एक वर्षा अनुभव की है जो उसके भीतर हो गयी है। इसे कोई बाहर नहीं देख पायेगा, यह घटना बिलकुल आंतरिक है। उसने जो जाना है वह उसकी बात है। और दूसरे अगर उससे प्रमाण भी मांगेंगे तो उसके पास प्रमाण भी नहीं हैं।

असल में सभी आकल्ट फिनामिना (परावैज्ञानिक घटनाओं) के साथ यह कठिनाई है कि व्यक्ति के पास अनुभव होता है, लेकिन समूह को देने के लिए प्रमाण नहीं होता। और इसलिए वह ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि अंधविश्वासी ही होगा – क्योंकि वह आदमी कहता है कि भई, बता नहीं सकते कि क्या होता है, लेकिन कुछ होता है। जिसको नहीं हुआ है, वह कहता है कि हम कैसे मान सकते हैं! हमें नहीं हुआ है। तुम किसी भ्रम में पड़ गये हो, किसी भूल में पड़ गये हो। और फिर हो सकता है, जिसको ख्याल है कि

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

नहीं होता है, वह भी जाकर जीसस के चरणों में सिर रखे। उसे नहीं होगा। तो वह लौटकर कहेगा कि गलत कहते हो... मैंने भी उन चरणों पर सिर रखकर देख लिया।

वह ऐसा ही है कि एक घड़ा जिसका मुंह खुला है वह पानी में झुके और लौटकर घड़ों से कहे कि मैं झुका और भर गया... और एक बंद मुंह मुख का घड़ा कहे कि मैं भी जाकर प्रयोग करता हूं। और वह बंद मुंह का घड़ा भी पानी में झुके, बहुत गहरी डुबकी लगाये, लेकिन खाली वापिस लौट आये और वह कहे कि झुका भी, डुबकी भी लगायी, कुछ नहीं भरता है, गलत कहते हो।

घटना दोहरी है। किसी व्यक्ति से शक्ति का बहना ही काफी नहीं है, तुम्हारी ओपनिंग, तुम्हारा खुला होना भी उतना ही जरूरी है। और कई बार तो ऐसा मामला है कि दूसरे व्यक्ति से ऊर्जा का बहना उतना जरूरी नही है, जितना तुम्हारा खुला होना जरूरी है। अगर तुम बहुत खुले हो तो दूसरे व्यक्ति में जो शक्ति नहीं है, वह भी उसके ऊपर की... और ऊपर की शक्तियों से प्रवाहित होकर तुम्हें मिल जायेगी।

इसलिए बड़े मजे की बात है कि जिनके पास नहीं है शक्ति, अगर उनके पास भी कोई पूरे खुले हृदय से अपने को छोड़ दे, तो उनसे भी उसे शक्ति मिल जाती है – उनसे नहीं आती वह शक्ति, वे सिर्फ माध्यम की तरह प्रयोग में हो जाते हैं; उनको भी पता नहीं चलता, लेकिन यह घटना भी घट सकती है।

सिर पर कपड़ा बांधने का रहस्य

दूसरी जो बात है : सिर में कुछ बांधकर गुरुद्वारे या किसी मंदिर या किसी पवित्र जगह में प्रवेश की। ध्यान में भी बहुत फकीरों ने सिर में कुछ बांधकर ही प्रयोग करने की कोशिश की है। उसका उपयोग है। क्योंकि जब तुम्हारे भीतर ऊर्जा जगती है तो तुम्हारे सिर पर बहुत भारी बोझ की संभावना हो जाती है। और अगर तुमने कुछ बांधा है तो उस ऊर्जा के विकीर्ण होने की संभावना नहीं होती, उस ऊर्जा के वापिस आत्मसात हो जाने की संभावना होती है।

तो बांधना उपयोगी सिद्ध हुआ है; बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अगर तुम ध्यान, कपड़ा बांधकर सिर पर, करोगे तो तुम फर्क अनुभव करोगे फौरन; क्योंकि जिस काम में तुम्हें पंद्रह दिन लगते थे, उसमें पांच दिन लगेंगे। क्योंकि तुम्हारी ऊर्जा जब सिर में पहुंचती है तो उसके विकीर्ण होने की संभावना है,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

उसके बिखर जाने की संभावना है। अगर वह बंध सके और एक वर्तुल बन सके तो उसका अनुभव प्रगाढ़ और गहरा हो जायेगा।

लेकिन अब तो वह औपचारिक है – मंदिर में किसी का जाना या गुरुद्वारे में किसी का सिर पर कपड़ा बांधकर जाना बिलकुल औपचारिक है। उसका अब कोई अर्थ नहीं रह गया है। लेकिन कहीं उसमें अर्थ है।

और व्यक्ति के चरणों में सिर रख कर तो कोई ऊर्जा पायी जा सके, व्यक्ति के हाथ से भी कोई ऊर्जा आशीर्वाद में मिल सकती है। लेकिन एक आदमी एक मंदिर में, एक वेदी पर, एक समाधि पर, एक मूर्ति के सामने सिर झुकाता है, इसमें क्या हो सकता है ? तो इसमें भी बहुत सी बातें हैं; दो-तीन बातें समझ लेने जैसी हैं।

मंदिर, कर्बे – अशरीरी आत्माओं से संबंधित होने के उपाय

पहली बात तो यह है कि ये सारी की सारी मूर्तियां एक बहुत ही वैज्ञानिक व्यवस्था से कभी निर्मित की गयी थीं। जैसे समझें कि मैं मरने लगूं और दस आदमी मुझे प्रेम करनेवाले हैं, जिन्होंने मेरे भीतर कुछ पाया और खोजा और देखा था, और मरते वक्त वे मुझसे पूछते हैं कि पीछे भी हम आपको याद करना चाहें तो कैसे करें। तो एक प्रतीक तय किया जा सकता है, मेरे और उनके बीच, जो मेरे शरीर के गिर जाने के बाद उनके काम आ सके; एक प्रतीक तय किया जा सकता है। वह कोई भी प्रतीक हो सकता है – वह एक मूर्ति हो सकती है, एक पत्थर हो सकता है, एक वृक्ष हो सकता है, एक चबूतरा हो सकता है, मेरी समाधि हो सकती है, कब्र हो सकती है, मेरा कपड़ा हो सकता है, मेरी खड़ाऊं हो सकती है – कुछ भी हो सकता है। लेकिन वह मेरे और उन दोनों के बीच तय होना चाहिए। वह एक समझौता है। वह उनके अकेले से तय नहीं होगा; उसमें मेरी गवाही और मेरी स्वीकृति और मेरे हस्ताक्षर होने चाहिए... कि मैं उनसे कहूं कि अगर तुम इस चीज को सामने रखकर स्मरण करोगे, तो मैं अभौतिक स्थिति में भी मौजूद हो जाऊंगा। यह मेरा वायदा होना चाहिए। तो इस वायदे के अनुकूल काम होता है... बिलकुल होता है।

इसलिए ऐसे मंदिर हैं जो जीवित हैं, ओर ऐसे मंदिर हैं जो मृत हैं। मृत मंदिर वे हैं जो इकतरफा बनाये गये हैं, जिनमें दूसरी तरफ का कोई आश्वासन नहीं है। हमारा दिल है, हम एक बुद्ध का मंदिर बना लें, वह मृत मंदिर होगा; क्योंकि दूसरी तरफ से कोई आश्वासन नहीं है। जीवित मंदिर भी हैं, जिनमें दूसरी तरफ से आश्वासन भी है; और उस आश्वासन के आधार

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

पर उस आदमी का वचन है।

बुद्ध-पुरुषों का मरने के बाद वायदों को पूरा करना

तिब्बत में एक... अब तो जगह मुश्किल में पड़ गयी है; लेकिन तिब्बत में एक जगह थी जहां बुद्ध का आश्वासन पिछले पच्चीस सौ वर्षों से निरंतर पूरा हो रहा है। पांच सौ लामाओं की एक छोटी समिति है। उन पांच सौ लामाओं में से जब एक लामा मरता है तब बामुश्किल दूसरे को प्रवेश मिलता है। उसकी पांच सौ से ज्यादा संख्या नहीं हो सकती, कम नहीं हो सकती। जब एक मरेगा तभी एक जगह खाली होगी... और जब एक मरेगा और दूसरे को प्रवेश मिलेगा, तो शेष सबकी सर्वसम्मति से ही प्रवेश मिल सकता है – माने एक आदमी भी इनकार करनेवाला हो तो प्रवेश नहीं मिल सकेगा। वह जो पांच सौ लोगों की समिति है, वह बुद्ध-पूर्णिमा के दिन एक विशेष पर्वत पर इकट्ठी होती है, और ठीक समय पर, निश्चित समय पर – जो समझौते का हिस्सा है – निश्चित समय पर बुद्ध की वाणी सुनाई पड़नी शुरू हो जाती है।

पर यह हर किसी पहाड़ पर नहीं होगा और हर किसी के सामने नहीं होगा; एक निश्चित समझौते के हिसाब से यह बात होगी। यह वैसा ही है, जैसे कि तुम सांझ को सोओ और तुम संकल्प करके सोओ कि मैं सुबह ठीक पांच बजे उठ आऊं, तब तुम्हें घड़ी की और अलार्म की कोई जरूरत नहीं होगी – तुम अचानक पांच बजे पाओगे कि नींद टूट गयी है। और यह मामला इतना अदभुत है कि इस वक्त तुम घड़ी मिला सकते हो अपने उठने से। इस वक्त घड़ी गलत हो सकती है, तुम गलत नहीं हो सकते। तुम्हारे संकल्प का जो पक्का निर्णय हो तो तुम पांच बजे उठ जाओगे।

अगर तुमने संकल्प पक्का कर लिया कि मुझे फलां वर्ष में फलां दिन मर जाना है, तो दुनिया की कोई ताकत तुम्हें नहीं रोक सकेगी, तुम उस क्षण चले जाओगे। मरने के बाद भी अगर तुम्हारे संकल्प की दुनिया बहुत प्रगाढ़ है, तो तुम मरने के बाद भी अपने वायदे पूरे कर सकते हो। जैसे जीसस का मरने के बाद दिखाई पड़ना... वह वायदे की बात थी जो पूरी की गयी। इसलिए ईसाइयत बड़ी मुश्किल में है उसके पीछे... कि फिर क्या हुआ, क्या नहीं हुआ ? जीसस दिखाई पड़े या नहीं पड़े ? रीसरेक्ट (पुनर्जीवित) हुए कि नहीं ? वह एक वायदा था जो पूरा किया गया... और जिनके लिए था उनके लिए पूरा कर दिया गया।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

असल में ऐसे स्थान का नाम ही धीरे-धीरे तीर्थ बनी गया जहां कोई

Digitized by Madhuban Trust

जीवित वायदा हजारों साल से पूरा किया जा रहा था। फिर लोग वायदे को भी भूल गये – और जीवित बात को भी भूल गये... समझौते को भी भूल गये, एक बात ख्याल रही कि वहां आना-जाना है, और वे आते-जाते रहे... और अब भी आ-जा रहे हैं!

मुहम्मद के भी वायदे हैं... और शंकर के भी वायदे हैं... और कृष्ण के भी वायदे हैं – बुद्ध-महावीर के भी वायदे हैं। वे सब वायदे हैं खास जगहों से बंधे हुए; खास समय, खास घड़ी और खास मुहूर्त में उनसे संबंध फिर भी जोड़ा जा सकता है। तो उन स्थानों पर फिर सिर टेक देना पड़ेगा, और उन स्थानों पर फिर तुम्हें अपने को पूरा समर्पित कर देना होगा... तभी तुम संबंधित हो पाओगे।

तो उनका भी उपयोग तो है, लेकिन सभी उपयोगी बातें अंततः औपचारिक हो जाती हैं... और सभी उपयोगी बातें अंततः परंपरा बन जाती हैं, और मृत हो जाती हैं, और व्यर्थ हो जाती हैं। तब सबको तोड़ डालना पड़ता है ताकि फिर से नये वायदे किये जा सकें... और फिर से नये तीर्थ बन सकें और नयी मूर्ति और नया मंदिर बन सके। वह सब तोड़ना पड़ता है, क्योंकि वह सब मृत हो जाता है – उसका हमें कुछ पता नहीं होता कि उसके पीछे कौन सी लंबी प्रक्रिया काम कर रही है।

एक योगी था दक्षिण में, एक अंग्रेज यात्री उसके पास आया। उस अंग्रेज यात्री ने कहा कि मैं तो लौट रहा हूं और अब दुबारा हिंदुस्तान नहीं आऊंगा, लेकिन आपके अगर दर्शन करना चाहूं तो क्या करूं? तो उस योगी ने अपना एक चित्र उसे दे दिया और कहा कि जब भी तुम द्वार बंद करके अंधेरे में इस चित्र पर पांच मिनट एकटक आंख की पलक झपके बिना देखोगे, तो मैं मौजूद हो जाऊंगा। वह तो बेचारा मुश्किल से अपने घर तक पहुंचा। एक ही काम था उसके मन में कि कैसे घर जाकर... भरोसा भी नहीं था कि यह संभव हो सकता है। लेकिन यह संभव हुआ... और जो आदमी था, वह एक वैज्ञानिक डॉक्टर था, वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया – यह संभव हो गया। एक वायदा था जो एस्ट्रली पूरा किया जा सकता है, जो सूक्ष्म शरीर से पूरा हो सकता है। इसमें कोई कठिनाई है – जिंदा आदमी भी पूरा कर सकता है, मरा हुआ आदमी भी पूरा कर सकता है!

इसलिए चित्र भी महत्त्वपूर्ण हो गये, मूर्तियां भी महत्त्वपूर्ण हो गयीं... उनके महत्त्वपूर्ण होने का कारण था कि उन्होंने कुछ वायदे पूरे किये। मूर्तियां ने भी वायदे पूरे किये, इसलिए मूर्ति बनाने की पूरी एक साइंस थी।

CC-0. Prabhu Dom in. Vipin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

मूर्ति व मकबरों का गुह्य रहस्य

हर किसी तरह की मूर्ति नहीं बनाई जा सकती। मूर्ति बनाने की एक पूरी व्यवस्था थी कि वह कैसी होनी चाहिए। अब जैसे अगर तुम चौबीस तीर्थंकरों की मूर्तियां देखो, तुम मुश्किल में पड़ जाओगे। उनमें कोई फर्क नहीं है – वे बिलकुल एक जैसी हैं, सिर्फ उनके चिह्न अलग-अलग हैं। महावीर का एक चिह्न है, पार्श्वनाथ का एक चिह्न है, नेमीनाथ का एक चिह्न है, लेकिन मूर्तियों के अगर चिह्न मिटा दिये जायें नीचे से तो वे बिलकुल एक जैसी हैं। तुम उनमें कोई पता नहीं लग सकते कि यह महावीर की है कि पार्श्व की है कि नेमी की है कि किसकी है – पता नहीं लगा सकते।

निश्चित ही, ये सारे लोग तो एक सी शकल-सूरत के नहीं रहे होंगे। यह तो असंभव है। ये चौबीस आदमी एक ही शकल-सूरत के नहीं हैं – लेकिन, जो पहली तीर्थंकर की मूर्ति थी, उसी मूर्ति को सबने अपनी मूर्ति की तरह, प्रतीक की तरह समझौता किया। अलग मूर्ति बनाने की क्या जरूरत थी ? एक मूर्ति चलती थी, वह मूर्ति काम करती थी, उसी मूर्ति के माध्यम से हम भी काम कर लेंगे; एक सील-मुहर थी, वह काम करती थी। उसका मैंने भी उपयोग किया, तुमने भी उपयोग किया, किसी ने भी उपयोग किया। लेकिन फिर भी भक्तों का मन ! जो महावीर को प्रेम करते थे, उन्होंने कहा, कोई एक चिह्न तो अलग हो। तो सिर्फ चिह्न भर अलग कर लिये गये – किसी का सिंह चिह्न है – किसी का कुछ है, किसी का कुछ है, वह अलग कर लिया गया, लेकिन मूर्ति एक रही। और वे चौबीसों मूर्तियां बिलकुल एक सी मूर्तियां हैं; उनमें कोई फर्क नहीं है, सिर्फ चिह्न का फर्क है। लेकिन वह चिह्न भी समझौते का अंग है; उस चिह्न की मूर्ति से उस चिह्न से संबंधित व्यक्ति का ही उत्तर उपलब्ध होगा।

मुहम्मद ने कोई स्थूल प्रतीक नहीं छोड़ा

वह चिह्न एक समझौता है जो अपना काम करेगा। जैसे जीसस का चिह्न क्रॉस है, वह काम करेगा। जैसे मुहम्मद ने इनकार किया कि मेरी मूर्ति मत बनाना। मेरी मूर्ति मत बनाना... असल में मुहम्मद के वक्त तक इतनी मूर्तियां बन गयी थीं कि मुहम्मद एक बिलकुल ही दूसरा प्रतीक देकर जा रहे थे अपने मित्रों को कि मेरी मूर्ति मत बनाना, मैं बिना मूर्ति के, अमूर्ति में तुमसे संबंध बना लूंगा, तुम मेरी मूर्ति बनाना ही मत; तुम मेरा चित्र ही मत बनाना; मैं तुमसे बिना चित्र, बिना मूर्ति के संबंधित हो जाऊंगा। यह भी एक गहरा प्रयोग

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Dehradun

Digitized by Madhuban Trust

था... और बड़ा हिम्मतवार प्रयोग था। बहुत हिम्मतवार प्रयोग था, लेकिन साधारण जन को बड़ी कठिनाई पड़ी मुहम्मद से संबंध बनाने में। इसलिए मुहम्मद के बाद हजारों फकीरों की कब्रें और मकबरे और समाधियां उन्होंने बना लीं, क्योंकि मुहम्मद से संबंध बनाने का तो... उनकी समझ में नहीं आया कि कैसे बनायें। तब फिर उन्होंने किसी और आदमी की कब्र बनाकर उन से संबंध बनाया, फिर मकबरे बनाये। और जितनी मकबरों और कब्रों की पूजा मुसलमानों में चली, उतनी दुनिया में किसी में नहीं चली। उसका कुल कारण इतना था कि मुहम्मद की कोई पकड़ नहीं थी उनके पास जिससे वे सीधे संबंधित हो जाते; कोई रूप नहीं बना पाते थे। तो उनको दूसरा रूप तत्काल बनाना पड़ा... और उस दूसरे रूप से उन्होंने संबंध जोड़ने शुरू किये।

यह सारी की सारी एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। अगर विज्ञान की तरह उसे समझा जाये तो उसके अदभुत फायदे हैं; और अंधविश्वास की तरह उसे समझा जाये तो वह आत्मघाती है।

मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा का रहस्य

प्रश्न : प्राण-प्रतिष्ठा का क्या महत्त्व है ?

बहुत महत्त्व है। असल में प्राण-प्रतिष्ठा का मतलब ही यह है, उसका मतलब ही यह है कि हम एक नयी मूर्ति तो बना रहे हैं, लेकिन पुराने समझौते के अनुसार बना रहे हैं। और पुराना समझौता पूरा हुआ कि नहीं, इसके इंगित मिलने चाहिए। हम अपनी तरफ से जो पुरानी व्यवस्था थी, वह पूरी दोहरायेंगे। हम उस मूर्ति को अब मृत न मानेंगे, अब से उसे हम जीवित मानेंगे। हम अपनी तरफ से पूरी व्यवस्था कर देंगे जो जीवित मूर्ति के लिए की जानी थी। और अब सिंबालिक प्रतीक (संकेत) मिलने चाहिए कि वह प्राण-प्रतिष्ठा स्वीकार हुई कि नहीं। वह दूसरा हिस्सा है, जो कि हमारे ख्याल में नहीं रह गया। अगर वह नहीं मिले तो प्राण-प्रतिष्ठा हमने तो की, लेकिन हुई नहीं। उसके सबूत मिलने चाहिए। तो उसके सबूत के लिए चिह्न खोजे गये थे कि वे सबूत मिल जायें तो ही समझा जाये कि वह मूर्ति सक्रिय हो गयी।

मूर्ति एक रिसीविंग प्वाइंट

ऐसा ही समझ लें कि आप घर में एक नया रेडियो इंस्टाल (लगाते) करते हैं। तो पहले तो वह रेडियो ठीक होना चाहिए, उसकी सारी यंत्र-व्यवस्था ठीक होनी चाहिए। उसको आप घर लाकर रखते हैं, बिजली से उसका संबंध जोड़ते

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

हैं, फिर भी आप पाते हैं कि वह स्टेशंस नहीं पकड़ता, तो प्राण-प्रतिष्ठा नहीं हुई, वह जिंदा नहीं है, अभी मुर्दा ही है। अभी उसकी फिर जांच-पड़ताल करवानी पड़े; दूसरा रेडियो लाना पड़े या उसे ठीक करवाना पड़े।

मूर्ति भी एक तरह का रिसीविंग प्वाइंट (ग्राहक केंद्र) है, जिसके साथ, मरे हुए आदमी ने कुछ वायदा किया है वह पूरा करता है। लेकिन आपने मूर्ति रख ली, वह पूरा करता है कि नहीं करता है यह अगर आपको पता नहीं है, और आपके पास कोई उपाय नहीं है इसको जानने का, तो मूर्ति है भी जिंदा कि मुर्दा है, आप पता नहीं लगा पाते।

तो प्राण-प्रतिष्ठा के दो हिस्से हैं। एक हिस्सा तो पुरोहित पूरा कर देता है... कि कितने मंत्र पढ़ने हैं, कितने धागे बांधने हैं, कितना क्या करना है, कितना सामान चढ़ाना है, कितना यज्ञ-हवन, कितनी आग – पुरोहित सब कर देता है। यह अधूरा है और पहला हिस्सा है। दूसरा हिस्सा जो कि पांचवें शरीर को उपलब्ध व्यक्ति ही कर सकता है, कोई और नहीं कर सकता। दूसरा हिस्सा है कि वह कह सके कि हां, मूर्ति जीवित हो गयी। वह नहीं हो पाता। इसलिए हमारे अधिक मंदिर मरे हुए मंदिर हैं, जिंदा मंदिर नहीं हैं। और नये मंदिर तो सब मरे हुए ही बनते हैं; नया मंदिर तो जिंदा होता ही नहीं।

सोमनाथ का मंदिर मृत था

अगर एक जवित मंदिर है तो उसका नष्ट होना किसी भी तरह संभव नहीं है, क्योंकि वह साधारण घटना नहीं है। वह साधारण घटना नहीं है। और अगर वह नष्ट होता है, तो उसका कुल मतलब इतना है कि जिसे आपने जीवित समझा था, वह जीवित नहीं था। जैसे सोमनाथ का मंदिर नष्ट हुआ। सोमनाथ के मंदिर के नष्ट होने की कहानी बड़ी अदभुत है... और सारे मंदिर के विज्ञान की बहुत सूचक है। मंदिर के पांच सौ पुजारी थे। पुजारियों को भरोसा था कि मंदिर जीवित है। इसलिए मूर्ति नष्ट नहीं की जा सकती। पुजारियों ने अपना काम सदा पूरा किया था। एकतरफा था वह काम, क्योंकि कोई नहीं था जो खबर देता कि जिंदा मूर्ति हैं कि मृत। तो जब बड़े-बड़े राजाओं और राजपूत सरदारों ने उन्हें खबर भेजी कि हम रक्षा के लिए आ जायें, गजनबी आता है, तो उन्होंने स्वभावतः उत्तर दिया कि तुम्हारे आने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि जो मूर्ति सबकी रक्षा करती है, उसकी रक्षा तुम कैसे करोगे ? उन्होंने क्षमा मांगी, सरदारों ने लेकिन वह भूल हो गयी। भूल यह हो गयी कि वह मूर्ति जिंदा न थी। पुजारी इस आशा में रहे कि मूर्ति जिंदा है और

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

जिंदा मूर्ति की रक्षा की बात ही सोचनी गलत है। उसके पीछे हमसे ज्यादा विराट शक्ति का संबंध है, उसको बचाने का हम क्या सोचेंगे ! लेकिन गजनी आया और उसने एक तलवार मारी और वह चार टुकड़े हो गयी मूर्ति। फिर भी अब तक यह ख्याल नहीं आया कि वह मूर्ति मुर्दा थी। फिर भी अब तक... अब तक यह ख्याल नहीं आया कि वह मूर्ति मुर्दा थी, इसलिए टूट सकी।

नहीं, मंदिर की ईंट नहीं गिर सकती, अगर वह जीवित है। वह जीवित है तो उसका कुछ बिगड़ नहीं सकता। लेकिन अक्सर मंदिर जीवित नहीं हैं। और उसके जीवित होने की बड़ी कठिनाइयां हैं।

मंदिर के जीवित होने का गहन विज्ञान

मंदिर का जीवित होना बड़ा भारी चमत्कार है और एक बहुत गहरे विज्ञान का हिस्सा है। जिस विज्ञान को जाननेवाले लोग भी नहीं हैं, पूरा करनेवाले लोग भी नहीं हैं, और जिसमें इतनी कठिनाइयां हो गयी हैं खड़ी; क्योंकि पुरोहितों और दूकानदारों का इतना बड़ा वर्ग मंदिरों के पीछे है कि अगर कोई जाननेवाला हो तो उसको मंदिर में प्रवेश नहीं हो सकता। उसकी बहुत कठिनाई हो गयी है। और वह एक धंधा बन गया है जिसमें कि पुरोहित के लिए हितकर है कि मंदिर मुर्दा हो। जिंदा मंदिर पुरोहित के लिए हितकर नहीं है। वह चाहता है कि मरा हुआ भगवान भीतर हो, जिसको वह ताला-चाबी में बंद रखे और काम चला ले। अगर उस मंदिर से कुछ और विराट शक्तियों का संबंध है तो पुरोहित का टिकना वहां मुश्किल हो जायेगा; उसका जीना वहां मुश्किल हो जायेगा। इसलिए पुरोहित ने बहुत मुर्दा मंदिर बना लिये हैं और वह रोज बनाये चला जा रहा है। मंदिर तो रोज बन जाते हैं, उनकी कोई कठिनाई नहीं है। लेकिन वस्तुतः, जो जीवित मंदिर हैं वे बहुत कम होते जाते हैं।

जीवित मंदिरों को बचाने की इतनी चेष्टा की गयी, लेकिन पुरोहितों का जाल इतना बड़ा है हर मंदिर के साथ, हर धर्म के साथ कि बहुत मुश्किल है उसको बचाना। और इसलिए सदा फिर आखिर में यही होता है। इसलिए इतने मंदिर बने; नहीं तो इतने मंदिर बनने की कोई जरूरत न पड़ती। अगर महावीर के वक्त में, उपनिषदों के समय में बनाये गये मंदिर जीवित होते, और तीर्थ जीवित होते, तो महावीर को अलग बनाने की कोई जरूरत न पड़ती। लेकिन वे मर गये थे। और उन मरे मंदिरों और पुराहितों का एक जाल था, जिसको तोड़कर प्रवेश करना असंभव था, इसलिए नये बनाने के सिवाय कोई

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

उपाय नहीं था। आज महावीर का मंदिर भी मर गया है; उसके पास भी उसी तरह का जाल है!

शर्तें पूरी न करने पर वायदे का टूट जाना

दुनिया में इतने धर्म न बनते, अगर, जो जीवंत तत्त्व है वह बच सके। लेकिन वह बच नहीं पाता। उसके आसपास सब उपद्रव इकट्ठा हो जाता है। और वह जो उपद्रव है, वह धीरे-धीरे, धीरे-धीरे सारी संभावनाएं तोड़ देता है। और जब एक तरफ से संभावना टूट जाती है तो दूसरी तरफ से समझौता भी टूट जाता है। वह समझौता किया गया समझौता है। उसे हमें निभाना है। और हम निभाते हैं तो दूसरे तरफ से निभता है, नहीं तो विदा हो जाता है, बात खत्म हो जाती है।

जैसे कि मैं कह कर जाऊं कि आप मुझे याद करना तो मैं मौजूद हो जाऊंगा – लेकिन आप कभी याद ही करना बंद कर दो या मेरे चित्र को एक कचरे घर में डाल दो, फिर उसका ख्याल ही भूल जाओ, तो यह समझौता कब तक चलेगा। यह समझौता टूट गया है आपकी तरफ से – इसे मेरी तरफ से भी रखने की अब कोई जरूरत नहीं रह जाती। ऐसे समझौते टूटते गये हैं।

लेकिन, प्राण-प्रतिष्ठा का अर्थ है। और प्राण-प्रतिष्ठा का दूसरा हिस्सा ही महत्त्वपूर्ण है कि प्राण-प्रतिष्ठा हुई या नहीं – उसकी कसौटी और परख है। वह परख भी पूरी होती है।

प्रश्न : कुछ मंदिरों में मूर्ति के ऊपर पानी आप ही आप झरता रहता है। क्या यह उस मंदिर के जीवित होने का सूचक है?

नहीं, पानी वगैरह से तो कुछ लेना-देना नहीं है। पानी तो बिना मूर्ति की प्रतिष्ठा किये भी झरता रहता है; मूर्ति भी रखें तो भी झर सकता है। वह कोई बड़ा सवाल नहीं है। ये सब झूठे प्रमाण हैं जिनके आधार पर हम सोच लेते हैं कि प्रतिष्ठा हो गयी। पानी-वानी झरने से कोई लेना-देना नहीं है। जहां बिलकुल पानी नहीं गिरता, वहां भी जीवित मंदिर हैं; वहां भी हो सकते हैं।

दीक्षा दी नहीं जाती – घटित होती है

प्रश्न : आध्यात्मिक साधना में दीक्षा का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसकी विशेष विधियां विशेष स्थितियों में होती हैं। बुद्ध और महावीर भी दीक्षा देते थे। अतः कृपया बताये कि दीक्षा का क्या सूक्ष्म अर्थ है?

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband.

Digitized by Madhuban Trust

दीक्षा कितने प्रकार की संभव है, उसका महत्व और उसकी उपयोगिता क्या है, और उसकी आवश्यकता क्यों है ?

दीक्षा के संबंध में थोड़ी सी बात उपयोगी है। एक तो... कि दीक्षा दी नहीं जाती; दीक्षा दी भी नहीं जा सकती। दीक्षा घटित होती है; वह एक हैपेनिंग है। कोई व्यक्ति महावीर के पास है... कभी-कभी वर्षों लग जाते हैं, दीक्षा होने में; क्योंकि महावीर कहते हैं – रुको, साथ रहा, चलो, उठो, बैठो, इस तरह जियो, इस तरह ध्यान में प्रवेश करो, इस तरह उठो, इस तरह बैठो, ऐसा जियो। एक घड़ी है ऐसी जब वह व्यक्ति तैयार हो जाता है, और तब महावीर सिर्फ माध्यम रह जाते हैं – बल्कि माध्यम कहना भी शायद ठीक नहीं, बहुत गहरे में सिर्फ साक्षी, एक विटनेस रह जाते हैं; एक गवाह रह जाते हैं – उनके सामने दीक्षा घटित होती है।

दीक्षा सदा परमात्मा से घटित होती है

दीक्षा सदा परमात्मा से है... महावीर के समक्ष घटित होती है। लेकिन निश्चित ही, जिस पर घटित होती है, उसको तो महावीर दिखाई पड़ते हैं, परमात्मा दिखाई नहीं पड़ता। उसे तो सामने महावीर दिखाई पड़ते हैं... और महावीर के साथ में ही उस पर घटित होती है – स्वभावतः, वह महावीर के प्रति अनुगृहीत होता है। यह उचित है। लेकिन महावीर उसके अनुग्रह को स्वीकार नहीं करते। क्योंकि वे तो तभी स्वीकार कर सकते हैं जब कि वे मानते हों कि मैंने दीक्षा दी।

इसलिए दो तरह की दीक्षाएं हैं। एक दीक्षा तो वह जो घटित होती है, जिसे मैं दीक्षा कहता हूं, वह इनीसिएशन है जिसमें तुम परमात्मा से संबंधित हुए, तुम्हारी जीवन-यात्रा बदली, तुम और हो गये, तुम अब वही नहीं हो जो थे, तुम्हारा सब रूपांतरित हो गया, तुम्हें कुछ नया दिखा, तुममें कुछ नया घटित हुआ, तुममें कुछ नयी किरण आयी, तुम्हारा सब कुछ और हो गया है।

एक तो यह दीक्षा है, जिसमें जिसको हम गुरु कहते हैं, वह सिर्फ विटनेस की तरह, गवाह की तरह खड़ा होता है। और वह सिर्फ इतना ही बता सकेगा कि हां, दीक्षा हो गयी; क्योंकि वह पूरा देख रहा है, तुम आधा ही देख रहे हो – तुम्हें, तुम पर जो हो रहा है, वह दिखाई पड़ रहा है – उसे वह दिखाई पड़ रहा है, जिससे हो रहा है। इसलिए तुम पक्के गवाह नहीं हो सकते कि हुई घटना कि नहीं हुई; तुम इतना ही कह सकते हो कि बहुत कुछ रूपांतरण हुआ। लेकिन दीक्षा हुई कि नहीं ? मैं स्वीकार हुआ या नहीं ?

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection Deoband

Digitized by Madhuban Trust

दीक्षा का मतलब है : हैव आई बीन एक्सेप्टेड – क्या मैं चुन लिया गया ? क्या मैं स्वीकृत हो गया उस परमात्मा को ? क्या अब मैं मानूं कि मैं उसका हो गया ? अपनी तरफ से तो मैंने छोड़ा, उसकी तरफ से भी मैं ले लिया गया हूं या नहीं ? लेकिन इसका तुम्हें एकदम से पता नहीं चल सकता । तुम्हें थोड़े अंतर तो पता चलेंगे, लेकिन पता नहीं ये अंतर काफी हैं या नहीं । तो वह जो दूसरा आदमी है, जिसको हम 'गुरु' कहते रहे हैं, वह इतना जान सकता है; उसे दोनों घटनाएं दिखाई पड़ रही हैं ।

गुरु... मात्र गवाह

सम्यक दीक्षा दी नहीं जाती... ली भी नहीं जाती... परमात्मा से घटित होती है; तुम सिर्फ ग्राहक होते हो । और जिसे तुम गुरु कहते हो, वह सिर्फ साक्षी और गवाह होता है ।

दूसरी दीक्षा... जिसको हम फाल्स इनिसेएशन कहें, झूठी दीक्षा कहें, वह दी जाती है और ली जाती है । उसमें ईश्वर बिलकुल नहीं होता; उसमें गुरु और शिष्य ही होते हैं – गुरु देता है और शिष्य लेता है – लेकिन तीसरा और असली मौजूद नहीं होता ।

जहां दो मौजूद हैं सिर्फ – गुरु और शिष्य – वहां दीक्षा झूठी होगी; जहां तीन मौजूद हैं – गुरु, शिष्य और वह भी, जिससे दीक्षा घटित होगी, वहां सब बात बदल जायेगी ।

तो यह जो दीक्षा देने का उपक्रम है, यह अनुचित ही नहीं, खतरनाक है, घातक है; क्योंकि इस दीक्षा के भ्रम में वह दीक्षा कभी घटित न हो पायेगी अब – अब तुम तो इस भ्रम में जियोगे कि दीक्षा ही गयी ।

अब एक साधु मेरे पास आये । अब वे दीक्षित हैं किसी के – कहते हैं, फलां गुरु का दीक्षित हूं और ध्यान सीखने आपके पास आया हूं । तो मैंने कहा, दीक्षा किसलिए ली ? और जब दीक्षा में ध्यान भी नहीं आया, तो और क्या मिला है दीक्षा में ? वस्त्र मिल गये हैं ! नाम मिल गया है ! और जब ध्यान अभी खोजना पड़ रहा है, तो दीक्षा कैसे हो गयी ? क्योंकि सच तो यह है कि ध्यान के बाद ही दीक्षा हो सकती है, दीक्षा के बाद ध्यान का कोई मतलब नहीं है । एक आदमी कहता है, मैं स्वस्थ हो गया हूं... और डॉक्टरों के दरवाजों पर घूम रहा है – और कहता है कि मुझे दवा चाहिए... दीक्षा तो ध्यान के बाद मिली हुई स्वीकृति है; वह सेंक्शन (अनुमोदन) है कि तुम स्वीकृत कर लिये गये, अंगीकार कर लिये गये, परमात्मा तक तुम्हारी खबर पहुंच गयी – उस

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust
दुनिया में भी तुम्हारा प्रवेश हो गया है, इस बात की स्वीकृति भर दीक्षा है।

सम्यक दीक्षा को पुनर्जीवित करना पड़ेगा

लेकिन ऐसी दीक्षा खो गयी है। और मैं चाहता हूं कि ऐसी दीक्षा पुनरुज्जीवित हो, जिसमें गुरु देनेवाला न हो, जिसमें शिष्य लेनेवाला न हो – जिसमें गुरु गवाह हो, शिष्य ग्राहक हो, और देनेवाला परमात्मा हो।

और यह हो सकता है। और यह होना चाहिए। उस दिन तुम्हारा मेरे प्रति... अगर मैं किसी का गवाह हूं दीक्षा में, तो मैं उसका गुरु नहीं हो जाता, गुरु तो उसका परमात्मा ही हुआ फिर... और वह अगर अनुगृहीत है, तो यह उसकी बात है – लेकिन अनुग्रह मांगना बेमानी है; स्वीकार करने का भी कोई अर्थ नहीं है।

गुरुडम पैदा हुई दीक्षा को एक नयी शकल देने से। कान फूंके जा रहे हैं! मंत्र दिये जा रहे हैं! कोई भी आदमी किसी को भी दीक्षित कर रहा है। वह खुद भी दीक्षित है, यह भी पक्का नहीं है। परमात्मा तक वह भी स्वीकृत हुआ है, इसका भी कोई पक्का नहीं। वह भी इसी तरह दीक्षित है। किसी ने उसके कान फूंके हैं, वह किसी दूसरे के फूंक रहा है! वह दूसरा कल किसी और के फूंकने लगेगा!

झूठी दीक्षा आध्यात्मिक अपराध

आदमी हर चीज में झूठ और डिसेप्शन (धोखा, वंचना) पैदा कर लेता है। और जितनी रहस्यपूर्ण बातें हैं वहां तो प्रवंचना बहुत संभव है, क्योंकि वहां तो कोई पकड़ कर हाथ में दिखानेवाली चीज नहीं है। अब मैं चाहता हूं... इस प्रयोग को भी करना चाहता हूं... इस प्रयोग को भी करना चाहता हूं – दस-बीस लोग तैयार हो रहे हैं – वे दीक्षा लें परमात्मा से। बाकी लोग जो मौजूद हों, वे गवाह हों – बस, वे इतना कह सकें कि, बता सकें कि ऊपर तक स्वीकृत बात हो गयी कि नहीं हो गयी। उतना काम है। अनुभव तो तुम्हें भी होगा, लेकिन तुम एकदम से पहचान न पाओगे। इतना अपरिचित जगत है वह, तुम रिकग्नाइज़ (प्रत्यभिज्ञा) कैसे करोगे कि हो गया? बस, उतनी बात का मूल्य है।

इसलिए परम गुरु तो परमात्मा ही है। अगर बीच के गुरु हट जायें तो आसानी हो जाती है। लेकिन बीच के गुरु बहुत पैर जमाकर खड़े होते हैं; क्योंकि खुद को परमात्मा बनाने और दिलखाने का मजा अहंकार के लिए बहुत

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

है।

इस अहंकार के आसपास बहुत तरह की दीक्षाएं दी जाती हैं। उनका कोई भी मूल्य नहीं है। और आध्यात्मिक अर्थों में वह सब क्रिमिनल ऐक्ट (अपराध-कृत्य) है। और किसी दिन अगर हम आध्यात्मिक अपराधियों को सजा दें तो उनको सजा मिलनी चाहिए, क्योंकि वह एक आदमी को इस धोखे में रखना है कि उसकी दीक्षा हो गयी... और वह आदमी अकड़ कर चलने लगता है कि मैं दीक्षित हूं – मुझे दीक्षा मिल गयी, मंत्र मिल गया, यह हो गया, वह हो गया – वह यह सब मानकर चलता है... और इसलिए वह उसका जो होनेवाला था, जिसकी वह खोज करता था, वह खोज बंद कर देता है।

बौद्ध धर्म के त्रिशरणों का वास्तविक अर्थ

बुद्ध के पास कोई भी आता, तो कभी एकदम से दीक्षा नहीं होती थी... वर्षों कभी लग जाते। उस आदमी को कहते कि रुको, अभी ठहरो, अभी इतना करो, अभी इतना करो, इतना करो, फिर किसी दिन, फिर किसी दिन – उसको टालते चले जाते; जिस दिन वह घड़ी आ जाती, उस दिन वह खुद कह देते कि अब तुम खड़े हो जाओ और दीक्षित हो जाओ।

लेकिन वह जो दीक्षा थी, उसके तीन हिस्से थे। जिस दिन वह दीक्षा होती... बुद्ध की जो दीक्षा थी उसके तीन हिस्से थे... वह जो दीक्षित होता, वह तीन तरह की शरण जाता; थ्री टाइप्स ऑफ सरेंडर थे वे : वह तीन तरह की शरण जाता – वह कहता, बुद्ध की शरण जाता हूं।

बुद्धं शरणं गच्छामि

और ध्यान रहे, बुद्ध की शरण जाने का मतलब है गौतम बुद्ध की शरण जाना नहीं था; बुद्ध की शरण जाने का मतलब है... जागे हुए की शरण जाता हूं; इसका मतलब गौतम बुद्ध की शरण कभी भी नहीं था। इसलिए बुद्ध से एक दफा किसी ने पूछा कि आप समाने बैठे हैं और एक आदमी आकर कहता है... बुद्धं शरणं गच्छामि... और आप सुन रहे हैं! तो बुद्ध ने कहा कि वह मेरी शरण नहीं जा रहा, वह जागे हुए की शरण जा रहा है।

मैं तो महज बहाना हूं – मेरी जगह और बुद्ध होते रहेंगे, मेरी जगह और बुद्ध हुए हैं; मैं तो सिर्फ एक बहाना हूं, एक खूंटी हूं – वह जागे हुए की शरण जा रहा है; मैं कौन हूं जो बाधा दूं? वह मेरी शरण जाये तो मैं रोकूं दूं; वह कहता है, बुद्ध की शरण। तो तीन बार वह जागे हुए की शरण जा

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

रहा है... वह जागे हुए के सामने अपने को समर्पित कर रहा है।

Digitized by Madhuban Trust

संघं शरणं गच्छामि

फिर दूसरी शरण और अदभुत है – वह है : संघ शरणं गच्छामि। वह तीन बार संघ की शरण जा रहा है। संघ का मतलब ? आमतौर से बुद्ध को माननेवाले भी समझते हैं : संघ का मतलब बुद्ध का संघ। नहीं, वह संघ का मतलब नहीं है। संघ का मतलब है जागे हुओं का संघ। एक ही बुद्ध थोड़े ही है जागा हुआ ! बहुत बुद्ध हो चुके हैं जो जाग गये, बहुत बुद्ध होंगे जो जागेंगे – उन सबका संघ है एक, उन सबकी एक कम्युनिटि (समुदाय) है, एक कलेक्टिविटि (एकत्रीकरण) है। कोई बुद्ध के संघ की शरण जा रहा हूं... वह तो बौद्धों की समझ है कि वह कह रहा है कि अब बुद्ध का जो यह संप्रदाय है, इसकी मैं शरण जा रहा हूं।

नहीं, जब पहले सूत्र से ही साफ हो जाता है, जब बुद्ध कहते हैं, वह मेरी शरण नहीं जा रहा है, जागे हुए की शरण जाता है, तो दूसरा सूत्र और भी साफ हो जाता है कि वह जागे हुओं के संघ की शरण जाता है। पहले वह एक व्यक्ति को जो सामने मौजूद है, उस पर अपने को समर्पित कर रहा है, क्योंकि यह प्रत्यक्ष है। आसान है इससे बात करनी। फिर वह उस बड़ी ब्रदरहुड (भ्रातृत्व), उस बड़े संघ के लिए समर्पण कर रहा है, जो जागे हैं कभी – जिनका उसे पता नहीं; जो कभी जागेंगे भविष्य में, उनका भी उसे कोई पता नहीं; जो अभी भी जागे हुए होंगे कहीं, उनका भी उसे कोई पता नहीं; वह उनको भी समर्पण कर रहा है कि मैं तुम्हारी भी शरण जाता हूं। वह एक कदम आगे बढ़ा सूक्ष्म की तरफ।

धम्मं शरणं गच्छामि

तीसरी शरण है : धम्मं शरणं गच्छामि। तीसरी बार वह कह रहा है : मैं धर्म की शरण जाता हूं। पहला, जो जागे हुए बुद्ध हैं, उनकी; दूसरा जो बुद्धों का जाग हुआ संघ है उनकी, और तीसरा जो जागरण की परम अवस्था है – धर्म, स्वभाव - जहां न व्यक्ति रह जाता है, जहां न संघ रह जाता है, जहां सिर्फ नियम – दि लॉ, सिर्फ धर्म रह जाता है; मैं उस धर्म की शरण जाता हूं।

ये तीन शरण जब वह पूरी कर दे – और यह सिर्फ कहने की बात न थी – यह जब पूरी हो जाये और बुद्ध को दिखाई पड़े कि ये तीन शरण इसकी पूरी हो गयी हैं, तब दीक्षित होता वह आदमी; और बुद्ध सिर्फ गवाह होते।

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban, Jaipur

इसलिए बुद्ध उसको दीक्षा के बाद भी कहते हैं कि मैं जो कहूं तू उसे इसलिए मत मान लेना कि मैं बुद्ध पुरुष हूं; मैं जो कहूं उसे इसलिए मत मान लेना कि एक महान व्यक्ति ने कहा; मैं जो कहूं उसे इसलिए मत मान लेना कि जिसने कहा उसे बहुत लोग मानते हैं; मैं जो कहूं उसे इसलिए मत मान लेना कि शास्त्रों में वही लिखा है – नहीं, तेरी बुद्धि जो कहे, अब तू उसी को मानना। वे गुरु बन नहीं रहे हैं। इसलिए मरते वक्त जो आखिरी संदेश है बुद्ध का, वह है 'अप्पदीपोभव'। आखिरी वक्त जब उनसे कहा कि कुछ और संदेश दें तो वह आखिरी संदेश देते हैं कि तुम अपने दीपक खुद ही बनना, तुम किसी के पीछे मत जाना, अनुसरण मत करना... बी ए लाइट अन टू योर सेल्फ – अप्पदीपोभव। अपने दीये खुद बन जाना, बस यह मेरा आखिरी... आखिरी संदेश है।

दीक्षा देकर बांधनेवाले गुरुओं से सावधान

तो ऐसा व्यक्ति गुरु नहीं बनता; ऐसा व्यक्ति साक्षी है, गवाह है। जीसस ने बहुत जगह यह बात कही है कि जिस दिन निर्णय होगा, मैं तुम्हारी गवाही रहूंगा। जीसस बहुत जगह यह बात कहे हैं कि जिस दिन अंतिम निर्णय होगा, मैं तुम्हारी गवाही रहूंगा – अंतिम निर्णय के वक्त मैं कहूंगा कि हां, यह आदमी जागने की आकांक्षा किया था; यह आदमी परमात्मा के लिए समर्पण की आकांक्षा किया था। यह तो प्रतीक में कहना है, लेकिन क्राइस्ट यह कह रहे हैं कि मैं गवाही हूं, मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूं।

गुरु कोई भी नहीं है। इसलिए जिस दीक्षा में कोई आदमी गुरु बन जाता हो, उस दीक्षा से सावधान होना जरूरी है। और जिस दीक्षा में परमात्मा ही सीधा, इमीजिएट और डायरेक्ट संबंध में आता हो, वह दीक्षा बड़ी अनूठी है।

और ध्यान रहे कि इस दूसरी दीक्षा में न तो किसी को घर छोड़कर भागने की जरूरत है : न इस दूसरी दीक्षा में किसी को हिंदू, मुसलमान, ईसाई होने की जरूरत है, न इस दूसरी दीक्षा में किसी से बंधने की कोई जरूरत है। इसमें तुम अपनी परिपूर्ण स्वतंत्रता में जैसे हो, जहां हो, वैसे ही रह सकते हो, सिर्फ भीतर तुम्हारी बदलाहट शुरू हो जायेगी। लेकिन वह जो पहली झूठी दीक्षा है, उसमें तुम किसी धर्म से बंधोगे – हिंदू बनोगे, मुसलमान बनोगे, ईसाई बनोगे... किसी संप्रदाय के हिस्से बनोगे; कोई पंथ, कोई मान्यता, कोई डागमेटिज्म (रूढ़ि) तुम्हें पकड़ेगा – कोई आदमी, कोई गुरु – वे सब तुम्हें पकड़ लेंगे, वे तुम्हारी स्वतंत्रता की हत्या कर देंगे। जो दीक्षा स्वतंत्रता न लाती हो,

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust
वह दीक्षा नहीं है; जो दीक्षा परम स्वतंत्रता लाती हो, वही दीक्षा है।

बुद्ध के पुनर्जन्म का रहस्य

प्रश्न : आपने कहा कि बुद्ध सातवें शरीर में महापरिनिर्वाण को उपलब्ध हुए, लेकिन अन्यत्र एक प्रवचन में आपने कहा है कि बुद्ध का एक और जन्म मनुष्य-शरीर में मैत्रेय के नाम से होनेवाला है। तो निर्वाणकाया में चले जाने के बाद पुनः मनुष्य-शरीर लेना कैसे संभव होगा ? इसे संक्षेप में स्पष्ट करने की कृपा करें।

यह जरा कठिन बात है, इसलिए मैंने कल छोड़ दी थी, क्योंकि इसकी लंबी ही बात करनी पड़ेगी, लेकिन फिर भी थोड़े में समझ लें।

सातवें शरीर के बाद वापिस लौटना संभव नहीं है। सातवें शरीर की उपलब्धि के बाद पुनरागमन नहीं है; वह प्वाइंट ऑफ नो रिटर्न है। वहां से वापिस नहीं आया जा सकता। लेकिन दूसरी बात सही है जो मैंने कही है... कि बुद्ध कहते हैं कि मैं एक बार और आऊंगा, मैत्रेय के शरीर में... मैत्रेय नाम से एक बार और वापिस लौटूंगा। अब ये दोनों ही बातें तुम्हें विरोधी दिखाई पड़ेंगी, क्योंकि मैं कहता हूं, सातवें शरीर के बाद कोई वापिस नहीं लौट सकता। और बुद्ध का यह वचन है कि वह वापिस लोटेंगे और बुद्ध सातवें शरीर को उपलब्ध होकर महानिर्वाण में समाहित हो गये हैं। तब यह कैसे संभव होगा ? इसका दूसरा ही रास्ता है।

असल में सातवें शरीर में प्रवेश के पहले... अब तुम्हें थोड़ी सी बात समझनी पड़े... जब हमारी मृत्यु होती है तो भौतिक शरीर गिर जाता है, लेकिन बाकी कोई शरीर नहीं गिरता। मृत्यु जब हमारी होती है तो भौतिक शरीर गिरता है, बाकी छह शरीर हमारे... हमारे साथ रहते हैं। जब कोई पांचवें शरीर को उपलब्ध होता है, तो शेष चार शरीर गिर जाते हैं और तीन शरीर शेष रह जाते हैं – पांचवां, छठवां और सातवां। पांचवें शरीर की हालत में, यदि कोई चाहे ...यदि कोई चाहे... पांचवें शरीर की हालत में, तो ऐसा संकल्प कर सकता है कि उसके बाकी दूसरे और तीसरे और चौथे तीन शरीर शेष रह जायें। और अगर यह संकल्प गहरा किया जाये, और बुद्ध जैसे आदमी को यह संकल्प गहरा करने में कोई कठिनाई नहीं है, तो वह अपने दूसरे, तीसरे और चौथे शरीर को सदा के लिए छोड़ जा सकता है। ये शरीर शक्तिपुंज की तरह अंतरिक्ष में भ्रमण करते रहेंगे। दूसरा इथरिक जो भाव शरीर है...

तो बुद्ध की भावनाएं... बुद्ध ने अपने अनंत जन्मों में जो भावनाएं

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

अर्जित की हैं, वे इस शरीर की संपत्ति हैं। उसके सब सूक्ष्म तरंग इस शरीर में समाहित हैं। फिर एस्ट्रल बॉडी, सूक्ष्म शरीर, इस सूक्ष्म शरीर में बुद्ध के जीवन की जितनी सूक्ष्मतम कर्मों की उपलब्धियां हैं, उन सबके संस्कार इसमें शेष हैं। और चौथा मनस शरीर, मेंटल बॉडी, बुद्ध के मनस की सारी उपलब्धियां, और बुद्ध ने जो मनस के बाहर उपलब्धियां की हैं, वे भी की तो मन से ही हैं, उनको अभिव्यक्ति तो मन से ही देनी पड़ती है। कोई आदमी पांचवें शरीर से भी कुछ पाये, सातवें शरीर से भी कुछ पाये, जब भी कहेगा तो उसको चौथे शरीर का ही उपयोग करना पड़ेगा, कहने का वाहन तो चौथ शरीर ही होगा।

तो बुद्ध की जितनी वाणी दूसरे लोगों ने सुनी है, वह तो बहुत कम है, सबसे ज्यादा वाणी तो बुद्ध की बुद्ध के ही चौथे शरीर ने सुनी है। जो बुद्ध ने सोचा भी है, जिया भी है, देखा भी है, समझा भी है, वह सब चौथे शरीर में संगृहीत है। ये तीनों शरीर सहज तो नष्ट हो जाते हैं – पांचवें शरीर में प्रविष्ट हुए व्यक्ति के तीनों शरीर नष्ट हो जाते हैं; सातवें शरीर में प्रविष्ट हुए व्यक्ति के बाकी छह शरीर नष्ट हो जाते हैं – सभी कुछ नष्ट हो जाता है – लेकिन पांचवें शरीरवाला व्यक्ति यदि चाहे तो इन तीन शरीरों के संघट को, संघात को, अंतरिक्ष में छोड़ सकता है। ये ऐसे ही अंतरिक्ष में छूट जायेंगे, जैसे अब हम अंतरिक्ष में कुछ स्टेशंस (विराम-स्थल) बना रहे हैं – वे अंतरिक्ष में यात्रा करते रहेंगे, और मैत्रेय नाम के व्यक्ति में वे प्रगट होंगे।

सूक्ष्म शरीरों का परकाया प्रवेश

तो कभी जो मैत्रेय नाम की स्थिति का कोई व्यक्ति पैदा होगा, उस स्थिति का जिसमें बुद्ध के ये तीनों शरीर प्रवेश कर सकें, तो ये तीन शरीर तब तक प्रतीक्षा करेंगे और उस व्यक्ति में प्रवेश कर जायेंगे। और उस व्यक्ति में प्रवेश करते ही उस व्यक्ति की हैसियत ठीक वैसी हो जायेगी जैसी बुद्ध की थी; क्योंकि बुद्ध के सारे अनुभव, बुद्ध के सारे भाव, बुद्ध की सारी कर्म-व्यवस्था का यह पूरा इंतजाम है।

ऐसा समझ लो कि मेरे शरीर को मैं छोड़ जा सकू इस घर में – सुरक्षित कर जा सकूं...

जैसे अभी अमरीका में एक आदमी मरा... कोई तीन साल पहले... चार साल पहले, तो वह कोई करोड़ों डालर का ट्रस्ट कर गया, और कह गया है कि मेरे शरीर को तब तक बचाया जाये जब तक साइंस (विज्ञान) इस हालत

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

में न आ जाये कि उसको पुनरुज्जीवित कर सके। तो उसके शरीर पर लाखों रुपये खर्च हो रहा है। उसको बिलकुल वैसे ही सुरक्षित रखना है। उसमें जरा भी खराबी न हो जाये। उस समय तक...

आशा है कि इस सदी के पूरे होते-होते तक शरीर को पुनरुज्जीवित करने की संभावना प्रगट हो जायेगी। तो इधर तीस-चालीस साल उसको... उसके शरीर को ऐसा सुरक्षित रखना है जैसा कि वह मरते वक्त था। उसमें जरा भी डिटोरिएशन (विनष्टिकरण) न हो जाये। तो यह शरीर बचाया जा रहा है। यह वैज्ञानिक प्रक्रिया है। और अगर इस सदी के पूरे होते-होते हम शरीर को पुनरुज्जीवित कर सकें, तो वह शरीर पुनरुज्जीवित हो जायेगा।

निश्चित ही, उस शरीर को दूसरी आत्मा उपलब्ध होगी, वही आत्मा उपलब्ध नहीं हो सकती। लेकिन, शरीर यह रहेगा, उसकी आंखें यह रहेंगी, उसके चलने का ढंग यह रहेगा, उसका रंग यह रहेगा, उसका नाक-नक्शा यह रहेगा – इस शरीर की आदतें उसके साथ रहेंगी। एक अर्थ में वह उस आदमी को रिप्रजेंट (पुनःप्रस्तुत) करेगा, इस शरीर से। और अगर वह आदमी सिर्फ भौतिक शरीर पर ही केंद्रित था, जैसा कि होना चाहिए, नहीं तो भौतिक शरीर को बचाने की इतनी आकांक्षा नहीं हो सकती। तो अगर वह शरीर भौतिक शरीर ही था, बाकी शरीरों का उसे कुछ भी पता नहीं था, तो कोई भी दूसरी आत्मा बिलकुल एक्ट (क्रिया) कर पायेगी। वह बिलकुल वही हो जायेगी और वैज्ञानिक दावा भी करेंगे कि यह वही आदमी हो गया है, इसमें कोई फर्क नहीं है। उस आदमी की सारी स्मृतियां, जो इसके भौतिक ब्रेन में संरक्षित होंगी, वे सब जग जायेंगी – वह फोटो पहचान कर बता सकेगा कि यह मेरी मां की फोटो है; वह बता सकेगा कि यह मेरे बेटे की फोटो है। ये सब मर चुके हैं तब तक, लेकिन वह फोटो पहचान लेगा। वह अपना गांव पहचान कर बता सकेगा कि यह रहा मेरा गांव जहां मैं पैदा हुआ था; और यह रहा मेरा गांव जहां मैं मरा था। और ये-ये लोग थे जब मैं मरा था तो जिंदा थे। लेकिन यह आत्मा दूसरी है। लेकिन ब्रेन के पास जो मेमोरी कंटेंट (स्मृति सामग्री) है वह दूसरा है।

स्मृति का पुनरारोपण

अभी वैज्ञानिक कहते हैं कि हम बहुत जल्दी स्मृति को ट्रांसप्लांट (पुनःरोपित) कर पायेंगे। यह संभव हो जायेगा। इसमें कठिनाई नहीं मालूम होती। अगर मैं मरूं तो मेरी अपनी एक स्मृति है... और बड़ी संपत्ति खोती है दुनिया की; क्योंकि मैं मरता हूं तो मेरी सारी स्मृति खो जाती है। अगर

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

मेरी सारी स्मृति की पूरी की पूरी टेप, पूरा यंत्र मेरे मरने के साथ बचा लिया जाये – जैसे हम आंख बचा लेते हैं अब; कल तक आंखें ट्रांसप्लाइंट नहीं होती थीं, अब हो जाती है; अब मेरी आंख से कल कोई दूसरा देख सकेगा – सदा मैं ही देखूं, अब यह बात गलत है; अब मेरी आंख से कल कोई दूसरा भी देख सकेगा। और सदा मेरे हृदय से मैं ही प्रेम करूं, यह भी गलत है; कल मेरे हृदय से कोई दूसरा भी प्रेम कर सकेगा।

अब हृदय के संबंध में बहुत वायदा नहीं किया जा सकता कि मेरा हृदय सदा तुम्हारा रहेगा। वैसा वायदा करना बहुत मुश्किल है। क्योंकि यह हृदय किसी और के भीतर से किसी और को वायदा कर सकेगा। इसमें अब कोई कठिनाई नहीं रह गयी। ठीक ऐसे ही, कल स्मृति भी ट्रांसप्लांट हो जायेगी। वह सूक्ष्म है, बहुत डेलीकेट (नाजुक) है – इसलिए देर लग रही है, और देर लगेगी। लेकिन कल मैं मरूं, तो जैसे मैं आज अपनी आंख दे जाता हूं आई बैंक (नेत्रकोष) को, ऐसे मैं मेमोरी बैंक (स्मृतिकोष) को अपनी स्मृति दे जाऊं, और कहूं कि मरने के पहले मेरी सारी स्मृति बचा ली जाये, और किसी छोटे बच्चे पर ट्रांसप्लांट कर दी जाये। तो जिस छोटे बच्चे को मेरी स्मृति दे दी जायेगी, मुझे जो बहुतकुछ जानना पड़ा, वह उस बच्चे को जानना नहीं पड़ेगा, वह जाने हुआ बड़ा होगा; वह उसकी स्मृति का हिस्सा हो जायेगा; वह उसको एब्ज़ार्व (अपशोषित) कर जायेगा। इतनी बातें वह जानेगा ही। और तब बड़ी मुश्किल हो जायेगी, क्योंकि मेरी स्मृतियां उसकी स्मृतियां हो जायेंगी। और वह कई मामलों में ठीक मेरे जैसे उत्तर देगा और कई मामलों में ठीक वह मेरी जैसी पहचान दिखलायेगा; क्योंकि उसके पास, ब्रेन (मस्तिष्क) के पास मेरा ब्रेन है। मेरा मतलब समझ रहे हो न तुम ?

तो बुद्ध ने एक दूसरी दिशा में प्रयोग किया है – और भी लोगों ने प्रयोग किये हैं... और वे वैज्ञानिक नहीं है, वे आकल्ट (परावैज्ञानिक) हैं – उसमें दूसरे, तीसरे और चौथे को संरक्षित करने की कोशिश की गयी है। बुद्ध तो विलीन हो गये – वह जो आत्मा थी, वह जो चेतना थी, जो इन शरीरों के भीतर जीती थी, वह तो खो गयी सातवें शरीर से, लेकिन खोने के पहले वह इंतजाम कर गयी है कि ये तीन शरीर न मरें – वह इनको संकल्प की एक गति दे गयी है।

समझ लो कि मैं एक पत्थर फेंकूं जोर से – इतने जोर से फेंकूं कि वह पत्थर पचास मील जा सके। मैं मर जाऊं, लेकिन इससे पत्थर नहीं गिर जायेगा। जो ताकत मैंने उसको दी है, वह पचास मील तक चलेगी। पत्थर यह नहीं कह सकता कि वह आदमी मर गया, जिसने मुझे ताकत दी थी, तो

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Madhuban Trust

अब मैं कैसे चलूं ! पत्थर को जो ताकत दी गयी थी पचास मील चलने की, वह पचास मील चलेगा । अब मेरे मरने-जीने से कोई संबंध नहीं, मेरी ताकत उस पत्थर को लग गयी, अब वह काम करेगा । मेरा मतलब समझे न ?

कृष्णमूर्ति में बुद्ध के अवतरण का असफल प्रयोग

बुद्ध जो ताकत दे गये हैं उन तीन शरीरों को जीवित रहने की, वे तीन शरीर जियेंगे । और, वह समय भी बता गये हैं कि वह कितनी देर तक... यानी वह वक्त करीब है जब मैत्रेय को जन्म लेना चाहिए । कृष्णमूर्ति पर वही प्रयोग किया गया था कि इनकी तैयारी की जाये, वे तीन शरीर इनको मिल जायें । कृष्णमूर्ति के एक बड़े भाई थे, नित्यानंद । पहले उन पर भी वह प्रयोग किया गया, लेकिन नित्यानंद की मृत्यु हो गयी । वह मृत्यु इसी में हुई । क्योंकि यह बहुत अनूठा प्रयोग था और इस प्रयोग को आत्मसात करना एकदम आसान बात नहीं थी – कोशिश की गयी कि नित्यानंद के तीन शरीर खुद के तो अलग हो जायें और मैत्रेय के तीन शरीर उनमें प्रवेश कर जायें । नित्यानंद तो मर गये, फिर कृष्णमूर्ति पर भी वही कोशिश चली । वह भी कोशिश यही थी कि इनके तीन शरीर हटा दिये जायें और रिप्लेस (बदल) कर दिये जायें । वह भी नहीं हो सका । फिर और एक-दो लोगों पर – जॉर्ज अरंडेल पर भी वही कोशिश की गयी, क्योंकि कुछ लोगों को इस बात का... जैसे ब्लाह्टस्की इस सदी में ऑकल्ट (पराविज्ञान) के संबंध में जाननेवाली शायद सबसे गहरी समझदार औरत थी । उसके बाद एनीबेसेंट के पास बहुत समझ थी, लेडबीटर के पास बहुत समझ थी – इन लोगों के पास कुछ समझ थी जो इस सदी में बहुत कम लोगों के पास है ।

इनकी बड़ी चेष्टा यह थी कि वह तीन शरीरों को जो शक्ति दी गयी थी उसके क्षीण होने का समय आ रहा है । अगर मैत्रेय जन्म नहीं लेता, तो वह शरीर बिखर सकते हैं अब । उनको इतने जोर से फेंका गया था वह समय पूरा हो जायेगा, और किसी को अब तैयार होना चाहिए कि वह उन तीन शरीरों को आत्मसात कर ले । जो व्यक्ति भी उनको, तीनों को आत्मसात कर लेगा, वह ठीक एक अर्थ में बुद्ध का पुनर्जन्म होगा – एक अर्थ में... मेरा मतलब समझे ! बुद्ध की आत्मा नहीं लौटेगी, इस व्यक्ति की आत्मा बुद्ध के शरीर ग्रहण करके बुद्ध का काम करने लगेगी – एकदम बुद्ध के काम में संलग्न...

इसलिए हर कोई व्यक्ति नहीं हो सकता इस स्थिति में । जो होगा भी, वह भी करीब-करीब बुद्ध के पास पहुंचनेवाली चेतना होनी चाहिए, तभी उन

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

तीन शरीरों को आत्मसात कर पायेगी, नहीं तो मर जायेगी। तो जो असफल हुआ सारा का सारा मामला, वह इसीलिए असफल हुआ कि उसमें बहुत कठिनाई है। लेकिन फिर भी, अभी भी चेष्टा चलती है। अभी भी कुछ छोटे से इज़ोटेरिक सर्कल (गुह्य विद्या-मंडल) इसकी कोशिश में लगे हुए हैं कि किसी बच्चे को वे तीन शरीर मिल जायें। लेकिन अब उतना व्यापक प्रचार नहीं चलता, प्रचार से नुकसान हुआ।

कृष्णमूर्ति के साथ संभावना थी कि शायद वे तीन शरीर कृष्णमूर्ति में प्रवेश कर जाते। उनके पास उतनी पात्रता थी। लेकिन इतना व्यापक प्रचार किया गया। प्रचार शुभ दृष्टि से ही किया गया था कि जब बुद्ध का आगमन हो तो वे फिर से रिकग्नाइज़ हो सकें (पहचाने जा सकें)। और यह प्रचार इसलिए भी किया गया था कि बहुत से लोग हैं जो बुद्ध के वक्त में जीवित थे, उनकी स्मृति जगायी जा सके तो वे पहचान सकें कि यह आदमी वही है कि नहीं है। इस ध्यान से प्रचार किया गया। लेकिन वह प्रचार घातक सिद्ध हुआ। और उस प्रचार ने कृष्णमूर्ति के मन में एक रिएक्शन और प्रतिक्रिया को जन्म दे दिया। वह संकोची और छुई-मुई व्यक्तित्व हैं। ऐसा सामने मंच पर होने में उनको कठिनाई पड़ गयी। अगर वह चुपचाप और किसी एकांत स्थान में यह प्रयोग किया गया होता और किसी को न बताया गया होता, जब तक कि घटना न घट जाती, तो शायद संभव था कि यह घटना घट जाती। वह नहीं घट पायी। वह बात चूक गयी। कृष्णमूर्ति ने अपने शरीर छोड़ने से इनकार कर दिया और इसलिए दूसरे शरीरों के लिए जगह नहीं बन सकी। इसलिए वह घटना नहीं हो सकी। और इसलिए बड़ी भारी असफलता इस सदी में आकल्ट साइंस (गुह्यविद्या) को मिली। इतना बड़ा एक्सपेरीमेंट (प्रयोग) भी कभी नहीं किया गया था – तिब्बत को छोड़कर कहीं भी नहीं किया गया था। तिब्बत में बहुत दिनों से उस प्रयोग को करते रहे हैं, और बहुत सी आत्माएं वापस दूसरे शरीरों से काम करती रही हैं।

तो मेरी बात तुम्हारे ख्याल में आ गयी ? उसमें विरोध नहीं है। और मेरी बात में कहीं भी विरोध दिखे तो समझना कि विरोध होगा नहीं। हां, कुछ और रास्ते से बात होगी, इसलिए विरोध दिखाई पड़ सकता है।

बंबई, रात्रि, दिनांक 12 जुलाई, 1970.

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

Digitized by Madhuban Trust

डायमंड पॉकेट बुक्स में

ओशो का आध्यात्मिक चिंतन

भारत : एक सनातन यात्रा

ओशो

हाल ही में देश भर तथा विश्व भर में जहां–जहां भारतीय बसे हुए हैं, स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती मनायी गयी। बहुत उत्सवमय कार्यक्रम हुए तथा वर्ष भर होने वाले कार्यक्रमों का एक सिलसिला शुरू हुआ। इस अनूठे अवसर पर डायमंड पॉकेट बुक्स ने भारत तथा विश्वभर में बसे भारतीयों के लिए एक ऐसा उपहार प्रस्तुत किया जो सर्वथा अपूर्व है। इस उपहार का नाम है–'भारत : एक सनातन यात्रा।'

ओशो की यह पुस्तक सुप्रसिद्ध कवयित्री अमृता प्रीतम की भूमिका के साथ अपना परिचय देती है। अमृता जी कहती हैं : 'चेतना की पहली किरण के साथ इंसान की आंखों में जो सपना बस गया, ओशो उस सपने का नामकरण करते हैं–भारत और इसीलिए भारत को भू–खंड की सीमा से मुक्त कर देते हैं। उनके लफजों में–'भारत कोई भू–खंड नहीं है, न राजनीतिक इकाई, न ऐतिहासिक तथ्यों का कोई टुकड़ा, भारत एक प्यास है–सत्य को पा लेने की। जमीन पर कोई कहीं भी पैदा हो, किसी देश में, किसी सदी में, अतीत में या भविष्य में, अगर कोई अंतर की खोज है, किसी की भी, वह भारत का निवासी है।'

भारत एक अनूठी सम्पदा (प्रवचन संग्रह)

ओशो

प्रस्तुत पुस्तक ओशो द्वारा विभिन्न प्रश्नोत्तर प्रवचनमालाओं में उपनिषद–सूत्रों, संस्कृत–सुभाषितों एवं वेद व ऋषि वाक्यों पर दिए गए प्रश्नोत्तर प्रवचनों का संकलन है। भक्तों के प्रश्नों का गूढ़ विश्लेषण मिलता है इस पुस्तक में बुद्ध, महावीर, जीसस क्राइस्ट, मुहम्मद साहब इत्यादि की नीतियों और समाज पर उनके प्रभाव का विशद् विवेचन प्रवाहमय भाषा में किया है ओशो ने।

क्या मनुष्य एक जटिल जीव है अथवा रहस्यपूर्ण? एक प्रश्नकर्त्ता के इस प्रश्न के समाधान के लिए ओशो ने अंग्रेजी के महाकवि टेनीसन के साथ घटी एक घटना सुनाई : एक सुबह घूमते हुए टेनीसन को पत्थर की दीवार पर उगा घास का एक पौधा नज़र आया। पौधे में फूल भी लगा था। टेनीसन यह देख ठिठक गया और सोचने लगा–'काश मैं इस घास के फूल को पूरा जान लूं।' लेकिन ऐसा संभव नहीं है। जब घास को पूरा नहीं जाना जा सकता तो मनुष्य को कैसे जाना जा सकता है?

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Deoband

Digitized by Madhuban Trust

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband

ओशो अद्वैत का माधुर्य हैं, समग्रता का सौंदर्य हैं; जगत के समस्त विरोधाभासों का काव्य हैं। उनका होना, न होने को अपने में समाहित किये हुए है। वे शून्य हैं और पूर्ण भी। वे स्वयं संदेश हैं- अनादि के, अनंत के, सनातन के, भगवत्ता के।

उनकी प्रत्येक भाव-भंगिमा बड़ी अनूठी और मधुरिमा-युक्त है। उनका चलना होता है तो जैसे स्वयं नृत्य झंकृत हो रहा है। उनका बैठना होता है तो मानो अस्तित्व और अनस्तित्व मिलकर सूक्ष्म संगीत का सुमधुर ताना-बाना बुन रहे हैं। उनका उठना होता है तो जैसे अनाहत की आहट हो रही है। उनका मुखर होना होता है तो जैसे अमृत-वाणी का प्रबल प्रवाह चला आ रहा है। वे पलकें बंद करते हैं, तो मानो अनंत अस्तित्व की लीला में समा रहे हैं। वे पलकें खोलते हैं तो जैसे सागर लहरों की क्रीड़ा का निनाद सुन रहा है। वे चले जाते हैं तो जैसे सब ठहर जाता है, सहम जाता है।

उनके आलोक की रश्मियां हमारे अंधकार के साथ आंख-मिचौली खेलती हैं। हमारा अंधकार उनके आलोक से ही उनको देख पाता है क्षण भर को और तब वह क्षण भी विराट हो जाता है। हमारी वेदना उन तक जाती है तो वे अपनी संवेदना का संस्पर्श देकर लौटा देते हैं। हमारी उदासी उन तक जाती है तो वे अपनी संवेदना का संस्पर्श देकर लौटा देते हैं। हमारी उदासी उन तक जाती है तो आनंद की गहराई लेकर लौट आती है। उनके आशीष अहर्निश बरस रहे हैं। हमारे प्राणों में जब भी अभीप्सा की आग जलती है और हम समर्पित होते हैं तो उनके मेघ खिंचे आते हैं, हम पर बरस जाते हैं।

उनकी करुणा अपार है!

डायमंड बुक्स
www.diamondpublication.com

ओशो

जिन खोजा तिन पाइयां

ISBN 81-288-0393-X
9788128803932
A.H.W. Sameer Series
Rs. 50/-

CC-0. Public Domain. Vipin Kumar Collection, Deoband